जयंती विशेषांक

विचार दृष्टि

वर्ष : 5 | अंक : 17 | अक्टूबर-दिसंबर 2003 | 15 रुपये

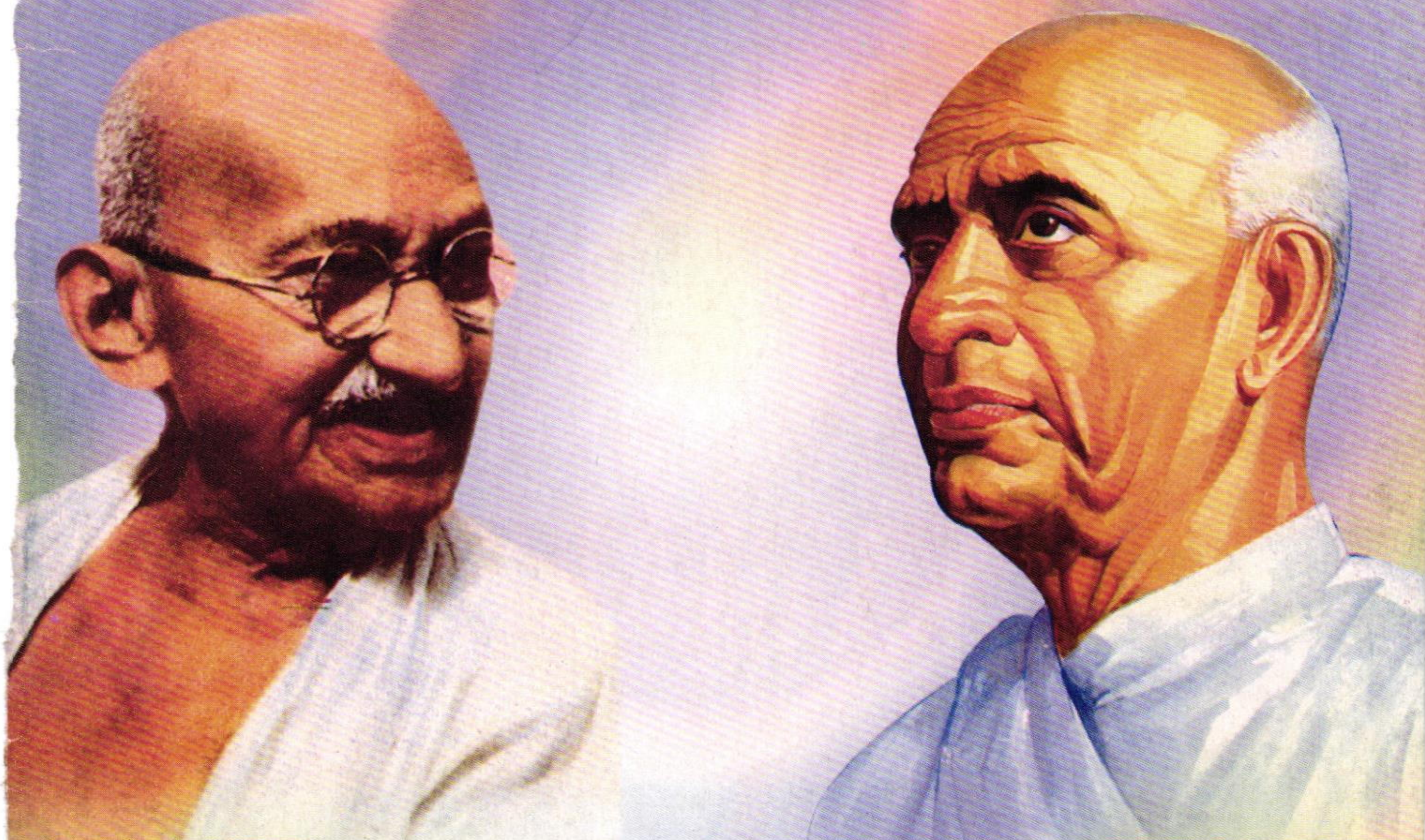

गांधी और पटेल आज पहले से ज्यादा प्रासंगिक

जे.पी. की कालजयी प्रासंगिकता

NALANDA SCAN CENTRE

(Unit of Nalanda Hospital & Scan Research Centre Pvt. Ltd.)

Facilities Available :

- **M.R.I.**
- **C.T. Scan.**

Coloured Doppler Whole Body 3D-4D.

Real Time Ultra Sound.-X Ray

B.M.D. (Bone Densitometer)

Doctor's Colony, Kankarbagh
Patna-20

विचार दृष्टि

(राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी)

वर्ष-5 अक्टू०-दिसंबर, 2003 अंक-17

संपादक व प्रकाशक:
सिद्धेश्वर

प्रबंध संपादक : सुधीर रंजन
उप संपादक : धनंजय श्रोत्रिय
सहा.संपादक : मनोज कुमार
संपादन सहायक : अंजलि
लखनऊ प्रतिनिधि : प्रो. पारसनाथ श्रीवास्तव
साज-सज्जा: दिलीप सिन्हा एवं सुधांशु
शब्द संयोजन : सोलूसंस प्वायंट

प्रकाशकीय कार्यालय:
'दृष्टि', 6 विचार विहार, यू०-207
शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92
दूरभाष: (011) 22530652
फैक्स: (011)22530652
E-mail: vichardrishti@hotmail.com

पटना कार्यालय:
'बसेरा', पुरन्दरपुर, पटना-1
दूरभाष: 0612-2228519

ब्यूरो प्रमुख
मुम्बई: वीरेन्द्र याज्ञिक ☎ 28897962
कोलकाता: जितेन्द्रधीर ☎ 24692624
चेन्नई: डॉ० मधु धवन ☎26262778
तिरूवनंतपुरम:डॉ०रति सक्सेना ☎2446243
बैंगलूर:पी०एस०चन्द्रशेखर ☎26568867
हैदराबाद: डॉ० ऋषभदेव शर्मा
जयपुर: डॉ० सत्येंद्र चतुर्वेदी☎ 2225676
अहमदाबाद: वीरेंद्र सिंह ठाकुर☎22870167

मुद्रक: प्रोलिफिक इनकारपोरेटेड
एक्स-47, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया,फेज-2, नई दिल्ली-20

मुख्य वितरक :
कुमार बुक सेन्टर, ए०-67, क्रिश्चन कॉलोनी, पटेल चेस्ट, नई दिल्ली
दूरभाष: 27666084 (P.P.)

मूल्य:	एक प्रति 15 रुपये
द्विवार्षिक:	100 रुपये
आजीवन सदस्य:	1000रुपये

विदेश में:
एक प्रति:US $3, द्विवार्षिक:US $20,
आजीवन: US $250

(पत्रिका-परिवार के सभी सदस्य अवैतनिक हैं)

रचना और रचनाकार

पाठकीय पन्ना /2
संपादकीय /5

विचार प्रवाह :
दलित-साहित्य में विद्रोह के संघर्षशील स्वर
प्रो. (डॉ.) रामदेव प्रसाद /7

साहित्य :
भोगी बना जोगड़ा-कहानी /11
कृष्ण कुमार राय
छोरी कौ गाम-कहानी
डॉ. धर्मेन्द्र नाथ अमन /14

काव्य-कुंज :
नचिकेता, डॉ. देवेन्द्र आर्य, जगन्नाथ 'विश्व'
राजभवन सिंह, सतीश प्रसाद सिन्हा /16

दृष्टि :
क्या कामायनी का भाषा संशोधान....? -
प्रो. (डॉ.) दीनानाथ 'शरण' /19

शख्सियत
अद्वितीय राष्ट्र निर्माता-सरदार पटेल
बाबू गुप्तनाथ सिंह /26
लोकनायक जयप्रकाश नारायण-
शैलजा सक्सेना /29

भेंट वार्ता :
दुष्यंत से आगे हम नहीं निकल
पा रहे हैं ....-ग़ज़लकार लक्ष्मण /31

समीक्षा :
अमीन साहेब : जमीन की लड़ाई बनाम
स्वार्थों की लड़ाई-दिनेश पंकज /34
'गीत तुम्हारे नाम' से 'मन वृंदावन'
तक-राज किशोर राजन /36

काल समीक्षा :
अंतहीन अंधकार के आसार-
राम संजीवन शर्मा /37

राजनीतिक नजरिया :
ऊ.प्र. की तिकड़मी राजनीती /39

सम्मान :
राजेन्द्र शाह को ज्ञानपीठ /40

व्यंग्य :
रंगे सियारों का राष्ट्रवाद-अग्निवाण /42

समाज:
मनस् क्रांति ही परिवर्तन की बुनियाद
-मुनि लोकप्रकाश 'लोकेश' /44

कला-संस्कृति :
हैदराबाद की चिट्ठी-
चन्द्र मौलेश्वर प्रसाद /46

गांव-जवार
दाद देनी होगी चेन्नै के
ग्रामवासियों को /49

गतिविधियां :
समान नागरिक संहिता पर संगोष्ठी /50

साहित्य समाचार :
संघर्ष की चेतना जगाएं साहित्यकार /53

न्याय-जगत
सरकारी कर्मचारियों के
हड़ताल पर रोक /54

श्रद्धांजलि :
साहित्य की दुनिया में अंधेरा /58

साभार-स्वीकार /59

महापुरुषों की जयंती   सम्मान   भेंटवार्ता   श्रद्धांजलि

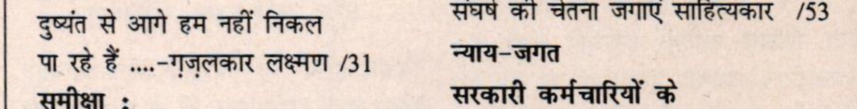

पत्रिका-परामर्शी

❑ पद्मश्री डॉ.श्यामसिंह'शशि' ❑प्रो .रामबुझावन सिंह ❑श्री गिरीशचंद्र श्रीवास्तव, ❑श्री जियालाल आर्य ❑डॉ० बालशौरि रेड्डी ❑डॉ० सच्चिदानंद सिंह 'साथी' ❑श्री जे.एन.पी.सिन्हा ❑श्री बाँकेनन्दन प्रसाद सिन्हा ❑प्रो० धर्मेन्द्र नाथ 'अमन'

रचनाकारों के विचारों से पत्रिका-परिवार का सहमत होना आवश्यक नहीं।

पत्रिका द्वारा हिंदी सेवा

'विचार दृष्टि' का जुलाई-सितंबर 2003 अंक देखकर प्रसन्नता हुई। पत्रिका का प्रकाशन प्रशंसनीय है। पत्रिका में विभिन्न विषयों पर सामग्री और आलेख समाहित हैं तथा पत्रिका आकर्षक है। आप इस पत्रिका के माध्यम से भी हिंदी की सेवा कर रहे हैं-ऐसा मैं मानता हूँ।

कवि गोपीवल्लभ पर आपने कविता, आलेख और श्रद्धांजलि देकर निश्चित रूप से सराहनीय कार्य किया है। दो-तीन वर्ष पहले उनके जीवन-काल में भी आपने उन्हें जो सम्मान दिया, उसकी भी स्मृति मुझे है। आज की संस्कृति में आप कविता और कवि के लिए जो आदर-भाव रखते हैं, वह महत्वपूर्ण है और वह हमारे लिए किसी शुभाशा का संकेत देता है। पत्रिका के आवरण पर गोपीवल्लभ जी का जीवंत चित्र हमें भावुक कर देता है।

-कमला प्रसाद, पटना

निर्भीक अभिव्यक्ति से संपादकीय पठनीय

जुलाई-सितम्बर 2003 अंक इस बार कुछ जल्दी ही मिल गया, आभारी हूं। इधर पत्रिका के रूप-रंग और कलेवर में निरंतर निखार आता देखकर हार्दिक प्रसन्नता होती है। उच्चकोटि की सामग्री प्रस्तुत की जा रही है। सदैव की भांति संपादकीय में आपकी निर्भीक अभिव्यक्ति वास्तव में पठनीय होती है।

-कृष्ण कुमार राय, वाराणसी

सत्ताभोगी बेनकाब

"विचार दृष्टि" का जुलाई-सिंतबर 03 अंक मिला। मुख्य आवरण पृष्ठ पर मुद्रित स्व. गोपीवल्लभ जी का चित्र देखकर हृदय पीड़ा से आप्लावित हो गया। कैसा कृतघ्न समाज और आज की राजनीति है जो दधीचि के समान त्याग करनेवाले कवि-गीतकार को बचाने के लिए कुछ न कर सका। जे.पी. के शिष्यों का मुँह क्यों नहीं खुला? आज वे ही तो दिल्ली से पटना तक सत्तासीन हैं। गोपीवल्लभ जी की मौत ने इन सत्ताभोगियों को बेनकाब कर दिया है। लेकिन पटना के साहित्यकारों, बुद्धिजीवियों को क्या हो गया था? वे क्यों नहीं सार्त्र और रसेल के समान गीतकार की प्राण रक्षा के लिए पटना की सड़कों पर उतर पड़े? इसका आगे आकर कौन जवाब देगा? आपका संपादकीय विचारोत्तेजक है और बेचैन करता है। अंक की सभी कविताएं स्तरीय और संवेदना को समृद्ध करती हैं। अन्य सामग्री भी पठनीय है। यह अंक संपूर्ण पत्रिका का उदाहरण बन गया है।

"राष्ट्रीय अधिवेशन" पर केंद्रित 'विचार दृष्टि' का जन.-मार्च, 03 अंक अपने परम्परागत अंकों की तुलना में इसलिए अतिरिक्त महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसमें देश के महत्वपूर्ण एवं ज्वलंत प्रश्नों पर गंभीर पठनीय सामग्री उपस्थित है! यह आपके राष्ट्रीय सरोकारों की प्रतिबद्धता की ओर संकेत करता है। बड़ी चिंता का विषय है कि आज की उत्सवधर्मिता में विचारधर्मिता लगभग खो ही गई है। आज हिंदी में स्थिति यह बन गई है कि कलम पकड़ी नहीं कि पुरस्कृत होने का जुगाड़ होने लगता है। इसलिए साहित्य में बौने तो दीख रहे हैं-प्रेमचंद, निराला, प्रसाद, पंत, महादेवी, रेणु, बेनीपुरी आदि नहीं। ऐसी प्रवृति पर अंकुश लगना चाहिए। आपका आलेख भी विचारोत्तेजक है। अंक समग्रता में उपयोगी है।

डॉ. लखन लाल सिंह 'आरोही', बाँका

एक परिपक्व पत्रिका

'विचार दृष्टि' का नया अंक मिला है। बहुत झटका लगा। गोपीवल्लभ जी के चले जाने का समाचार इसी अंक में मिला। उनकी रूग्णता के विषय में तो पहले अंकों में लिखा ही था, वे यों चलें जाएंगे यह अभी नहीं सोचा था। आपने तत्परता से उनपर श्रद्धाजंलि लेख छाप कर बहुत सराहणीय कार्य किया है। आपकी यही सहृदयता मुझे प्रभावित करती रही है।

'विचार दृष्टि' अब एक परिपक्व पत्रिका बन चुकी है। इसके लेख और इसकी रपटें स्तरीय एवं प्रासंगिक हैं। अंक की सामग्री में गंभीरता के साथ-साथ विविधता भी पर्याप्त है। आपकी लगन का ही यह परिणाम है। मैं 'विचार दृष्टि' के उज्ज्वलतर भविष्य की कामना करता हूं।

-डॉ. राजेन्द्र गौतम, दिल्ली विश्वविद्यालय

सामाजिक परिवर्तन की ध्वजाधारक

आप द्वारा सुसंपादित पत्रिका 'विचार दृष्टि' का अंक प्राप्त हुआ। सामाजिक परिवर्तन की ध्वजाधारक रूप में पत्रिका के लेख अंतर्मन को छुये बिना नहीं रहते। पत्रिका के सफल संपादन एवं प्रकाशन हेतु बहुत बहुत बधाई।

-पटेल जे.पी. कनौजिया, कानपुर

गोपी हिंदी काव्य जगत के सर्वजनप्रिय कवि

मेरे लिए आपकी सारस्वत कृपा का प्रतीक 'विचार दृष्टि' का जुला.-सित., 2003 अंक मिला। आभारनत हूं।

पुण्य श्लोक सुहृदय कवि गोपीवल्लभ का प्रशान्त सौम्य चित्र मुखपृष्ठ पर अंकित देखकर उनके साथ अतीत संपर्क की स्मृतियां मेरे मानस-पटल पर देर तक उभरती मिटती रहीं। सचमुच, वह हिंदी काव्य-जगत के सर्वजनप्रिय कवि थे। उनकी द्वितीयता नहीं है।

विश्व हिंदी सम्मेलन की विस्तृत रपट 'विचार दृष्टि' में ही पहली बार मुझे पढ़ने को मिली। विश्व हिंदी सम्मेलन की अफरा-तफरी सहज नहीं है। मुझे दिल्ली के तृतीय विश्व हिंदी सम्मलेन में सम्मिलित होने का सौभाग्य मिला था। लगता था, सम्मेलन में नहीं, सोनपुर मेले में आ गया हूं। 'बुफे सिस्टम' के भोजन में तो छीनाझपटी मच जाती थी।

'विचार दृष्टि' के इस अंक के पृ. 34 पर 'परिवर्तन' में 'युगांतकारी' विशेषण प्रयुक्त हुआ है। वस्तुत: 'युगांतरकारी' प्रयोग होना चाहिए। हिंदी-लेखन में आज 'युगांतकारी' अप-प्रयोग धड़ल्ले से चल रहा है। 'युगांत' का अर्थ प्रलय होता है। किसी प्रचलित परम्परा का विच्छिन्न हो जाना भी इसका दूसरा अर्थ है। अभीष्ट अर्थ में 'युगांतर' ही सही है। 'युगान्तर उपस्थित करना' मुहावरा भी है, जिसका अर्थ है-किसी पुरानी रीति या प्रथा की जगह नई रीति या प्रथा चलाना। इस दृष्टि में युगांतरकारी परिवर्तन प्रयोग ही सही होगा।

-डॉ. श्रीरंजन सूरिदेव, पटना

सूरीनाम में हिंदी सम्मेलन

विचार दृष्टि के दो अंक 15-16 एक साथ मिले। नया रूप-रंग काफी आकर्षक है। सबसे अधिक प्रसन्नता हुई सोलहवें अंक के मुखपृष्ठ पर स्वर्गीय गोपीवल्लभ जी का चित्र और

उसके दोनों ओर पुष्पगुच्छ देखकर। मेरे जानते किसी दूसरी पत्रिका ने गोपीवल्लभ जी के निधन को इतनी प्रमुखता के साथ नहीं छापा। किसी भी पत्रिका में अब किसी जीवित या मृत साहित्यकार का चित्र नहीं दिखता। हिंदी पत्रकारिता साहित्य से बहुत दूर चली गयी है। डॉ. शिवचन्द्र प्रताप जी की कविता भी बहुत दिनों के बाद देखने को मिली और आदरणीय नवल किशोर गौड़ जी की समीक्षा भी। गौड़जी अभी भी अध्ययन और लेखन में रमे हुए हैं, यह नई पीढ़ी के लिए बड़ी प्रेरणा है। "भारतीय संस्कृति का बिगड़ता स्वरूप" पर आपकी दृष्टि वही है, जो हमलोगों की है। डॉ. रमा शंकर श्रीवास्तव का व्यंग्य लेख आनन्दायक है।

आपने इस अंक में "विचार कार्यालय, दिल्ली" के माध्यम से "विश्व हिंदी सम्मेलन का सातवां सफर" नामक जो एक विस्तृत रपट छापी है, वह बहुत प्रमाणिक नहीं है। जहां-तहां की सुनी-सुनाई बातों को जोड़-तोड़कर कुछ इस ढंग से प्रस्तुत किया गया है, जिससे वहां उपस्थित कई प्रतिनिधियों को नाराजगी होगी और जो नहीं थे, उन्हें पूरा सच पता ही नहीं चलेगा। चूंकि मैं विश्व हिंदी सम्मेलन की समन्वय समिति का एक सदस्य था, अत: जनवरी 2003 से 9 जून 2003 के बीच आयोजन के विभिन्न पहलुओं से जुड़ा रहा और कुछ तथ्यों को सामने रखने की स्थिति में हूँ। इसमें "विचार-विमर्श के लिए प्रस्तुत आलेख के अंतर्गत 19 विषयों का उल्लेख करते हुए कहा गया है कि सम्मेलन में निम्नलिखित विषयों पर आलेख प्रस्तुत हुए और उनपर विचार-विमर्श हुआ-यह सत्य नहीं है। वहां की संरचना इस प्रकार थी कि 5 जून को विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन नहीं हुआ किंतु राजकीय स्तर पर वहां अप्रवासी भारतीयों के प्रथम पदार्पण की जो ऐतिहासिक स्मृति समारोह होता है, वह हुआ और भारतीय शिष्टमंडल के जो सदस्य 3 जून को वहां पहुंच गये थे, उन्होंने श्री दिग्विजय सिंह के नेतृत्व में उस ऐतिहासिक समारोह में भाग लिया। अपने पूर्वजों की एक प्रतिमा उन्होंने समुद्र तट के निकट स्थापित की है, गठरी-मोटरी लिए हुए एक भारतीय मजदूर और एक मजदूरीन स्त्री, इनको वे "माई-बाप" कहते हैं। उस समारोह में मैंने एक भोजपुरी कविता भी पढ़ी थी-"माई-बाप के करीं प्रणाम, जय भारत जय सूरीनाम", जो सम्मेलन समाचार समग्र संपादक-अशोक चक्रधर में प्रकाशित भी है और सूरीनाम के राष्ट्रपति ने भी उसकी प्रशंसा की थी। हमारे नेता विदेश राज्य मंत्री श्री दिग्विजय सिंह का भी अत्यंत प्रभावशाली भाषण हुआ और भारतीय संसद के 8 प्रतिनिधि भी उसमें उपस्थित थे। उस समारोह का उल्लेख नहीं होना सूरीनामवासियों की भावनाओं के साथ खिलवाड़ है।

6 जून को उद्घाटन-सत्र में कोई आलेख प्रस्तुत नहीं हुआ, कोई विचार-विमर्श नहीं हुआ। कुल मिलाकर 9 सत्र हुए, जिसमें एक संयोजक होता था, एक अध्यक्ष और एक विद्वान् बीज व्याख्यान प्रस्तुत करता था-कभी लिखित, कभी मौखिक सत्रों के विषय इस प्रकार थे: 1. विश्व हिंदी: चुनौतियां और समाधान 2. हिंदी की बोलियां: सर्जनात्मक लेखन 3. हिंदी पत्रकारिता एवं नई शताब्दी की चुनौतियां 4. हिंदी और सूचना प्रौद्योगिकी 5. विदेशों में हिंदी शिक्षण 6. भारतीय संस्कृति और हिंदी 7. हिंदी अनुवाद की समस्याएं। आपके कार्यालय ने जिन 19 विषयों की सूची दी है, उनपर प्रस्तुत आलेख स्मारिका में छपे हैं। वे सम्मेलन में प्रस्तुत नहीं किये गये और उनपर कोई विचार-विमर्श नहीं हुआ। इसी शीर्षक के अंतर्गत एक पंक्ति में कवि-सम्मेलन की चर्चा हुई है, जिसमें न तो अध्यक्ष का नाम है और न किसी प्रतिभागी कवि का। उद्घाटन सत्र शीर्षक के अंतर्गत कहा गया है कि उद्घाटन 5 जून को हुआ, पर सत्य यह है कि उद्घाटन 6 जून को हुआ। इसमें सूरीनाम के राष्ट्रपति आर. आर. वेनेत्शियान, विदेश राज्य मंत्री श्री दिग्विजय सिंह एवं सम्मेलन के अध्यक्ष प्रो. ब्रिस्की(पोलैंड) के भाषण हुए। आपकी रिर्पोट में कहा गया है कि उसमें इंग्लैंड, अमेरिका और चीन के विद्वानों ने अपने विचार प्रकट किये, यह बिल्कुल गलत है। अन्य 7 सत्रों में केवल 4 सत्रों की ही थोड़ी-बहुत चर्चा हुई है और वह भी मूलत: निषेधात्मक। "विश्व का आर्थिक परिदृश्य और हिंदी " सत्र के रिर्पोट में बताया गया है कि भोपाल के डॉ. रवि भूषण का भाषण हुआ, वास्तविकता यह है कि रवि भूषण राँची के हैं, भोपाल के नहीं। हिंदी सम्मेलन को 'हिन्दू सम्मेलन' में बदलने का प्रयास के अंतर्गत बिहार के प्रतिनिधियों में तीन व्यक्तियों के द्वारा विरोध की बात की गयी है, किंतु उनका जोरदार विरोध सूरीनाम के जिन प्रतिनिधियों के द्वारा हुआ, उनकी कोई चर्चा नहीं है। सूरीनाम के कई स्त्री-पुरूषों ने तो यहां तक कह दिया था कि "हमारे लिए भारतीय संस्कृति का अर्थ हिंदू संस्कृति ही है। हमारे पूर्वज रामचरित मानस और हनुमान चालिसा लेकर आये थे, मार्क्स का 'दास कैपिटल' या 'कम्युनिस्ट मेनोफेस्टो' लेकर नहीं। आपलोग यदि हिंदू संस्कृति का विरोध करेंगे तो यहीं चीर कर समुद्र में फेंक देंगे।" इसके बाद विरोधी भाग खड़े हुए और सम्मेलन में जय श्रीराम के नारे गूंजने लगे तथा सामूहिक भजन-कीर्तन होने लगा।

"कुछ खट्टे कुछ मीठे" शीर्षक के अंतर्गत केवल खट्टे अनुभव ही वर्णित हुए हैं किसी भी मीठे अनुभव का कोई उल्लेख नहीं है। 'छह प्रस्ताव पारित' के अंतर्गत 'विश्व हिंदी दिवस' मनाने के प्रस्ताव का कोई उल्लेख नहीं है। यह प्रस्ताव मैंने ही रखा था और प्रो. भगवान सिंह ने उसका समर्थन किया था। जहां तक सम्मानित होनेवाले हिंदी विद्वानों का प्रश्न है, सम्मेलन द्वारा सम्मानित किसी भी विदेशी विद्वान के नाम का उल्लेख नहीं है। सूचनार्थ निवेदन है कि सम्मेलन में मॉरिशस के श्री रामदेव धुरंधर, फिजी के प्रो. सुब्रममी, अमेरिका के प्रो. एनी मौंट, सूरीनाम के डॉ. जीत नारायण, ताजाकिस्तान के प्रो. रजाबोव हबीबुल्लो, हॉलेंड के डॉ. दानुता स्ताशिक, इंग्लैंड के डॉ. पीटर बारानिकोव को भी सम्मानित किया गया था, उनका उल्लेख भी पाठकों के ज्ञानवर्द्धन के लिए होना चाहिए था। कुल मिलाजुलाकर आपकी रिर्पोट के माध्यम से विश्व हिंदी सम्मेलन की विकृत छवि ही उभर कर सामने आती है। यह हिंदी का दुर्भाग्य है कि कोई भी सम्मेलन, आयोजन या पुरस्कार समारोह दो-चार लोगों के द्वारा विवादास्पद बना दिया जाता है और सारी प्रगति और उपलब्धियों पर पानी फेर दिया जाता है। आपकी पत्रिका का नाम है-"विचार दृष्टि", अत: स्वाभाविक अपेक्षा है कि इसमें सही विचार भी आवें और सही दृष्टि भी प्रकट हो।

-पद्मश्री डॉ. शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव, पटना

स्तरीय वैचारिकता से समृद्ध

'विचार दृष्टि' का जुलाई-सितम्बर अंक मिला। यह अंक भी अपने पूर्व अंक की तरह ही स्तरीय वैचारिकता से समृद्ध है। अपने संपादकीय में आपने आज के दिग्भ्रमित राजनैतिक परिवेश का बड़ी बेबाकी से खुलासा किया है। जिस स्पष्ट ढंग से आपने हमारी आज की समस्याओं का आकलन किया है, उसके लिए आप साधुवाद के पात्र हैं। गीतकार गोपीवल्लभ जी के प्रति आपकी श्रद्धांजलि एवं संपूर्ण कविता है अपने-आप में उसके लिए भी मेरा हार्दिक अभिनंदन स्वीकारें। 'भारतीय संस्कृति का बिगड़ता स्वरूप' शीर्षक आपके आलेख में कुछ नए ढंग से सोचने के लिए आयाम मिले हैं। जब पत्रिका आई, उन्हीं दिनों मैं 'संस्कृति में बदलते आयाम संदर्भ वैश्वीकरन के आलेखन की प्रक्रिया में था। आपके लेख ने कुछ नए बिंदु सुझाए हैं। जिन्हें शामिल करने से मेरे आलेख को समग्रता मिलने की गुंजाइश है। व्यंग्य-रचनाए हिंदी प्रेमी-शो एवं 'डोन्ट टच माई बॉडी मोहन रसिया' इस अंक के गंभीर चिंतन को नए आयाम देती है। भाई शाहिद जमील और रमाशंकर श्रीवास्तव दोनों ही इसे लिए अभिनंदन के पात्र हैं। काव्य में छंद-प्रसंग न होने से वह अधूरा लगा।

-कुमार रविन्द्र, हिसार (हरियाणा)

पाठकों से

पत्रिका के विभिन्न स्तंभों में छपी रचनाओं पर आपके विचारों व प्रतिक्रियाओं का स्वागत है क्योंकि वे ही हमारे संबल हैं। आपके सुझाव हमारे लिए बहुत ही कीमत रखते हैं। हमें इस पते पर लिखें --

पाठकीय पन्ना, 'विचार दृष्टि'
'दृष्टि', यू-207, शकरपुर,
विकास मार्ग, दिल्ली-92,
दूरभाष-011-22530652

राजयभाषा की उपेक्षा

'विचार दृष्टि' का जुलाई-सितंबर 2003 अंक मिला। सातवें विश्व हिंदी सम्मेलन की रपट बहुत अच्छी ली गई है। हिंदी पर राजनीति का हावी होना कोई नई बात नहीं है - अफसोस कि हम इस मकड़जाल को काटने के लिए सक्रिय क्यों नहीं होते। यह सही है कि विश्व के बड़े परिवर्तनों और नवीनतम ज्ञान-विज्ञान को हिंदी में प्रतिबिंबित किए बिना पिछड़ जाने का डर है। लेकिन यह बात गले नहीं उतरती कि यदि भारत के विभिन्न प्रांतों की आपसी राजनीति के कारण राजभाषा की उपेक्षा हो रही है, तो उसे संयुक्त राष्ट्र का भाषा बनाने का प्रयास न करें। असल में ये दोनों मुद्दे अलग-अलग हैं। राष्ट्रीय गौरव की दृष्टि से यह आवश्यक है कि वर्ष के अंत तक हिंदी को विश्वभाषा बनाने की तमाम तकनीकी बारीकियों से निबट लिया जाए। भारत के भाषा-वैविध्य या भीतरी भाषा-संघर्ष का संबंध हिंदी की अंतर्राष्ट्रीय स्थिति पर नहीं पड़ता है। वहां हिंदी समस्त भारतीय भाषाओं के सम्मान की प्रतीक है।

डॉ० ऋषभदेव शर्मा, हैदराबाद

बहुआयामी दृष्टिकोण

विचार दृष्टि के पास वाह्य और अंतर दोनों ही दृष्टियाँ हैं। इसीलिए वह वाह्य तथ्यों को इतनी सुक्षमता और साफगोई के साथ पाठकों को परोस रही हैं अपने संपादकीय में आज की हमारी वर्तमान संसदीय लोक तंत्र की जो आजने व्याख्या की है, वह कढोर सत्य है आपकी बेबाक अभिव्यक्तियों का मैं कायल हूँ। आपकों क्रोटिशः साधुवाद। भारत जैसे सांस्कृतिक और विरवासन देश के लिए विचारहीनता का दौर सचमुच खतरे की घंटी है। इस दौर से निजात पाने के लिए विचारों को समन्वित कर उन्हें राष्ट्र की मुख्य धारा से जोड़ना अत्यावश्यक इस दुष्कर एवं कठिनतर काम का बीड़ा उठाना अपने आप में बहुत बड़ी बात है। आप इसे बखुबी निभा रहे हैं।

राष्ट्रीय स्तर की यह पत्रिका राष्ट्रीय चेतना की भावनाओं से भर-पूरा काफी अकर्षक और बहुआयामी दृष्टिकोण की पत्रिका हैं इसके सभी स्तम्भ उपयोगी और पठनीय है। किस-किस का नाम गिनाऊँ।

स्व० गोपीवल्लभ को याद कर आपने सभी साहित्यकारों की इच्छाओं की पूर्ति की है।

- सतीश प्रसाद सिन्हा, पटना

जरा इनकी भी सुनें

पाक अधिकृत कश्मीर में आतंकवादी शिविर नष्ट किए जायें।

-अटल बिहारी वाजपेयी, प्रधानमंत्री

भारत पाकिस्तान, कश्मीर और अफगानिस्तान में खतरनाक खेल खेल रहा है।

-पाक राष्ट्रपति परवेज मुशर्रफ

भारत की परमाणु कमान श्रृंखला पूरी तरह अपने स्थान पर है। जिससे यह देश प्रभावी तरीके से जवाबी कार्रवाई करने में सक्षम है

विपक्ष के नेता सोनिया गांधी की झूठ की राजनीति समाप्त करने के लिए जल्द ही मैं अदालत की शरण में जाऊँगा।

-रक्षा मंत्री जार्ज फर्नांडीस

नक्सलियों के जानलेवा हमले में बाल-बाल बचे व इस नए जीवन को जनता की सेवा में दोबारा समर्पित कर रहे हैं

-आन्ध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री चन्द्र बाबू नायडू

नक्सलवाद और उग्रवाद की मूल जड़ सामाजिक विषमता है।

-छतीसगढ़ के मुख्यमंत्री अजीत जोगी

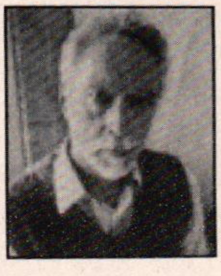

साहित्य का नोबल पुरस्कार देने की घोषणा से मुझे आश्चर्य हुआ है क्योंकि मुझे यह भी पता नहीं था कि इस पुरस्कार की घोषणा की जानी है।

-प्रसिद्ध उपन्यासकार जे.एम. कोएत्सी

गाँधी और पटेल आज पहले से ज्यादा प्रासंगिक

बापू की जयंती दो अक्टूबर और सरदार पटेल की इक्तीस अक्टूबर को। इन दो महापुरुषों की जयंती पर यह विचार करने के लिए हम विवश हुए कि क्या गाँधी और पटेल आज प्रासंगिक हैं, खासकर तब जब आज के अंतर्राष्ट्रीय मंच पर पूंजीवादी अर्थव्यवस्था से हताशा उत्पन्न हो रही है और साम्यवादी अर्थव्यवस्था असफल हो रही है, भारत ही नहीं विश्व के अन्य भागों में भी संपूर्ण समाज हिंसामय हो रहा है और सांप्रदायिक उन्मेष बढ़ता जा रहा है, शाश्वत-जीवन मूल्यों के ह्रास के साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों का क्रूर विदोहन हो रहा है, गाँधी और सरदार पटेल के विचारों एवं आदर्शों पर एक दृष्टि डालना जरूरी हो जाता है। क्योंकि जहाँ एक ओर ये सब दुनिया को विनाश के कगार पर ला खड़ा कर दिया है वहीं दूसरी ओर पर्यावरण असंतुलन और अंतर्राष्ट्रीय आतंक ने दुनिया को हिलाकर रख दिया है। आज स्थिति यह हो गयी है कि शक्तिशाली राष्ट्र भी शांति चाहने लगे हैं और अविकसित एवं विकासशील देश अहिंसा का मार्ग अपनाकर आगे बढ़ना चाहते हैं। इस दृष्टिकोण से गाँधी और पटेल आज ज्यादा व्यावहारिक और उपयोगी दिख रहे हैं।

आज जिस प्रकार त्याग की जगह भोग हमारा लक्ष्य होता जा रहा है, शारीरिक श्रम को हम तिलांजलि देते जा रहे हैं, राजनीतिक उठा-पटक हमारी दैनिक दिनचर्या का अंग बनते जा रही है, शराफत और ईमानदारी को कायरता समझा जाने लगा है, पाखंडी, धूर्त और आपराधिक प्रवृति के लोगों का राजनीति पर कब्जा होने लगा है, ऐसे समय में गाँधी और पटेल के आदर्श और विचार ही हमारा मार्गदर्शन कर सकते हैं। उनके सत्य और अहिंसा के मार्ग पर चलकर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। आखिर महान वैज्ञानिक आइन्सटाईन ने बापू के संबंध में इसीलिए तो कहा था कि **भावी नस्लें मुस्किल से विश्वास करेंगी कि गाँधी सरीखा हाड़-माँस का बना व्यक्ति भी इस संसार में कभी पैदा हुआ था।** सच तो यह है कि गाँधीजी न केवल स्वयं अपने पैरों पर चलकर करोड़ों हिन्दुस्तानियों की नब्ज पहचानने में सफल हुए बल्कि भारत के जनमानस को अंतर्मन से समझकर ही उन्होंने धोती और लंगोटी को अपनाया था। आज हमारे देश की स्थिति यह है कि भारतीय बाजार विदेशी सामानों से पटा पड़ा है और प्रतिदिन देश की दौलत विदेशी कंपनियों की झोली में जा रही है। जिस देश में गाँधी ने स्वाधीनता, स्वदेशी और स्वावलंबन की अलख जगाने के लिए विदेशी सामानों की होली जलाने का आंदोलन किया था उस देश में न केवल गाँधी को भुलाया जा रहा है बल्कि उनके स्वदेशी के विचार को भी दफनाया जा रहा है।

सच कहा जाए तो बापू शांति, अहिंसा और सत्याग्रह के पर्यायवाची हो गए हैं। आज देश के समक्ष खड़ी चुनौतियों का सामना गाँधी के बताए मार्ग पर चलकर ही किया जा सकता है क्योंकि गाँधी जी चाहते थे कि सभी व्यवस्थाओं में मानव केंद्र बिंदू हो किंतु आज वर्ग, समाज, समूह, संगठन, राजनीतिक पार्टियाँ ही प्रमुख हो गयी हैं और मानव गौण हो गया है। जातियाँ प्रधान हो गयी हैं और उसके सदस्य लोप हो गये। बापू आदर्श समाज चाहते थे जिसमें कर्म की शुद्धता हो। इसी कारण से उन्होंने पंचायती राज की वकालत की थी। उनका मत था कि देश की आर्थिक योजनाएं ग्राम को केंद्र मानकर बनाई जाएं। सत्याग्रह गाँधीजी का हथियार था। सत्याग्रह का अर्थ ही यह है कि सत्य के लिए अड़ा जाए। आज स्थिति यह है कि सच को सच कहने से लोग कतरा रहा है। झूठ का बोलबाला है।

गाँधी के गुण, शक्ति और उनकी कार्य प्रणाली के आधार पर हमें अपनी समस्याओं के हल निकालने में सहुलियतें मिल सकती हैं। जिन चुनौतियों का सामना आज देश को करना पड़ रहा है, उन्हें गाँधी द्वारा प्रस्तावित कार्य प्रणाली के परिप्रेक्ष्य में जाँचा-परखा जा सकता है। बिडंबना यही है कि हमलोगों ने गाँधी को सराहा किंतु उनके रास्ते न चलकर नेहरू के रास्ते पर चले, जिसने स्वयं गाँधी को सराहा पर वे अपने ही रास्ते पर चले। गाँधी के विजन, अनवरत प्रयोग और चौकसी नें भूमण्डलीकरण को परिभाषित किया, जो मानव मूल्यों और समानता पर आधारित था। वे प्रौद्योगिकी प्रगति को कुछ हाथों में सीमित करने के खिलाफ थे। मानव के सम्मान की कीमत पर वे मशीनीकरण के विरूद्ध थे। आज के दौर की अर्थव्यवस्था और वैश्वीकरण बापू द्वारा प्रतिपादित विचारों से मेल नहीं खाती है। आज यह देखा जाना चाहिए कि बाजार मनुष्य के लिए है या मनुष्य बाजार के लिए। गाँधी जी किसानों के हिमायती थे। वे मानव-समूह के लिए उत्पादन चाहते थे न कि अत्यधिक उत्पादन। आज यह देखा जा रहा है कि संप्रभुता एवं आम आदमी की आवश्यकताएं कैसे पृष्ठभूमि में जा रही है। पूरा देश एक बर्बर गैर बराबरी के बियाबान में तब्दील होती जा रही है और आए दिन शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक बदहाली से तंग आकर लोगों द्वारा आत्महत्या की खबरें आ रही हैं।

इस देश में गाँधी जी को ठीक से समझा नहीं गया। गाँधी की शक्ति, उनकी मौलिकता और उनके रचनात्मक कार्यों में थी। चरखा और खादी जैसे उनके प्रतीकों में एक गहरी रचनात्मकता है। यह सच है कि गाँधी अपनी सीमाओं के शिकार हुए मगर उनकी निष्ठा पर आज भी किसी को संदेह नहीं हो सकता। उनके अनुभव के सत्य और हृदय परिवर्तन के प्रश्न कभी अप्रासंगिक नहीं हो सकते। देश आज एक ऐसे मोड़ पर चला जा रहा है जहाँ तरह-तरह की कठमुल्ला शक्तियाँ उभार पर हैं और लौटना मुश्किल हो रहा है। मगर जिनके लिए धर्म एक आडंबर है, जातिवाद सामाजिक वैमनस्य का हथियार है, उनके खिलाफ गाँधी आज भी खड़े दिखाई दे रहे हैं। उन्होंने समतामूलक समाज की कल्पना की, साम्राज्यवाद से पिसते हुए समाज में आखिरी आदमी के प्रति अपनी चिंता रेखांकित की। गाँधी जी भारत को समझते थे इसलिए उन्होंने लोकभाषा को महत्व दिया और वह बिल्कुल आम लोगों की तरह बाते करते थे। इस प्रकार इस महामानव ने जिस स्पष्टता और गहनता से अपने युग की समस्याओं को समझा और उसका समाधान प्रस्तुत किया वह वस्तुतः अतुलनीय और अद्वितीय है। दुर्भाग्य यह कि हम उन्हें भुलते चले जा रहे हैं। राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी के बारे में भारतीयों की रूचि अब केवल परीक्षाओं में पूछे जानेवाले प्रश्नों तक सीमित रह गयी है। बापू के बारे में जानने-समझने और उनकी सोच का लाभ उठाने के मामले में अमरीकी और यूरोपीय देश हमसे काफी आगे निकल गए हैं। यह बात गाँधी पर जारी एक बेबसाइट www gandhi.org से स्पष्ट होती है। क्या हमारे लिए यह लज्जा की बात नहीं है? क्या राष्ट्रपिता की गरिमा और उनके कद को बढ़ाने की बात तो दूर उसे बरकरार भी हम नहीं रख सकते?

गाँधी ने हमें निर्भीक होने की शिक्षा दी है, हमें अभय होने का वह व्यवहारिक संदेश दिया है जो बड़े से बड़े संकट पर विजय पा लेने की शक्ति देता है। बापू नहीं चाहते थे कि मनुष्य आधुनिक बनने की चाह में विज्ञान के पीछे-पीछे अपनी आँखें मूंदे भागता चला जाए। वस्तुतः वे चाहते थे कि किसी भी स्थिति में विज्ञान मनुष्य से उसकी मनुष्यता नहीं ले सके और इसी परिप्रेक्ष्य में उन्होंने कहा था कि भारत को पश्चिमी देशों से बहुत कुछ सीखना है किंतु भारत से भी पश्चिमी देशों को बहुत कुछ सीखना है। वे मानते थे कि विज्ञान का एकांगी रास्ता मनुष्य को वह सब कुछ नहीं दे सकता जो मनुष्य के लिए अनिवार्य है। इसीलिए बापू ने सत्य को अपनाने की बात कही थी क्योंकि सत्य में हमारी आस्था हमें चरित्र की शक्ति देता है। आज देश में रोटी से बड़ा संकट, शायद चरित्र का ही है। राजनीति हो या समाज चरित्र उससे गायब दिखता है। गाँधी ने हमें व्यापक रूप में सारी दुनिया को मानवता के लिए ऐसी राह दिखलाई है जो देश, समाज, राजनीति और दुनिया के लिए शांति और खुशहाली का रास्ता है। गाँधी संघर्ष, जुझारूपन और विप्लव के परिचायक तो हैं ही वे ऊंची मनुष्यता, शालीनता और राजनीति में उस नैतिकता के भी प्रतिमान है जिसकी आज राजनीति एवं सामाजिक जीवन में काफी जरूरत है। गाँधी का सारा प्रयास राजनीति को संवेदनशील, मानवीय और सबके हित में अर्थपूर्ण बनाने का था जिसका आज की राजनीति में सर्वथा अभाव है। इस दृष्टि से यदि देखा जाए तो गाँधी की प्रासंगिकता आज पहले से अधिक है।

ठीक इसी प्रकार **लौहपुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल** भी आज अधिक प्रासंगिक हो गए हैं क्योंकि आज प्रशासनिक स्तर पर जिस प्रकार अव्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाया जा रहा है तथा प्रशासक के उत्तरदायित्व के निर्वहन में मंत्रियों, एवं राजनीतिक नेताओं की दखलंदाजी हो रही है उसमें सरदार पटेल याद आते हैं। पटेल स्मारक व्याख्यान माला के तहत 1987 में भारत के प्रधान न्यायाधीश वाई वी. चन्द्रचुड़ ने अपने आलेख 'दी बेसिक्स ऑफ इंडियन कंस्टीच्यूशन: इट्स सर्च फॉर सोशल जस्टिस एण्ड दी रोल ऑफ जजेज' में पटेल का उल्लेख करते हुए उनके विचार उन्हीं के शब्दों में जो व्यक्त किए वे ध्यातव्य हैं-**"आज मेरे सचिव मेरे विचारों के विरूद्ध अपनी टिप्पणी लिख सकते हैं। मैंने यह आजादी अपने सभी सचिवों को दी है। मैंने उनसे कहा है कि यदि आपने ईमानदारीपूर्वक अपना विचार इस डर से प्रगट नहीं किया कि आपके मंत्री आप से नाराज हो जाएंगे तो इससे बेहतर है कि आप चले जाएं। मैं दूसरा सचिव लाऊँगा..........आप उत्तरदायित्व की भागीदारी निभाने को सहमत हुए हैं। "** इन पंक्तियों से सरदार पटेल के प्रशासनिक एवं लोकतांत्रिक दृष्टिकोण का सहज अंदाजा लगाया जा सकता है। यदि आज के राजनीतिज्ञ सरदार पटेल की इस टिप्पणी पर गौर करते हुए उस पर अमल करें तो मौजूदा हालात में परिवर्तन की गुंजाइस है लेकिन चिंता का विषय यह है कि प्रशासनिक अधिकारियों में आज अपने उत्तरदायित्व का अभाव ही नहीं बल्कि पूरी तरह उनका राजनीतिज्ञों के साथ साठगांठ है जिसका दुष्परिणाम सामने है।

असहमति लोकतंत्र की एक प्रमुख विशेषता है। सरदार पटेल को अपनी संघर्ष यात्रा में न जाने कितनी बार गाँधीजी तथा अपने अन्य सहयोगियों के साथ असहमति का दंश झेलना पड़ा फिर भी वे उसका सामना करते हुए अपने रचनात्मक कार्य में तल्लीन रहे तथा आंदोलन, संघर्ष और सत्याग्रह में सबके साथ रहकर अपनी क्षमता का परिचय दिया। वर्तमान दौर में न केवल सत्ता पक्ष एवं विपक्ष के स्तर पर बल्कि अलग-अलग भी अपने सहयोगियों के साथ नेताओं की असहमति होती है तो वह हिंसा का रूप ले लेती है। इस दृष्टिकोण से सरदार पटेल के व्यक्तित्व से सीख लेकर आज की कठिन परिस्थितियों का सामना किया जा सकता है। इसलिए सरदार पटेल भी आज उतने ही प्रासंगिक हैं जितने तब थे। भारतीय राजनीति में सरदार पटेल का नाम आज सर्वोपरि है। पिछले दिनों स्वतंत्रता की 57 वीं सालगिरह पर देश के सर्वाधिक लोकप्रिय नेता के लिए हुए एक सर्वेक्षण में यहाँ तक कि महात्मा गाँधी को भी अपनी सीट सरदार वल्लभ भाई पटेल के लिए छोड़नी पड़ी है। एक तरह से इसे आजादी के 56 वर्ष बाद देश की सोच में आए एक बड़े परिवर्तन का सूचक माना जा सकता है।

मुसलमानों को लेकर सरदार वल्लभ भाई पटेल के विषय में कई सारी गलतफहमियाँ भी व्याप्त हैं खासकर उनकी मृत्यु के बाद यह कहा गया कि उनकी सोच में मुस्लिम-विरोध का पुट मौजूद था। इस संदर्भ में देश के जाने-माने बौद्धिक-चिंतक डॉ. रफीक जकारिया ने अपनी पुस्तक **'सरदार पटेल तथा भारतीय मुसलमान'** में बिना किसी आग्रह-पूर्वाग्रह के इस आरोप को खारिज करते हुए कहा है कि देश-विभाजन के दौरान हिंदू शरणार्थियों की करुण अवस्था देखकर पटेल में कुछ हिंदू-समर्थक रूझानात भले ही आ गए हों, पर ऐसा एक भी प्रमाण नहीं मिलता, जिससे यह पता चले कि उनके भीतर भारतीय मुसलमानों के विरोध में खड़े होने की कोई प्रवृति थी। सच तो यह है कि महात्मा गाँधी के प्रारंभिक सहकर्मी के रूप में सरदार पटेल ने हिंदु-मुस्लिम एकता के जैसे शानदार उदाहरण गुजरात में प्रस्तुत किए थे उन्हें अंत तक बनाए रखने की प्रबल भावना उनमें बार-बार जाहिर होती रही। भारत की एकता और एकात्मता तथा हिंदू-मुसलमान भाई-चारे के प्रति सरदार पटेल की कट्टर निष्ठा अपने आप में एक उदाहरण है। उनकी देशभक्ति संदेह से परे थी और उनका राष्ट्रवाद भी असंदिग्ध था। गाँधीजी ने उनके बारे में कहा था- **'सरदार पटेल को मुस्लिम-विरोधी कहना सच्चाई का उपहास उड़ाना होगा।'** स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान सरदार सदैव इस बात पर बल देते रहे कि **"हिंदू-मुस्लिम एकता एक कोमल पौधे जैसी है। इसे हमें लंबे अरसे तक बड़े ध्यान से पालना होगा, क्योंकि हमारे दिल अभी उतने साफ नहीं हैं**, जितने होने चाहिए। ''उन्होंने हिंदुओं को याद दिलाया कि उनका कर्तव्य है कि वे मुसलमान समुदाय की अच्छाईयों में पूर्ण विश्वास व्यक्त करके मुसलमानों को इस्लाम की रक्षा के लिए हर संभव सहायता प्रदान करें।" सरदार पटेल जीवन भर एक संयुक्त भारत की संभावनाओं को साकार करने में लगे रहे। वे इस तथ्य को कभी नहीं भुला पाए कि विभाजन मूलतः गलत था। उन्हें लगता था कि यह विभाजन इस वास्ताविकता को नष्ट कर देगा कि हम एक और अविभाज्य हैं: "आप समुद्र या नदियों के पानी विभाजित नहीं कर सकते। जहाँ तक मुसलमानों का प्रश्न है, उनकी उनकी जड़ें, उनके पवित्र स्थान और उनके केंद्र यहीं हैं। मैं नहीं जानता कि पाकिस्तान में वे करेंगे क्या?"

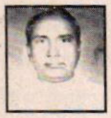

दलित-साहित्य में विद्रोह के संघर्षशील स्वर

प्रो० (डॉ०) रामदेव प्रसाद

दलित-साहित्य से तात्पर्य है, दलित मानवता का साहित्य। हिन्दी में दलित-लेखन का आगमन मराठी साहित्य से हुआ। दिसम्बर 1956 में महाराष्ट्र दलित-साहित्य संघ की ओर से पहला दलित साहित्य सम्मेलन किये जाने का कार्यक्रम बनाया गया था जिसकी अध्यक्षता डॉ० अम्बेडकर को करनी थी, परन्तु 6 दिसम्बर को उनका देहान्त हो जाने के कारण यह सम्मेलन 1958 में हो सका। इसलिए दलित साहित्कारों ने समवेत स्वर से अम्बेदकर को दलित-साहित्य का संस्थापक स्वीकार किया। महाराष्ट्र में 1974 में कुछ तेजतर्रार दलित युवकों ने 'दलित पैंथर' नामक संगठन खड़ा किया। इसके सभी सदस्य साहित्यकार और लेखक थे। हिन्दी में दलित साहित्य की शुरूआत मराठी साहित्य से मानी जाती है। लेकिन महाराष्ट्र में चलनेवाले इस आन्दोलन से पहले ही 1914 में 'सरस्वती' में छपी होरा डोम की (एक अछूत की शिकायत) कविता को हिन्दी दलित-साहित्य को उद्गम बिन्दू माना जा सकता है। इसमें कवि स्वयं दलित है और समाज द्वारा प्राप्त अमानुषिक व्यवहार का विरोध वह ईश्वर से करता है और नफरत में ईश्वर की सत्ता को नकारते हुए उसे भगवनमा कहता है। आज दलित साहित्य लेखन भारत वर्ष में व्याप्त हो चुका है। यहाँ यह स्पष्ट हो जाना चाहिये कि दलित-साहित्य और दलित-चेतना में अन्तर है। दलित-चेतना का प्रारंभ वैदिक काल से ही मिलता है। जब बाहर से आये आर्यो ने यहां के मूल निवासियों को गुलाम बना लिया तो आर्यो के चतुर्दिक शोषण के शिकार 90% जनता के शोषणों का जो प्रतिबिम्बन संस्कृत-साहित्य में मिलता है वह दलित-चेतना का वर्णन है, दलित-साहित्य का नहीं। इसी तरह रविदास, कबीर, आदि की कृतियों में सामाजिक विषमता के खिलाफ जो स्वर सुनाई पड़ता है वह दलित-चेतना का स्वर है। महात्मा बुद्ध, ज्योति-बा-फुले आदि ने पीड़ित मानवता के लिए ब्राह्मणवादी व्यवस्था से विद्रोह किया। वस्तुत: दलित-साहित्य की चेतना हिन्दी साहित्य की दस हजार वर्ष पुरानी परम्परा से अलग नहीं है।

कुछ आलोचक ने दलित-साहित्य को दलित साहित्यकार द्वारा दलितों की पीड़ा की अभिव्यक्ति को दलित-साहित्य की संज्ञा दी है और कुछ आलोचकों ने गैर दलित साहित्यकार द्वारा दलितों के दु:ख-दर्द को विषय बनाकर लेखन कार्य को भी दलित-साहित्य माना है। वस्तुत: दलित-साहित्य में दोनों ही प्रकार के साहित्य लेखन को समाहित किया जाना चाहिए। हाँ एक अन्तर अवश्य है कि गैर दलित लेखक की कृतियों में दलितों की यातना और पीड़ा का स्वर तो प्रधान है लेकिन उनकी मुक्ति का उपाय भी तेवर के साथ संकेतित रहता है। फिर भी गैर दलितों की कृतियों में किसी न किसी रूप में दलितों के जीवन को कथा वस्तु में पिरोकर दलित चेतना को विस्तार दिया है तथा दलित-साहित्य की आधार भूमि भी तैयार की है, जिसपर चलकर दलित-साहित्य अपनी व्यापकता में व्याप्त हो सका है। ऐसी कृतियों में रांगेय राधव का "मुर्दों का टीला" 1948, कब तक पुकारूं-1958, फणीश्वरनाथ रेणु का "मैला आंचल" 1954, परती परिकथा-1961, आचार्य चतुरसेन शास्त्र-7 का "सोमनाथ"-1954, गोली-1957, उदयास्त-1963, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' का "बुधुवा की बेटी"-1964, गोविन्द बल्लभपंत का ''जूनिया''-1965, मन्मथनाथ गुप्त का "महादानव"-1965, श्रीराम शर्मा का "नदी का मोड़"-1965, "प्रतोति"-1979, रामदरश मिश्र का "जल टूटता हुआ"-1969, "सूखता हुआ तालाब"-1979, शिव प्रसाद सिंह का "अलग-अलग" वैतरणी-1967, जगदीश चन्द्र का "धरती धन व अपना"-1972, डॉ० अरिगपूडि का "नदी का शोर"-1975, "सोनभद्र की राधा"-1976, "सीताराम नमस्कार"-1977, नरेन्द्र कोहली का "अवसर"-1978, ब्रजभूषण का "मंगलोदय"-1978, दामोदर सदन का "नदी मोड़ पर"-1979, अमृतलाल नागर का "नाच्चौ बहुत गोपाल"-1979, मन्नू भण्डारी का "महाभोज"-1979, श्री चन्द्र अग्निहोत्री का नयी बिसात"-1980, बाला दूबे का "मकान दर मकान"-1981, यादवेन्द्र शर्मा का "हजार घोड़ों का सवार"-1981, डा० आरिगपूडि का "अभिशाप"-1981, गिरिराज किशोर का "यथा प्रस्तावित"-1982, "परिशिष्ट"-1989, राजकुमार भ्रमर का "मोतिया"-1979 और "एक अकेला" राम सुरेश का "धन्नी फिर लौटेगा"-1987, शैलेश मटियानी का "गोपली गफूरन" व "नाग बल्लरी" ''बाबा नागार्जुन'' का "बलचनमा"-1989, हरिसुमन बिष्ट का "आसमान झुक रहा है" आदि मुख्य हैं।

वही साहित्य दलित-साहित्य की श्रेणी में आ सकता है, जो शोषित जनता में तर्कशीलता, स्वाभिमान और आत्मविश्वास पैदा कर सके और जो उसमें सत्ता में भागीदारी पाने की महत्वाकांक्षा दे सके तथा जो शोषण रहित मानववादी व्यवस्था भी ला सके।

इस तरह दलित-साहित्य को ऐसे शोषितों का साहित्य कहा जा सकता है जो अन्य सभी तरह के शोषण के साथ-साथ जाति-आधारित शोषण के शिकार हैं। वही साहित्य दलित-साहित्य की श्रेणी में आ सकता है, जो शोषित जनता में तर्कशीलता, स्वाभिमान और आत्मविश्वास पैदा कर सके और जो उसमें सत्ता में भागीदारी पाने की महत्वाकांक्षा दे सके तथा जो शोषण रहित मानववादी व्यवस्था भी ला सके। वस्तुत: वही साहित्य दलित-साहित्य हो सकता है जो जातिवादी असामनता को समाप्त कर मानववादी सामाजिक परिवर्तन ला सके। इसीलिए मराठी दलित साहित्यकार बाबू राव बागुल ने इस संदर्भ में महार में 1971 में हुई दलित-साहित्य कांफ्रेस में जो कुछ कहा था, वह पूर्णतया स्थिति को स्पष्ट कर देता है-- "दलित-साहित्य मानव को अपना केन्द्र बिन्दु मानता है। यह मानव को समानता का पाठ पढ़ाता है और मानता है कि मानव अपने

सार-रूप में एक है। दलित-साहित्य बदले या घृणा की जगह प्यार भ्रातृत्व व समानता फैलाता है।"

दलित-साहित्य की संभावनाएं अनन्त हैं। सभी विधाओं में दलित-साहित्य का लेखन हुआ है और हो रहा है। हिन्दी के दलित कथाकारों में ओमप्रकाश वाल्मीकि (जूठन-1997) मोहन दास नैमिशराय (अपने-अपने पिंजरे- 1995), (कौशल्या वैसंतरी) (दोहरा अभिशाप-1998), पुरुषोतम्ब सत्यप्रेमी, दयानन्द बटोही, सधुनाथप्यासा, शिवचन्द्र उमेश, कालीचरण स्नेही, बी०एल० नैयर, जयप्रकाश कर्दम, डा० कुसूम योगी आदि हैं। उपन्यास विधा में जयप्रकाश कर्दम (छप्पर एवं करुणा"-1994), मोहनदास नैमिशराय (क्या मुझे खरीदेंगे-1989), डॉ० रामजी लाल सहायक (बंधन मुक्त-1954), प्रेम कपाड़िया (मिट्टी की सौगन्ध-1995), डी०पी० वरुण (अमर ज्योति-1980), भगवान दास ओखाल (काला पहाड़-1999) प्रमुख हैं।

काव्य विधा में-- ओमप्रकाश वाल्मीकि, मोहनदास नैमिशराय, सुशीला टाकभौरे, कुसुम वियोगी, जय प्रकाश कर्दम, सी०बी० भारती, मलखान सिंह, श्यौराज सिंह बेचैन, डा०एन० सिंह, कवंल भारती, एन० आर० सागर, धर्मवीर, लक्ष्मीनारायण सुधाकर, सुखबीर सिंह, सोहनपाल सुमनाक्षर, मंसाराम विद्रोही,' डा० एन० सिंह। इसी तरह कहानी विधा में-रमाणिका गुप्ता, मोहनदास नैमिशराय, कुसुम वियोगी, डा० दयानन्द बटोही, सूरज पाल चौहान, सुशीला टाकभौरे, डा० एन० सिंह। इसी तरह जीवनी विधा में -- हिमांशु राय, विजय कुमारी पुजारी। अनुवाद विधा में -- शरण कुमार लिंबाले, लक्ष्मण गायकवाड, प्रो० ई० सोनकाबंले, डा० श्यौराज सिंह बेचैन, जी० डब्ल्यू० ब्रिगिस। दलित-साहित्य की पत्र पत्रिकाओं में प्रज्ञा-साहित्य, युद्धरत आम आदमी-दलित चेतना, हस्तक्षेप, पश्यंती, नई दुनिया प्रकाशन, नया मानदण्ड, कला के लिए आदि हैं। नाटक के क्षेत्र में 'अदालत नामा' ओर 'अन्तिम अवरोध' का नाम लिया जा सकता है। इसी तरह आलोचना के क्षेत्र में कबीर के आलोचक, कबीर नई सदी पे, नवे दशक की हिन्दी दलित कविता, हिन्दी दलित पत्रकारिता पर पत्रकार अम्बेडकर का प्रभाव, गांधी अम्बेडकर हरिजन-जनता, सतं कवि रैदास, आम्बेडकर एक पुनर्मूल्यांकन, हिन्दी काव्य में दलित काव्यधारा, आम्बेडकर के आलोचक आदि हैं। दलित-साहित्य का उद्भव ही संघर्ष से हुआ है। आन्दोलन उसकी नियति है। सामाजिक विषमता को दूर कर समतामूलक व्यवस्था कायम करना उसका उद्देश्य है। दलित-साहित्य में विद्रोह के संघषशील स्वर इसकी हर विधाओं में सुनाई पड़ता है। दलित-साहित्य में विद्रोह के संघर्षशील स्वर के विविध आयाम हैं, जिनमें निम्नांकित स्वर प्रमुख हैं--

1. **नक्सलवादी संगठनों की उत्पति**-विषमतामूलक समाज में 90:जनता अनेक प्रकार के शोषणों से ग्रसित हैं, ब्राह्मणवादी और सामंती जुल्मों को सहते-सहते जब जनता असह्य होकर बौखला उठती है, तो प्रतिक्रिया में अनेक नक्सलवादी संगठनों की उत्पति हो जाती है। बिहार की धरती में इसकी प्रचण्डता के कई प्रमाण छाये हुए हैं। प्रतिक्रिया स्वरूप अनेक सेना/संगठनों का उद्भव हो गया जैसे -- लाल सेना, भूमि सेना, ब्रह्मर्षि सेना, पिपुल्सग्रुपवार, माले, रणवीर सेना आदि।

2. **उचित मजदूरी हेतु संघर्ष की आवाज:** दलित-साहित्य में दलित मजदूरों की इस बेचैनी का भरपूर वर्णन हुआ है। सरकार की मजदूरी-नीति के तहत जो उचित मजदूरी मिलनी चाहिए, सामंत किसान उनको कभी नहीं देते। न्यूनतम मजदूरी कानून के तहत मजदूरी पाने का हक श्रमिकों को है और यह मजदूरी नहीं मिलने के चलते ही हर तबके के श्रमिक विद्रोह की प्रणाली अपनाते हैं। ज्यादातर श्रमिक मजदूर हटाए जाते हैं, झूठे मुकदमों में फंसाये जाते हैं और ऐसी छोटी जातियों के मजदूरों में गोलबन्द होने का स्वर उपजता है जो दलित सहित्य में सुनाई पड़ता है।

3. **इज्जत-आबरू बचाने के लिए हथियार उठाकर प्रतिकार करना** -- कामगार मजदूरों की सबसे अधिक चोट तब लगती है जब उनकी बहूबेटियों की इज्जत की ओर सामंतों तथा ब्राह्मणवादी नजरें पड़ती हैं। इसे सह पाना कमजोर से कमजोर आदमी के लिए भी आसान नहीं होता। जमींदार किसान या कारखाने मालिक मजदूरों को बहू-बेंटियाँ की इज्जत से खेलना अपना पुस्तैनी अधिकार समझते हैं। वहाँ दलित मजदूरों का संघर्ष का स्वर तीव्र हो जाता है। इसके उदाहरण में लहसूना के दुखनी और राजकिशोरी सिंह तथा तारामणी तथा राधिका की बलात्कार-कहानी पटना के पुनपुन प्रखण्ड में आज भी विख्यात है। इससे दलित मजदूरों ने गोलबन्द होकर सामंती किसानों के खेत में काम करना बन्द कर दिया जिसमें सामंतों के सैकड़ों बीघा खेत समय-समय पर परती रह जाते हैं। अपनी इज्जत-आबरू को बचाने के लिए हथियार उठाने में अब ये दलित गौरव महसूस करते हैं। लोकगीतों में यह व्यथा इस प्रकार चित्रित है--

प्रश्न- जिन कर बिगड़लवा चलनियाँ कैसे सुधरी?

उत्तर - मथवा मारब जब मुगरिया तब तो सुधरी!

4. **समतामूलक सम्मान के लिए संघर्ष करना**--पारंपरिक ब्राह्मणवादी मूल्यों के अन्तर्गत भाग्य, भगवान, आत्मा पुनर्जन्म और चमत्कार के विषैले बटवृक्ष लगाये गये हैं जिनसे ऊँच-नीच की भावना, जाति और वर्ण की

विभिन्नता, मानव के साथ पशुवत् व्यवहार, अत्याचार, बलात्कार, राजनैतिक, आर्थिक तथा सामाजिक शोषण की घटनायें दलित समाज को भागनी पड़ती हैं। दलित-साहित्य में दलित लेखकों ने इसका घनघोर विरोध किया है। 1914 को 'सरस्वती' में छपी हीरा डोम की कविता में उसने ईश्वर को तिरस्कार भी किया। मोहनदास नैमिशराय ने तो ईश्वर के होने पर भी ही प्रश्न चिह्न लगा दिया है। उन्होंने लिखा है-- ईश्वर की मौत / उस पल होती है / जब मेरे भीतर उठता है सवाल / ईश्वर का जन्म / किस मां की कोख से हुआ / ईश्वर का बाप कौन? ....

इसी तरह भाग्य, पुनर्जन्म का फल, आत्मा आदि को भी अस्वीकार कर दिया गया।

ओमप्रकाश वाल्मीकि तो हिन्दुत्ववादियों से उन्हीं का उद्वैतवाद का उदाहरण देकर पूछते हैं -- चूहड़े या डोम की आत्मा / ब्रह्म का अंश क्यों नहीं है? / मैं नहीं जानता / शायद आप जानते हों ....

5. **मानव विरोधी साहित्य का बहिस्कार**-दलित-साहित्यकारों ने संपूर्ण मानवता के विकास के लिए मानवता विरोधी साहित्य को नकारा है -- वैसे विचारों को दुत्कारा है जो सोची-समझी साजिश के तहत 85: मनुष्य को मनुष्य रहने देना नहीं चाहता है। दलित लेखन में मानववादी चेतना को विकसित करना उसका उद्देश्य माना गया है। पिछले पाँच हजार वर्षों से जो शोषण हो रहा है, उसका विरोधकर संपूर्ण मानवता को विकसित करना दलित-साहित्यकारों का दायित्व है। इसलिए वेद, पुराण, उपनिषद्, ब्राह्मणग्रन्थ, मनुस्मृति आदि के मानवता विरोधी विचारों का विरोध करना तथा ज्योति-बा-फुले, डा० अम्बेडकर, मोहनदास नैमिशराय, ओमप्रकाश बाल्मीकि, कुसुम वियोगी, प्रेमकापड़िया, कमल भारती, हिमांशु राय आदि के साहित्य को साहित्य मानना इसका कर्तव्य है। आज ऐसे साहित्य का निर्माण हो रहा है जिसमें दलित मानवता का सर्वांग विकास होगा।

6. **दलित साहित्य का चतुर्दिक विकास** दलित-साहित्यकार तो इसमें लेखन कार्य तो कर ही रहे हैं गैर दलित लेखक भी दलित-साहित्यि के सृजन में सहयोग देकर विगत पाँच हजार वर्षों से किये हुए अपने पापों का प्रायश्चित भी कर रहे हैं। इसलिए आज पूरे भारतीय समाज में सभी वर्ग के चिंतक यह सोचने के लिए विवश हैं कि जबतक समाज का 90% भाग पशुवत् अवस्था में रहेगा, देश का विकास असंभव है। इसीलिए दलित-साहित्य ने हिन्दी के समानांतर और बाद में जनवादी साहित्य की परंपरा को भी आगे बढ़ाने में अपना स्वर बुलंद किया।

7. **दलित, पीड़ित समाज की मौनव्यथा को मुखरित करना**-- दलित-साहित्य में दलितों और पीड़ितों की संघर्षशील कहानी को इसलिये प्रस्तुत किया जाता है कि सम्पूर्ण समाज की विषमता दूर हो सके। इसके लिये दलित-साहित्य में कविता, कहानी, उपन्यास अथवा आलोचनाओं में पुराने मिथकों और प्रतीकों को तोड़ कर नया अर्थ देने की प्रवृत्ति है। इसलिये मलखान सिंह, शिव के प्रतीक शिवलिंग को एकलव्य का कटा हुआ अंगूठा के रूप में देखता है। रमाणिका गुप्ता के मन में गीता का दूसरा ही अर्थ कौंधता है तब वो कहती हैं -- एक शब्द गीता / सब्र का जहर / संतोष की अफीम/ भाग्य का चक्रव्यूह / निष्काम प्रेम का नशा / परिश्रम के / फल से वंचित रखने की साजिश / परजीवी जमातों का / सर्जक, निठल्ले होगों का स्वर्ग।

आज का दलित-साहित्य दलित समाज की मौन पीड़ा को अभिव्यक्ति कर रहा है ताकि उसकी व्यथा दूर हो सके।

8. **दलितों में व्याप्क कुप्रथा का विरोध**-स्वतंत्र भारत के पहले का दलित समाज ब्राह्मणवादी चक्रव्यूह में दम तोड़ता समाज था, जिसे ज्योतिबाफुले, अम्बेडकर आदि ने उसे पुन: जीवित किया। आज भी दलित समाज का अधिकतर भाग ब्राह्मणवादी चपेट से आहट है। दलितों में व्याप्त, दुर्व्यसनों, कुरीतियों तथा अन्धविश्वासों को भगाना आवश्यक है। मनुवादी विषाक्त वातावरण को समाप्त कर दलितों को सचेत करना भी आवश्यक है।

इसलिए भागीरथ मेघवा का कहना है -- वक्त के सामने / दीवार बनकर खड़े मत रहो / लकीर के फकीर बनकर अड़े / मत रहो / बंदारिया के लिपटाये रखने से / उसका मरा बच्चा जी तो नहीं जाता।"

मोटे तौर पर स्थापित साहित्य वर्णवादी मानसिकता का शिकार है और इसके विरोध में दलित-साहित्य का स्वर प्रमुखता से उभर रहा है।

9. **संकीर्णता का विरोध**-दलित साहित्य में हर तरह की संकीर्णता के विरोध का स्वर सुनाई पड़ता है, क्योंकि यही संकीर्णता दलितों के पतन का कारण है। सुदेशतनवर ने ऐसी संकीर्णता को इस रूप में स्पष्ट किया है।

मैंने / हल्का-सा काँटा चुभाया / तुम तिलमिला उठे। / उन / असंख्य घावों का क्या होगा / जिसे जोड़ रखे हैं बनाकर तुमने / सदियों से मेरी देह में / लगातार तड़पते रहने के लिए / मुझे।

दलित-साहित्य में दलित चेतना एक दृष्टिकोण का परिचायक है, यह दृष्टिकोण भाईचारे और समानता का दृष्टिकोण है। दलित लेखन साहित्य की निम्नवर्गीय अभिव्यक्ति है और यह हर तरह की संकीर्णता का विरोध कर रहा है। धर्मवीर लिखते हैं -- उनके वेदान्त में विधवाओं की समस्याएं स्थगित थी / नारी की इज्जत भविष्य के भेड़ियों को सौंप दी थी। / श्यौराज सिंह "बेचैन" की अकुलाहट है - एक तरफ / कहकहे हैं / सब तरफ है बेजारी / भूख

है, लूट है -- और जिस्म की नीलामी है / सौ में सत्तर-फीसदी / इन्सान की गुलामी है।

10. **आर्थिक गुलामी से मुक्त होने की छटपटाहट**- दलित-साहित्य में यह भावना जोरों पर है, क्योंकि समाज की रीढ़ अर्थ-व्यवस्था होती है। आर्थिक दृष्टि से पिछड़ापन सामाजिक पिछड़ेपन का भी कारण है। इसलिये लक्ष्मीनारायण सुधाकर कहते हैं - एक लुटेरा एक कमेरा, शोषण-चक्र प्रबल है। / उपर से आतंकवाद का, गरज रहा बादल है।। / प्रजातंत्र में पर्वत जैसा पूंजीवाद विषय है। / भूखारोटी मांग रहा, बस इसीलिए हलचल है।। / जाति-पाति की, ऊँच-नीच की नींव अडिग पक्की है। / सामंती शोषण की ज्यों की त्यों चलती चक्की है।। / सत्य-अहिंसा की परिभाषा लिखी खून से जाती। / पर आदर्शों की नाम है ऊंची, बैठी कब मक्खी है।। / मानव-समाज का शत्रु पुरोहित-पूंजीवाद रहा है।

आर्थिक गुलामी से मुक्ति तभी मिल सकती है जब सम्पूर्ण दलित समाज समानता को प्राप्त करें। क्योंकि आर्थिक गुलामी की चक्की में पिसनेवाले सामंत भी रामनामी चादर ओढ़ कर हमेशा ठगने को तैयार रहते हैं, जिसकी ओर डा० एन० सिंह इशारा करते हैं-- ये समरसता की रामनामी ओढ़कर / वे फिर आ गए हैं / भूलों मत ये वही हैं। ....

11. **भाषा के तेवर में यथार्थ का तीखापन**-पारम्परिक सामंती साहित्य की तुलना में दलित-साहित्य की भाषा में विचित्र तेवर और तलखीपन है। दलित-साहित्य की अनेक विधाओं-कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, आत्मकथा, संस्मरण, आलोचना आदि में प्रयुक्त शब्दावली वाक्य-विन्यास, कहावतों, मुहावरों आदि में यथार्थ को अभिव्यक्त करने का अद्भुत कौशल है। दलित-साहित्य में भोगे हुए यथार्थ का वर्णन होता है, इसलिये इसका व्यापक फलक दिखलाई पड़ता है। दलित साहित्य की भाषा की महत्वपूर्ण विशेषता है कि यह आम आदमी की भाषा है। इसमें पूरे समुदाय के आक्रोश, पीड़ा, शोषण आदि को व्यक्त करने की क्षमता है। भाषा का मूल है, शब्द और शब्द के सम्बन्ध में कुसूम "वियोगी" का चिन्तन कुछ इस प्रकार है -- शब्द चेतना है / शब्द अन्याय के विरूद्ध / भंवरों की न्यायिक वेदना है / शब्द किसी निर्गुण सन्त के कानों में गूंजता हुआ / अनहद नाद है / शब्द वर्तमान में / महज दलित संवाद है / शब्द चेतना है / शब्द वेदना है / शब्द नाद है / शब्द संवाद है / कर्मशील भारतीय का विचार है - शब्द किसी की बपौती नहीं है / शब्द, शब्द है / वस्तु और उसकी अभिव्यक्ति के प्रवक्ता / शब्द / मिटा देते हैं अन्तर / तुम्हारे और हमारे मध्य का

भाषा की सर्वाधिक विशेषता कहलाती है उसके सही अर्थ को व्यवहार की दहलीज पर पहुँचा देना। इसी बात को कवंल भारती इन शब्दों में अभिव्यक्ति कर रही है-- क्रांति की भाषा सुन्दर नहीं होती / जैसे कि अखवार / जो तुम्हें रोज गुदगुदाते हैं / ये बताओ बलात्कार की शिकार / तुम्हारी माँ की भाषा कैसी होगी?

दलित-साहित्य की भाषा में शोषण, उत्पीड़न, अत्याचार, आर्थिक गुलामी से छूटने की छटपटाहट, अत्याचार, व्यभिचार, सामाजिक दमन, जातीय, विषमता आदि को दूर करने की अद्भूत क्षमता है। क्योंकि दलित-साहित्य वस्तु प्रधान साहित्य है। सहज, सरल, सपाट बयान से विचार और भाव को तुरंत उसी रूप में प्रस्तुत कर देना इसकी व्यापक विशेषता है। दलित-साहित्य में प्रतीक और अन्योक्ति के द्वारा अभिव्यक्ति अधिक चुभती हुई प्रतीत होती है। आर० डी० शास्त्री की यह कविता इसे स्पष्ट कर देती है -- अंधों का गाँव है, यहाँ आँख रखना पाप है। / विद्या हुई बंध्या यहाँ, ज्ञान को अभिशाप है।। / भौरों की भीड़ है लगी / परवाने सब पकड़े गए। / कागों का शोर बढ़ गया / पिक पर लगे पहरे गए।। / बोलना ही सत्य का, हो रहा अब पाप है। / अंधों का गाँव है, यहाँ आँख रखना पाप है।।

इस तरह उपर्युक्त तथ्यों के विवेचन से यह स्पष्ट है कि दलित-साहित्य में विद्रोह के संघर्षशील स्वर के कई चुभते स्वरूप दिखलाई पड़ते हैं जिनमें नक्सलवादी संगठनों तथा विभिन्न सेनाओं का गठन हुआ। उचित मजदूरी की आवाज बुलंद की गई, इज्जत-आबरू को बचाने के लिये हथियार उठाकर प्रतिकार किया गया। ब्राह्मणवादी व्यवस्था के प्रधान पंचवृक्ष जिनमें भाग्य-भगवान, आत्मा पुनर्जन्म और चमत्कार है, को मानववादी कुठारों से काटकर निस्तेज किया गया। वर्णवादी समाज व्यवस्था के विरोध में दलित साहित्य का स्वर बड़ा तीखा है। दलित-साहित्य ने संस्कृत के विभिन्न ग्रन्थों तथा मनुस्मृति आदि मनुवादी साहित्यों को बहिष्कार कर मानववादी मानवता को स्वीकार किया। एक तरह से दलित-साहित्य ने 90: के अधिकारों को जगाकर जनवादी साहित्य की परम्परा को आगे बढ़ाया। इसने दलित समाज की त्रासदी को शोषित, पीड़ित समाज की मौन व्यथा को भारत के सामने उजागर किया। पारम्परिक सामंती साहित्य की तुलना में दलित-साहित्य की भाषा बहुत खलबली मचा रही है। भाषा के वाग्जल में गिरफ्त एवं त्रस्त मानवता को बेनकाब किया है। दलित चेतना का दृष्टिकोण भाईचारे और समानता का दृष्टिकोण है। इसलिए दलित-साहित्य मनुष्यता के लिये संघर्ष कर रहा है। यह समय बतायेगा कि पाँच हजार वर्षों से अपने शोषण और उत्पीड़न के अमानवीय षड़यंत्र से मुक्त होकर सम्पूर्ण मानवता का समरस समाज कब बन पायेगा। वैसे यह सच है कि दलित-साहित्य के संघर्ष के तेवर और तीखेपन के सामने मानव को मानव नहीं माननेवालों की व्यवस्था मूक बनते जा रही है।

संपर्क: प्रतिकुलपति, बी.एन. मंडल विश्वविद्यालय, मधेपुरा, बिहार

कहानी

भोगी बना जोगड़ा

कृष्ण कुमार राय

लगभग छः माह तक यशोदा देवी के गर्भ में पला पहला भ्रूण सहसा नष्ट हो जाने और पुनः पाँच वर्ष के दीर्घ अंतराल के बाद उनके कोख से जनमे नवजात शिशु का सौरी में ही निधन हो जाने से आहत ठाकुर जीवन सिंह का दिल एकदम टूट चुका था। पत्नी यशोदा देवी तो इतनी ग़मगीन रहने लगीं कि उनकी दशा देखकर दूसरों का दिल भी पसीज उठता। अगले पाँच वर्षों तक जब उन्होंने फिर गर्भ धारण नहीं किया तो घर में मायूसी का मंज़र नज़र आने लगा। जीवन सिंह ने निराश होकर अब संतान की आस छोड़ दी थी। लेकिन तभी ऊपरवाले की कृपा से अचानक चमत्कार हुआ। यशोदा देवी एक बार पुनः गर्भवती हुई और नौ माह बाद एक स्वस्थ पुत्र को जन्म देकर न केवल घर की उदासी दूर कर दी बल्कि सभी को उल्लसित कर दिया। जीवन सिंह खुशी से झूम उठे। निपूती होने का कलंक मिट जाने से यशोदा देवी भी फुलकर कुप्पा हो गई। एक बार जो उनकी कोख खुली तो फिर क्या पूछना था। दो वर्ष बाद ही उन्हें दुबारा मातृत्व-लाभ प्राप्त हुआ और वह दूसरे पुत्र की माँ बन गई। गर्व से उनका मस्तक और ऊँचा हो गया। जीवन सिंह की उमंग तो देखते ही बनती थी। दिल खोलकर जशन बनाया और मुट्ठी खोलकर खर्च किया। अब तो एक ही चाह उनके मन में शेष रह गई थी कि यदि भविष्य में भगवान उन्हें तीसरी संतान का सुख देता है तो वह पुत्री के जन्म के रूप में हो। उनका मानना था कि जिस जीवन में कन्या-दान जैसे महादान का पुण्य न प्राप्त हुआ वह जीवन अधूरा रह जाता है।

दूसरे पुत्र के जन्म के बाद सात वर्ष की लंबी अवधि व्यतीत हो गई किन्तु जीवन सिंह के वंश में आगे कोई वृद्धि नहीं हुई। दोनों बेटे अजय और विजय अब धीरे-धीरे बड़े हो चले थे। तीसरी संतान के जन्म की सारी उम्मीदें धूमिल पड़ चुकी थीं। लेकिन ईश्वर बड़ा कारसाज़ है और उसकी लीला अपार है। संयोग से ठाकुर साहब का नसीब फिर जागा और ठकुराइन के पाँव भारी हो गये। जीवन सिंह ने इस बार पुत्री के जन्म के लिये तरह-तरह की मनौतियाँ मानीं और पूजा-पाठ का भी सहारा लिया, परन्तु जन्म और मृत्यु पर न तो मनुष्य का कोई अधिकार है और न होनहार को कोई टाल सकता है। नौ माह तक गर्भ ढोने के बाद जब येशोदा देवी ने एक बार फिर तीसरे पुत्र को जन्म दिया तो जीवन सिंह का सारा अरमान सीने में ही दफ़न हो गया और वह मन मसोस कर रह गये। इस बार उनके चेहरे पर खुशी की वह लहर नहीं दिखलाई पड़ी जो पहले दोनों पुत्रों के जन्म के बाद देखने को मिली थी। उन्होंने अपने निराश मन को यह समझाकर संतोष कर लिया कि उनके भाग्य में पुत्री का सुख नहीं लिखा है। यशोदा देवी वैसे तो मगन थीं, किन्तु इस बार बालक में एक नया चिह्न देखकर न जाने क्यों मन ही मन कुछ सशंकित भी थीं। तीसरा नतीजा यह हुआ कि जन्म के बाद से ही लोगों ने जो एक बार बच्चे को छांगुर कहना शुरू किया तो धीरे-धीरे यही संबोधन उसके साथ चिपकता गया और पाँच वर्ष बाद उस समय इसे स्थायित्व भी प्राप्त हो गया जब पाठशाला में प्रवेश के समय उसका नाम छांगुर सिंह लिखा दिया गया। फिर तो यही नाम धारण किये वह बड़ा हुआ और रो-धोकर बी.ए. तक की डिग्री भी हासिल की। पढ़ाई-लिखाई के प्रति वह कभी गंभीर नहीं रहा, किसी तरह तीन लकीरों के साथ दर्जे डाँकता रहा।

जीवन सिंह की गणना गाँव-जवार के बड़े कापूतकारों में होती थी। लगभग चालीस एकड़ कृषि-भूमि और बारी-बगीचे के स्वामी थे। समाज में खासी अच्छी मान-प्रतिष्ठा थी। खेती का काम बँटाई पर या नौकरों से कराते थे। उन्होंने खुद कभी नौकरी नहीं की, लेकिन बदलते जमाने को देखते हुए बेटों की शिक्षा पर पूरा ध्यान दिया। दोनों बड़े बेटे अजय और विजय काफी जहीन थे और पढ़ायी पूरी करने के बाद अच्छी सरकारी नौकरियों में लग चुके थे। उनकी शादियाँ भी हो चुकी थीं और अब तो वे एक-एक बेटों के बाप बनकर लड़के से बड़के बन चुके थे। संयोग से इस दूसरी पीढ़ी में भी अबतक किसी कन्या का जन्म नहीं हुआ था, लेकिन दरवाजे अभी बन्द नहीं हुए थे। भविष्य में पौत्री के जन्म की आस ठाकुर जीवन सिंह ने अभी छोड़ी न थी। उधर, छांगुर बी.ए. पास करने के बाद पढ़ायी छोड़कर घर बैठ गया था। जीवन सिंह उसे वकालत पढ़ाना चाहते थे, लेकिन पढ़ायी के नाम पर वह बिदक उठता। हार मानकर जीवन सिंह ने उससे कुछ कहना ही छोड़ दिया। संभ्रांत ठाकुर परिवार का ग्रेजुएट लड़का खेती-बारी का काम तो कर नहीं सकता था। बड़े भाइयों के बहुत समझाने पर उसने नौकरी के लिये कुछ जगह प्रार्थना-पत्र भेजे। कुछ चयन-परीक्षाओं में भी सम्मिलित होकर किस्मत आजमायी, किन्तु मन्द बुद्धि का होने के कारण कहीं सफलता हाथ न लगी। बड़े भाई कुछ लेन-देन के लिए भी तैयार थे, किन्तु माँग लाखों में होने के कारण कहीं बात नहीं बनी। समय के साथ नियम-कानून इतने बदल गये थे कि उच्च वर्ण वालों को नौकरी मिलना अब आसान नहीं रह गया था। इसी बीच जीवन सिंह का निधन भी हो गया।

इंसान की मृत्यु का ग़म तो समय के साथ धीरे-धीरे मिट जाता है, किन्तु किसी व्यक्ति के सहसा लापता हो जाने की पीड़ा सदैव सालती रहती है। छांगुर की गुमशुदगी की दुःखद घटना से आहत उनका परिवार अभी उबर नहीं पाया था कि अचानक एक दिन उसपर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा।

पिता की मृत्यु के बाद छांगुर पर कोई अंकुश नहीं रहा। निठल्लू की तरह सारा दिन इधर-उधर घूमता रहता। जल्दी ही कुछ लाखैरा छोकरों की कुसंगत में पड़कर कुराह पकड़ने लगा। सुबह घर से निकलता तो दोपहर में लौटता और खा-पीकर फिर निकलता तो रात को वापस आता। उसका इंतजार करते-करते

बूढ़ी यशोदा देवी की आँखें दुखने लगतीं। अजय और विजय अपनी-अपनी नौकरियों में इतने व्यस्त रहते थे कि छांगुर की गतिविधियों पर नजर रखने की उन्हें फुरसत न थी। यह सोचकर वे थोड़ा निश्चिन्त भी रहते थे कि घर में खाने का टोटा नहीं था। लेकिन थोड़े दिनों बाद जब उन्हें गाँव के लोगों से यह उलाहना मिलने गया कि उनका छोटा भाई गाँव की जवान लड़कियों के साथ छेड़-छाड़ करने लगा है तो उनके कान खड़े हुए। दोनों बड़े भाई सुसंस्कृत और व्यवहार-कुशल थे, आपस में काफी मेल-जोल और सामंजस्य भी था, किन्तु छांगुर न जाने कैसे एकदम विपरीत प्रकृति का निकला। उसकी करतूतों से गाँव में बड़े भाइयों की छवि भी धूमिल होने लगी। यशोदा देवी का यद्यपि घर में अब भी दबदबा था, लेकिन छांगुर उनकी भी एक न सुनता। सबसे छोटी संतान के प्रति अति मोह ने उन्हें बेबस बना रखा था। अंतत: अजय और विजय ने माँ से विचार-विमर्श करने के बाद यह निश्चय किया कि जितनी जल्दी हो सके छांगुर की शादी कर दी जाय। उनका विश्वास था कि विवाह के बंधन में बँध कर वह धीरे-धीरे रास्ते पर आ जाएगा। यदि दुर्भाग्य से उसे कोई काम-धंधा न भी मिला तो खेती-बारी से इतनी निकासी हो जाती है कि एक भाई के परिवार का गुजर-बसर घर बैठकर भी हो सकता है।

जब एक बार घर में छांगुर के विवाह की चर्चा छिड़ गई तो बात नाते-रिश्तेदारों के कानों तक भी जा पहुँची। संयोग से दो माह बाद ही विवाह का एक स्वीकार्य प्रस्ताव भी आ गया और एक निकट संबंधी के दबाव में छांगुर का घूमना-फिरना कम हुआ। उसका काफी समय अब घर की डयोढ़ी के भीतर व्यतीत होने लगा। विवाह के महीने भर बाद ही पत्नी के पैर भारी हो गये और साल भीतर छांगुर सिंह एक बिटिया का बाप बन गया। घर में एक कन्या का जन्म देखने के लिए ठाकुर जीवन सिंह जीवन भर तरसते रह गये और जब यह सुदिन आया तो उसे देखने के लिए वह जीवित नहीं रह गये थे।

पुत्री के जन्म के कुछ दिनों बाद परिस्थितियाँ फिर पलटने लगीं। पत्नी और पुत्री के मोह में जकड़ने के बजाय छांगुर न जाने क्यों धीरे-धीरे विमोह का शिकार बन चला। उसकी अनासक्ति बढ़ने लगी और उसने फिर घर के बाहर की राह पकड़नी शुरू कर दी। दिन-दिन भर घर से गायब रहने लगा। पत्नी में न तो इतना आकर्षण था और न गुर कि पति पर हावी हो पाती। वह तो बस अपनी बच्ची के लालन-पालन और प्यार-दुलार में ही मगन रहती। नतीजा यह हुआ कि छांगुर एक दिन सबेरे जो घर से निकला तो देर रात तक नहीं लौटा। दोनों बड़े भाई अजय और विजय परेशान हो गये। सारी रात भाई की खोज में भाग-दौड़ करते रहे, लेकिन छांगुर का कुछ पता नहीं चला। उसके जिगरी दोस्त भी उसके बारे में कुछ नहीं बता सके। एक दिन, दो दिन, चार दिन और धीरे-धीरे महीनों गुजर गये, लेकिन छांगुर के बारे में कोई सुराग न लगा। थाने में रपट लिखवाई गई, अखबारों में फोटो सहित गुमशुदगी की सूचना छपवाई गई, लेकिन सब बेकार साबित हुई। बूढ़ी यशोदा देवी के लिये तो यह सदमा प्राणघातक सिद्ध हुआ और वह चल बसीं।

कई माह गुजर गये। इस बीच छांगुर के श्वसुर दो बार आये और छांगुर के बड़े भाइयों पर अपनी एकमात्र पुत्री की बिदाई के लिये काफी दबाव डाला। वह चाहते थे कि जबतक छांगुर सिंह के बारे में कुछ जानकारी नहीं प्राप्त हो जाती या वह लौटकर वापस नहीं आ जाता, बेटी उनके साथ रहे लेकिन अजय और विजय दु:ख में उसका साथ छोड़ने को बिल्कुल तैयार न थे। खुद छांगुर की पत्नी ने भी पिता की इच्छा पर पानी फेरते हुए मायके में जाकर रहने से साफ इनकार कर दिया। उसने दृढ़तापूर्वक कहा कि उसे चाहे सारा जीवन विधवा के रूप में ही क्यों न व्यतीत करना पड़े वह इसी परिवार के साथ रहेगी। मायूस होकर उसके पिता बेटी को भाग्य भरोसे छोड़कर लौट गये। अजय और विजय ने अपने छोटे भाई के लापता होने के बाद से ही उसकी पत्नी और बेटी की तरफ विशेष ध्यान देना शुरू कर दिया था। वे नहीं चाहते थे कि छांगुर की अनुपस्थिति में उसकी दु:ख-दग्धा पत्नी घर में अपने को किसी प्रकार उपेक्षित या असहाय महसूस करे। धीरे-धीरे समय गुजरता गया और दस वर्ष की लंबी अवधि व्यतीत हो गई। छांगुर न तो घर लौटा और न उसके बारे कोई सूचना मिली। तरह-तरह की आशंकाओं और संभावनाओं में डूबते-उतराते घर के लोग परिस्थितियों से समझौता कर खामोश बैठे चुके थे।

इंसान की मृत्यु का ग़म तो समय के साथ धीरे-धीरे मिट जाता है, किन्तु किसी व्यक्ति के सहसा लापता हो जाने की पीड़ा सदैव सालती रहती है। छांगुर की गुमशुदगी की दु:खद घटना से आहत उनका परिवार अभी उबर नहीं पाया था कि अचानक एक दिन उसपर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा। अजय और विजय एक समारोह में सम्मिलत होने के लिये अपने मामा के गाँव गये हुए थे। अगले दिन सुबह वापसी के लिये वे एक किराये की जीप में सवार हुए। राजमार्ग पर विपरीत दिशा से तेज रफ्तार के साथ आ रही एक असंतुलित ट्रक से जीप की आमने-सामने की जोरदार टक्कर हो गई। जीप के परखचे उड़ गये और वह पलट कर एक गड्ढे में जा गिरी। उसपर सवार दोनों भाई और तीन अन्य व्यक्ति दुर्घटनास्थल पर ही मारे गये। जब इस हादसे की सूचना गाँव में पहुँची तो वहाँ कोहराम मच गया। बीसों व्यक्ति तत्काल स्कूटरों और मोटर साइकिलों से दुर्घटनास्थल की तरफ रवाना हो गये। मौके पर पहुँचकर लोगों ने देखा कि स्थानीय क्रुद्ध जन-समुदाय ने पहले ही ट्रक में आग लगा दी थी और वह अभी तक धू-धू कर जल रही थी। बुरी तरह क्षत-विक्षत जीप गड्ढे में पलटी पड़ी अपने दुर्भाग्य पर रो रही थी। थोड़ी देर पहले थाना पुलिस वहां पहुंचकर सभी लाशों को अपने साथ ले जा चुकी थी। ट्रक ड्राइवर और खलासी दुर्घटना के बाद के बाद ही जान बचाकर भाग निकले थे।

अगले दिन पोस्ट-मार्टम के बाद जब अजय और विजय की लाशें गाँव पहुँचीं तो वहां का दिल दहला देने वाला दृश्य देखा नहीं जाता था। एक ही दिन में गाँव का सबसे प्रतिष्ठित परिवार अचानक अनाथ हो गया था। उस उजड़े हुए आशियाने में अब केवल दो अधेड़ विधवाएं, उनके दो-दो नाबालिग बेटे, विधवा सदृश जीवन व्यतीत कर रही लापता छांगुर सिंह की पत्नी और उसकी बिटिया रह गई थी जिनका कोई सरपरस्त नहीं बचा था। गाँव वालों की दया और कृपा का मुहताज बनकर जीने के सिवाय अब उनके सामने कोई रास्ता नहीं रह गया था।

अजय और विजय की दर्दनाक मौत की घटना के साल भर बाद एक दिन गेरूआ वस्त्रधारी एक जोगी सारंगी बजाता हुआ गाँव में भिक्षाटन के लिये आया। जोगी बाबा के दाहिने हाथ की कानी उँगली के बाद उसी तरह की एक छठी उँगली थी जैसी लापता छांगुर सिंह के दाहिने हाथ में थी। कद-काठी और रंग-रूप में भी कुछ समानता की झलक मिलती थी। गाँव के लोगों की निगाह जब उस जोगी पर पड़ी तो सभी ने एक स्वर से कहना शुरू किया कि यह तो लापता छांगुर सिंह ही जोगी का बाना धारण किये गाँव में आया है। जंगल में लगी आग की तरह यह बात देखते ही देखते गाँव भर में फैल गई। मर्दों और औरतों का हुजूम वहां उमड़ पड़ा और सबने उत्सुकतावश जोगी बाबा को घेर लिया। स्वर्गीय जीवन सिंह की तीनों बहुएं भी वहाँ आ पहुँची। सभी ने जोगी के दाहिने हाथ में छ: उँगलियाँ और कुछ मिलती-जुलती मुखाकृति देखकर यह मान लिया कि जोगी के रूप में छांगुर सिंह ही अपने गाँव वापस आया है। छांगुर सिंह की पत्नी को खामोश हो जाना पड़ा। उधर जोगी बार-बार यह कहता रहा कि वह न तो छांगुर सिंह है और न इस गाँव से उसका कोई नाता है, लेकिन गाँव वालों ने उसकी एक न सुनी। जबरन उसके गेरूआ वस्त्र उतरवा कर फूँक डाले और उसकी सारंगी के तार-तार कर कुँए में डाल दिया। उसे नहला-धुलाकर नये वस्त्र पहनाये गये और जोगी से भोगी बनने को मजबूर कर दिया गया। जब जोगी ने देखा कि अब किसी तरह छुटकारा मिलने वाला नहीं और उसके जोगी होने के सारे साक्ष्य नष्ट किये जा चुके हैं तो उसकी भी भोग-तृष्णा जाग उठी। लोगों की मति-भ्रम का लाभ उठाकर आत्म-समर्पण का मार्ग अपनाने के लिये उसकी अंतरात्मा ने भी प्रेरित किया। मन-ही-मन वह मुदित था कि ढोंग रचकर द्वार-द्वार भटकने और भिक्षा माँगकर पेट पालने से उसे अनायास ही छुटकारा मिलने जा रहा है। उसने यह भी सोचा कि जब भगवान बिना माँगे ही उसे छप्पर फाड़कर सारी सुख-सुविधा और संपत् देने पर आमादा हैं तो हठात् उसे ठुकरा देना मूर्खता होगी। उसी दिन से उसे ठाकुर जीवन सिंह के लापता तीसरे पुत्र छांगुर सिंह के रूप में मान्यता मिल गई और उनके उजड़े घर को फिर से बसाने की जिम्मेदारी उसे सौंप दी गई। सबके दबाव के चलते छांगुर सिंह की पत्नी को भी दबे मन से जोगी से भोगी बनने को विवश किये गये उस अनजान व्यक्ति को अपने लापता पति के रूप में स्वीकार करना पड़ा। अजय सिंह और विजय सिंह की विधवाओं ने भी उसे अपना देवर छांगुर सिंह मानकर उसकी खूब आव-भगत शुरू कर दी। बेटों को बतलाया गया कि बारह वर्ष के अज्ञात-वास के बाद उनके चाचा लौटकर घर आये हैं। होश संभालने के बाद अपने बिछुड़े हुए बाप को पहली बार देखकर छांगुर सिंह की बेटी खुशी से फुले नहीं समा रही थी।

भरपुर मान-सम्मान से गदगद जोगी से भोगी बने उस व्यक्ति को घर-गृहस्थी का यह सुखी जीवन रास आने लगा और इस हरि इच्छा मानकर वह मन ही मन मगन था। बिन चाहे मिल रहा यौन-सुख और बिन मांगे मिल रही महिमा-गरिमा ने उसकी किस्मत तो बदल ही डाली थी, उसे उन्मादा भी बना दिया। चन्द दिनों में ही घर में उसका दबदबा कायम हो गया और गाँव भर में तूती बोलने लगी। खेती-बारी से जुड़े सेवकों पर उसने धौंस जमाना भी शुरू कर दिया। उस उजड़े घर की रौनक एक बार फिर लौटती देखकर गाँववालों ने भी संतोष की साँस ली।

भोगी बने उस सयाने जोगी को मौज-मस्ती करते अभी दो माह भी नहीं बीते थे कि ऐन होली के दिन गाँव में अचानक बवंडर आ गया। एक जमाने से गाँव से लापता छांगुर सिंह न जाने कहाँ से घूमता-फिरता एकदम बदले हुए भद्र पुरुष के रूप में अकस्मात गाँव में आ धमका। रंग-गुलाल से बदरंग हुए अपने बिछुड़े ग्राम-बंधुओं को अभी वह ठीक से पहचान भी नहीं पाया था कि तभी कुछ लोगों ने उसे पहली ही नजर में चीन्ह कर गले से लगा लिया। देखते ही देखते चारों तरफ खुशी की लहर दौड़ गई और मिनटों में यह शुभ समाचार उसके घर तक जा पहुँचा। सुनते ही उसकी हर्षाकुल पत्नी भागती हुई वहां आ पहुँची। अपने वास्तविक पति को सामने खड़ा देखते ही वह भाव-विह्वल होकर उनके चरणों पर गिर पड़ी। उसके अविरल रूदन से होली का रंग फीका पड़ गया और कुछ समय के लिये वातावरण में करुणा का रस घुल गया। यह दृश्य देखकर यह अनुमान लगाना कठिन था कि उस दु:खिनी की आँखों से निरंतर ढुलक रहे आँसू प्रायश्चित और पश्चाताप के सूचक थे अथवा आसक्ति और अनुराग के।

असली छांगुर सिंह को अपने बीच पाकर गाँव वालों को अपनी पिछली भयंकर भूल का एहसास हुआ और उन्हें सहसा जोगी की सुध आई। भाँग छानकर वह दुर्जन भी नशे में धुत्त होकर होली के हुड़दंगियों के साथ 'रंग बरसे भींगी चुनवाली' की धुन पर मस्ती के साथ थिरक रहा था। वैसे तो होली के दिन सभी एक दूसरे को गले लगाते हैं, किन्तु ज्योंही उसकी नजर एक अपरिचित आगन्तुक के पैरों से लिपटकर बिलख रही उस स्त्री पर पड़ी जो दो माह से उसकी भोग्या बनी हुई थी, उसके होश फाख्ता हो गये और पैरों तले से धरती खिसक गई। असलियत को भाँपने में उसे तनिक भी देर न लगी। आसन्न संकट की कल्पना कर उसका नशा पलभर में उड़नछू हो गया। लोगों की नजर बचाकर फौरन गाँव से भाग निकलने में ही उसने अपनी खैर समझी। अभी वह अवसर की ताक में ही था कि इसी बीच गाँव के आक्रोशित जन-समुदाय ने झपटकर उसे दबोच लिया और उसकी अंधाधुंध धुनाई शुरू कर दी। भोगी बना वह जोगड़ा जब पीठ बचाता तो सिर पर जूते बरसने लगते और सिर बचाने की जुगत करता तो पीठ पर लात-धूंसों की झड़ी लग जाती। उसके मुंह से न आह निकल पा रही थी और न कराह। एकाएक यह बदला हुआ दृश्य देखकर छांगुर सिंह घबरा गया। उसे माजरा कुछ समझ में नहीं आ रहा था। भौचक्का सा खड़ा वह सोचता रहा कि उसके गाँव पहुंचते ही आखिर यह घमासान क्यों छिड़ गया। एक अनजान व्यक्ति को इस तरह बेरहमी के साथ पिटते और दुर्गति का शिकार होते देख वह हैरान था। इतने वर्षों बाद उसकी घर वापसी पर लोग खुशियां मनाने और उसका स्वागत-सत्कार करने के बजाय उस रंगे सियार की ताबड़तोड़ कुटम्मस करने के लिये क्यों बेताब थे यह राज अभी तक उसके लिये रहस्य बना हुआ था।

संपर्क: एस.2/5 ए, अर्दली बाजार,
अधिकारी हॉस्टल के समीप,
वाराणसी (उ.प्र.)-221002

कहानी (ब्रजभाषा)

छोरी कौ गाम

✍ डॉ० धर्मेन्द्रनाथ अमन

'अजी सुनो! का आज बड़ी परिकम्मा के मेला माँ नन्द गाम कूँ चूड़ बेचबे नायें जाओगे।'

'अरी भागवान चौं जाउंगो। इन तीज-त्यौहार तौ हमारी रोजी-रोटी चलै है। दे है ऊपर बारो और नाम होवै है तीज-त्यौहारन कौ। नैंक देखियो तौ मेरी साइकिल के पहियन में हवा है कैं नाएं?

'आज तो तुमें उठिबे में बड़ी उबेर है गई''

'नायँरी, आज सबेरे मज्जिद में फजर की नमाज पढ़ि आयो, पर कात कूँ चूरिन कूँ डिब्बान में भरबे और लड़ी बनाये कैं गठरी बाँधिबे के कारण अबेर तें सोयौ, जाई से आज मेरी नींद पूरी नायं भई। मज्जिद तैं लैटिं कै खटिया पै परिगयौ सो आँख लग गई।'

'जो भयौ सो भयौ अबेर मति करौ। जल्दी तें मौंह, हाथ धोय कैं कलेऊ करलेयौ और हाँ ने बताओ धौरंपी में खाना खायबे घर कूँ आऔगे कैं रोटी साथ ई में बाँधि दऊं।'

अरी तेरी मति मारी गई हैका? कमाई के बखत घर कौन लौटेगौ। चूड़ी बेचबे से सबरौ दिन निकल जावैगौ, खायबे पीबे कूँ टैम मिलैगौ के नायं ते तो ऊपर बारौ ही जानै। अब तू घनी बात मती बनाय। मोयै अबेर है 'जावैगी जल्दी कर जल्दी।'

हाडडये लेयो। आपई बात बनाय हैं और दोस मो पे लगाये रए हैं कि मैं देर करा रइ हूँ। यह कहकर मुस्करा दी मनिहारिन नफीसन और मेले में चूड़ियाँ बेचने के लिए गठरी, साइकिल का मुआइना करके तैयार होने लगे ज़हूर मियाँ।

राधा माई की नगरी बरसाने के क्टरा मोहल्ले में बसे इस मुसलमान परिवार का पुश्तैनी धन्धा था चूड़ियाँ बेचना। रंगीली गली बाजार के निकट एक छोटी सी दुकान भी थी जिस पर बड़े मियाँ (ज़हूर के पिता) बैठे हुक्का गुड़गुड़ाया करते थे। मेले-ठेले, निकट के गाँवों और कास्बों के हाट-पैंठ में चूड़ियाँ बेचने का काम ज़हूर मियाँ के जिम्मे था।

ज़हूर मियाँ का बचपन मोहल्ले में बीता था। थोड़ा बड़ा होने पर उसे सरकारी प्राथमिक पाठशाला में पढ़ने भेजा गया जहाँ पण्डित किशन स्वरूप पढ़ाने से अधिक डण्डे के उपयोग में विश्वास रखते थे। परिणाम यह हुआ कि विद्यालय न जाकर बालक ज़हूर अपने मित्रों के साथ कभी राधा कुण्ड पर बैठक जमाता, कुण्ड में डुबकी लगाता, तैरता और कभी गेहवर वन में घूमता और गूल्ली डण्डा खेलता। शाम को श्री जी (राधा जी) के मन्दिर की सीढ़ियों पर अन्य बालकों के साथ डेरा जमाता और आते-जाते भक्तों से पैसे और प्रसाद पा जाता।

घर वालों ने ज़हूर का नाम स्कूल से कटवा लिया। मनिहारिन चाची (ज़हूर की माँ जो पूरी बस्ती में चाची के नाम से जानी जाती थी। इस नन्हे बालक को साथ लेकर घरों पर चूड़ियाँ बेचने जाती थी। सिर पर चूड़ियाँ का टोकरा होता और चाची के साथ ही ज़हूर। चाची तो घरों पर जाते ही लड़कियों और औरतों से घिर जाती। स्त्रियाँ टोकरे में रखी सुनेहरी, लाल, नीली, हरी चटक रंग की चूड़ियों को पसन्द करती, मुस्कराहटों, चुहलों के साथ ही मोल-भाव हिसाब किताब की बात भी चलती रहती। बड़ी बूढ़ियाँ मोहल्लों का हाल चाल जान पहचान के परिवारों की खैर-खबर जानने को उत्सुक रहती थी। बालक ज़हूर को बड़ों की अशीष के साथ कुछ न कुछ खाने को भी मिल जाता था। कभी-कभी तो दो चार पैसे भी जेब में डाल दिये जाते थे।

समय गुजरता गया। नन्हा ज़हूर अब बीवी-बच्चों वाला हो गया था मगर बचपन की यादें कौन भूल पाया है। श्री जी के मन्दिर का प्रसाद, राम लीला में मनसुखा तथा अन्य ग्वाला-बालों का नरवट पनए कृष्ण जी की माखन चोरी, बाँके बिहारी और राधा जी की फूलों की होली के दृश्यों को देखने का चाव अब भी मन में था।

बालपन में सावन के झूलों और जन्माष्टमी की झाँकियों को देखने में पूरा-पूरा दिन बीत जाता था। घर पर डॉट भी खानी पड़ती थी पर भगवान द्वारा दिये गये दोनों कानों का उपयोग इन्हीं अवसरों पर किया जाता था। बिना डाँट-फटकार का बचपन जैसे बिना नमक की दाल। होली के रंगीन वातावरण में तो बच्चे घर पर कहाँ रूक पाते है। ऐसे मौको पर खड़े भी उत्सव देखते जान-पहचान वालों से मुलाकात भी हो जाती। बरसाने की लुटमान होली जगत प्रसिद्ध है। उस दिन पूरी बस्ती में खूब भीड़ होती है बाजारों की रौनक, दुकानों की सजावट देखने योग्य होती है। (हिन्दू परिवारों में ही नहीं अपितु बरसाने मे बसे मुस्लिम परिवारों में भी) अन्य स्थानों के सगे-संबंधी, मित्र और परिचित उन दिनों आ जाते थे। नन्द गाँव के हुरियारों के रसियों की रंग, बोली-ठोली का आनन्द और जवबा में प्रेमरस सिंचिंत गाली और चूड़ियों की खनक के साथ लाठी के प्रहार की छटक) आखिर बरसाने की होली की अपनी ही शाम है।

ज़हूर मियाँ चूड़ियों का गट्ठर अपनी साईकिल पर लादे बड़ी परिकम्मा के मेले-स्थल की ओर जा रहे थे। रास्ते में कोई जान-पहचान वाला मिलता तो वाक्यों का आदान-प्रदान भी हो जाता वर्ना परिचितों से यथायोग्य अभिवादन होता 'मिसिर चाचा राधे-राधे', चौधरी साहब परननाम, मौलवी साहब सलाम वालेकुम, थानेदार साहब हजूर। जिससे जितनी मेल-मुलाकात होती या मिलने वाले का जितना ऊंचा रूतबा होता सलाम भी उसी प्रकार का होता था बड़ी परिक्रमा (बड़ी परिक्रमा) मे मेले का रूप ही पहले से ही अन्य मेलों से अलग रहा है। यात्रियों की छोटी-बड़ी टोलियाँ आती रहतीऔर दो-तीन दिन रूक कर क्षेत्रीय दर्शनीय स्थलों को नमन करके अपना जीवन सुफल बनाती। नन्द गाँव भगवान श्रीकृष्ण की बाललीला स्थली, बरसाना श्री राधे जी का जन्म स्थान, राधाकुण्ड, गहवरवन की परिक्रमा, राजस्थानी मन्दिर श्री जी का भवय मंदिर, आदि कितने ही पवित्र स्थानों के दर्शन करके लोग लोक-परलोक का पुण्य अर्जित करते हैं और वापस आकर रात को अपने-अपने शिविरों में विश्राम करते हैं। यह मेला सप्ताह-डेढ़ सप्ताह चलता है। दूर-दूर तक फैला मैदान जिसमें रौनक ही रौनक होती। कहीं डाँडिया गरबा का प्रदर्शन, कहीं भजन मण्डिलयाँ अपना रंग जमाती, खेल तमाशे, झूले, खिलौनों, चित्रों, मूर्तियाँ खाने पीने की अनेक दुकानों के बीच चूड़िया सजाये एक ठिये पर बैठते ज़हूर मियाँ, सुन्दर, चमकती-चूड़ियाँ अपने लिए ग्राहक जमा कर ही लेती थी। रात को रंग-बिरंगे प्रकाश में चहल-पहल और बढ़ जाती। चूड़ियाँ और खिल उठती।

ज़हूर मियाँ माल बेचना जानते थे। ग्राहकों की मन पसंद बातें करते मोल-भाव में कुछ दबना भी पड़ता तो भी किसी को खाली हाथ वापस जाने नहीं देते थे। 'अरी अम्माँ रोज-रोज कौन आवैगो, जे तीरथ-यात्रा की पवित्र निसानी है। घर

की बहू-बेटियन कूँ असीम के साथ पहनाया। दीयो और फिर इन चूरिन कौ कमाल देख लीजौ। सब भौतई खुश है जावैंनी। किसी युवती से कहते 'अरी बहना इन चूरिन में राधे रानी और नटवर कन्हैया जी कौ पवित्र प्रेम बसौ भयौ है। लै जा बहना तेरौ सुहाग सदा बनौ रहै। छोटी बालिका दुलार से कहते 'लाली तेरी कलाइयन में तो जे सुनहरी और लाल हरी चूरियन की निराली शोभा है। मेरी ही निरपा ते हम यहाँ बैठे है।। राधे रानी के बाल रूप के दर्शन करि कैं हम तौ धन्य है गया'

मेले में ज़हूर मियाँ की दुकान के निकट ही दिल्ली से आये एक व्यापारी की दुकान थी। एक दिन उसने मज़ाक ही मज़ाक में कहा 'ओ चूड़ी वाले तेरा व्यापार करने ढंग बढ़िया है। क्या गुरू अपनाया है मुसलमान होकर भी राधा और कृष्ण का नाम लेकर अपना माल बेच लेता है।'

ज़हूर मियाँ के चेहरे पर कई रंग आये-गये परन्तु वह एक फीकी मुस्काराहट के साथ मौन रहे। जवाब दिएया निकट की पान की दुकान वाले रास बिहारी ने जो ज़हूर मियाँ के बचपन का साथी और बरसाने का निवासी थी 'ओ भइया हौ तौ तुम दिल्ली वारे पर तुम्हारे पास दिल तो हत नाँय है। तुम तौ केवल हिन्दू-मुसलमान ही देखते हौ वाके आगे नायें। तुमैं पतो है कि ज़हूर भइया बरसाने में जन्मे और पले-बढ़े हैं। इनके मन में राधा जी के प्रति प्रेम और श्रद्धा चौं न होवे जी इनके एक ही बेटी है वाकौ नाम इन्ने ने बड़े प्रेम ते राधा राखौ है।

'राधा' दिल्ली के व्यापारी ने आश्चर्य से दोहराया।

अब ज़हूर मियाँ बोले 'देखौ भइया हिन्दू होएं चाएं मुसलमान सब अपई अपई जगह अपए-अपए विश्वास के साथ ठीकई हैं। हमारे पैगम्बर साहब ने जो संदेश हमकू दियौ और रास्ता दिखायौ वापै तो हमें चलनौई चाहियें। हमारी पवित्र पुस्तक कुरान में भी जेही बतायो गयौ है। ईश्वर एक है जिसने र देश कर कौम में सूधौ रस्ता दिखाय वे और सुधार करिबे के लिए नबी भेजे हैं। तौ जे बताओ हम एक ईश्वर कूँ पूजकर एक पैगम्बर कूँ मानकर भी दूसरे बुज़ुर्गन कौ आदर मान चौं नायं कर सकैं। कहाँ लिखौ भयौ है कि राधा जी कौ सम्मान, न करौ या अपनी बिटिया कौ नाम 'राधा' मत धरौ। ठीक है, मैं हूँ एक मुसलमान हूँ रोज नमाज़ पढ़ूँ हूँ मज्जिद में जायौ करू सिबाये अल्लाह के और किसी खुदा नाइ मानतो।

पर मैंने अपई छोरी का नाम राधा रखदियौ तौ का हुआ हम तौ पीढ़िन ते बरसाने गाम में निवास करि रहे है। आयते-जायते रोजीना श्री जी के मन्दिर कूँ देखे करै हैं। तीज-त्यौहारन कौ आनन्द लेय हैं। बिना राधाजी के बरसाने में कदम धरौ ऐ। ज़हूर मियाँ भावुक हो चले थे सुनो दिल्ली वारे लाला तुमें हमाए गाम के रीत-रिवाज, याँ के माहौल और आपस के संबंधन की जानकारी नायं बस तुम्हारे मगण में तो एकई बात बैठो है हिन्दू और मुसलमान। हम सबसे पहले तौ इन्सान हैं और कोई भी समाज होव जो बिना प्रेम और आपसी भाईचारे के टिक नायं सकै है। अब कभी बरसाने आओ तौ पीरी पोखर के पास गुलाब जो राधा जी के एक मुसलमान भक्त थे, सखी ककी समाधि के दरसन करियों तबई जान पाओगे कैं सबते बड़ी रिस्तो तो प्रेम कौ होय करै है। आज हों चकसौली बरसाना, नगरिया, हाथिया कितने ई ग्रामन की मुसलमान मेव बयैरबानी, धौताएं श्री जी के मन्दिर में मंगला आरती के दरसन करिबे कूं आयेबे करे हैं। मुसलमान होरी, रसिया मजो लेकैं गावे हैं। रास लीला और लठ्ठमार होली कौ दर्स्य बड़ चाव से देखे करैं हैं। ओ भइया ! रास बिहारी, नैंक दिल्ली वारे इन साहब कूँ भात बारौ किस्सा सुइयो तौ।

रास बिहारी ने दुकान पर आये ग्राहक को पान का बीड़ा और सिग्रेट देकर विदा किया और गला खखकर बोला 'भौत दिनां पहलें की बात है एक ब्राहमजी की छोरी कौ ब्याह हतौ सो ब्राहमणी अपऐ भइया के याँ भात न्यौतबे कूँ गई पर वा के भाई-भौजाई ने वाकूँ मनै कर दीनी। भौजाईश ने वाकूँ खूब जली-कटी सुनाई। अब वो बिचारी कहा करती, कहाँ जाती। बिचारी रास्ते में बैठी-बैठी रोयबे लगी तबई वा रास्ता ते कछू मुसलमान मेव गुज़रे। बिन नैं रोतो भई ब्राहमणी देखी तौ पूछिबे लगे अरली बहना कहा बता ऐ ऐसे चौं रोय रही है। असल बात सुनिये के पश्चात एक मेव ने ब्रहमणी कूं तस्ल्ली दई और कहिबे लगौ ऐंरी तू चिन्ता चौं करे है। एक भाई नैं मना कर दियौ तो का भयौ। मैं हूं तौं तेरे भाई समान हूँ। चल घर जा और खुसी-खुसी सबरे काज कर। हम तेरे घर भात लेके आवैंगे और देखियो सबरे गाम कूँ न्यौता भेज दियो। वो मेव भाव लैकें वा ब्राहमणी के घर गयौ। ऐसौ अनोखौ भात पहरायौ कि बरसाने वारे सब लोग भौंचक रह गये। बहन के परिवार कूं तो पहरायौ तो पहरायौ पर भात में आयबे सब लोगन कूं उननै एक-एक चांदी कौ सिक्का भेंट कियौ। याकी चर्चा चारों ओर फैली गई। कहाँ मुसलमान मेव भइया बन्यौ और ब्राहमणी बहन। याँ धरम की बात कह है जे तौ भइया दिल की बात होय करै है। कौन जाने भगवान की कब किरपा हो जाय।

ज़हूर मियाँ ने बातों के क्रम को आगे बढ़ाया 'लाला जी धरम निभायबे की मिसाल तौ ये बरसाने वारेन नें कायम कर रखी है। पिछले सैंकड़ों न बरस त बरसाने के काह जा धरम वारे ने अपने छोरा कौ व्याह नन्दगाम की छोरी ते नाँय कियौ। राधा जी के संबंध कूँ ध्यान में राखि के बरसाने वारे कन्हैया के गाम वारेन बेटी कूँ अपए घर की बहू बनाय कै नाँय लावें। या परम्परा कूँ आज तक हिन्दू और मुसलमाना दोनों निभाय रहे हैं।

रास बिहारी पनवाड़ी ने कहा 'ज़हूर तौ मरे बालपन कौ साथी है। धरमते मुसलमान है फिर भी जब नन्दगाम चूरी बेचबे जावै है तौ चाहे कैसी भयंकर गर्मी होय, लू चल रही होये धरती और आसमान तप रहे होय इन्हें तो नन्दगाम की गलियन में चूरिन की गठरी लाद के चक्कर लगानौ है। पसीने ते लथपथ है जायेंगे घाम में प्यास के मारे चाहे बुरौ हाल है जाय पर ते का मजाल कैं नन्दगाँव के काहू घर-द्वार या बाजार में वहाँ कौ पानी पीयलें। याही ते अपए संग बरसाते ते बोतल में पानी भर कें लावैं है।

अपनी दुकान से उतरकर रास बिहारी ज़हूर मियाँ के हिये पर आकर चूड़ियों की गठरी के पीछे धरी बोतल की ओर इशारा करके बोले 'देखो आज हू बोतल में बरसाने ते पानी लायौ है मेरौ मित्र, आखिर नन्दगाम के मेले मैं यहाँ कै पानी कैसें पीवैगो।

दिल्ली के व्यापारी के मुँह से अनायास ही निकल पड़ा 'ऐसा क्यों'

जवाब दिया ज़हूर मियाँ ने 'हर बरसाने वाले नन्दगाम कौ पानी कैसे पी सकैं हैं। राधा भाई हमारे गाँव की बेटी थी। नन्दगाम के कृष्ण से उनको पवित्र संबंध सभी जानते हैं या ई रिस्ते के कारण हम नन्दगाम को पानी कैसे पी लें आखिर है तो बेटी के रिस्ते गाम।

दिल्ली का व्यापारी अवाक् रह गया और मानवीय संबंधों के मर्म में डूबकर बरसाने के इस मुसलमान चूड़ी वाले को श्रद्धा से देखता रहा।

संपर्क: बी-139, पॉकेट-बी, मयूर विहार, फेज-2, दिल्ली-110091

काव्य-कुँज

घर: दो अनुभूतियाँ

नचिकेता

एक

यह घर
जिससे होना अलग
बहुत होता मुश्किल

घर, जिसमें
खुशबू है प्यार भरी अँगड़ाई की
छूअन टमकते जख्मो की
दुखहरण दवाई की
आने से
जिस जगह सहमते
अपराधी-कातिल

घर के भीतर
गूँज रही उजली किलकारी है
मह-मह महक रही मीठे
सपनों महक रही मीठे
सपनों की क्यारी है
जहाँ सरस गीतों के पँखखोल
उड़ते हारिल

घर होता है
सच्ची परिभाषा आजादी की
लामबंद हुंकार मुक्ति की
सही मुनादी की
घर ही है पहचान
हुआ क्या
जीवन में हासिल।

दो

घर के अन्दर ही है
घर का पता-ठिकाना

पूरी धरती घर है
इस घर में जीवन है
आँखों में सपने
सपनों में स्पन्दन है
होंठों पर है
आदिम राग-भरा अफसाना

जिसमें आते ही
होती चिन्ता छू-मंतर
जिसकी साँ-साँस में
घड़क रहा मनवंतर
दिन में रहों जहाँ भी
साँझ-ढले घर आना

इसकी स्निग्ध हँसी
दुनिया भर की कविता है
यह सुख का उल्लास
दुखों के लिए चिता है
बहुत कठिन है
इस घर की पहचान बचाना

संपर्क : पथ सं॰-1, आजाद नगर, कंकड़बाग, पटना-800020

गीत

जिन हाथों ने रचे घरौंदे

डॉ. देवेन्द्र आर्य

जितने फूल चुने थे मैंने
इस जीवन के वन-मधुवन से,
कुछ कुचले आपाधापी में
कुछ अपनों के अपनेपन में।

गिरवी रख कर मन का गहना
कुछ उधार की लीं सुविधाएं,
वर्तमान को मना-मना कर
कुछ पालीं कल की आशाएं।

खून-पसीना बहा-बहाकर
जैसा जो कुछ बुना, सपन था,
लेकिन बौनों की नगरी में
कितना बौना सबका मन था।

जिस चिड़िया ने बुना घौंसला
कुछ तिनके चुन श्रम-उपवन से
कुछ तिनके-पर उड़े हवा में
कुछ अपनों के अपनेपन में।

इतना बड़ा शहर है, लेकिन
मेरी कुछ पहचान नहीं है,
मंजिल से पहले जितनी थी
मन की भटकन वहीं कहीं है।

मुझे पता तो है दुनिया में
एकाकीपन का पहरा है,
फिर भी सतत प्रतीक्षा में मन
बार-बार चल कर ठहरा है।

जिन हाथों ने रचे घरौंदे
खुशियां ले भोले बचपन से,
कुछ फूटे वे कुटिल लहर में
कुछ अपनों के अपनेपन में।

संपर्क: वाणीसदन, बी-90, सूर्यनगर, गाजियाबाद-201011

जगन्नाथ 'विश्व' की दो गजलें

इतिहास में नया

नक्षत्र लो उदित हुआ आकाश में नया
इक पृष्ठ और जुड़ गया इतिहास में नया

हिंसा के बवंडर ने बुझाया चिराग तो
हमने दिया जला दिया आवास में नया

जिसको पिलाया दूध उसी नाग ने डसा
विष दंश दे गया कोई विश्वास में नया

बारूद से जली है एकता-अखण्डता
आतंक और बढ़ गया संत्रास में नया

अब डगमगायेगी नहीं ये नाव ज्वार में
सौभाग्य से केवट खड़ा है पास में नया

गंगाजल का रूप

संकल्प ही सुनहरे नये कल का रूप है
सत्कर्म की सृजन नये मंगल का रूप है

मेहनत तो रंग लाती है चट्टान तोड़िए
पावन पसीना ही तो गंगाजल का रूप है

बढ़ते ही रहिए रात दिन प्रतिज्ञा ठानकर
प्रत्येक चरण चिन्ह ही महल का रूप है

जिसने भी चुभन को सहा वही महक गया
दल-दल में मुस्कराए जो कमल का रूप है

दर्द का उपचार है खुशियाँ बिखेरता
सिखलाए प्रीत प्यार वो गजल का रूप है

संपर्क: 'मनोबल' 25, एम. आई. जी. हनुमान नगर, नागदा जंक्शन (म. प्र.)

काव्य-कुंज

अब गांधी के देश में

✍ राजभवन सिंह

सत्य-अहिंसा तोड़ चुकी दम अब गांधी के देश में।
हिंसा और असत्य हैं नही कम अब गांधी के देश में।।

'रघुपति राघव राजा राम' अब न किसी को भाते हैं।
'जय श्रीराम' का नारा हरदम अब गांधी के देश में।।

'पतितपावन राम नहीं अब, कौन उठाए पतितों को।
दलितों की हत्या है निर्मम अब गांधी के देश में।।

'ईश्वर-अल्ला तेरे नाम' भूल चुके हैं लोग सभी।
घुम रहा रावण ताज़ादम अब गांधी के देश में।।

'हरिजन जन तो तेने कहिए' अब व्यर्थ ही लगता है।
दुर्जन हुए हैं क्यों सक्षम अब गांधी के देश में।।

अबलाओं का करुण क्रंदन अब न किसी को छूता है।
शिशुओं हत्या पर मातम अब गांधी के देश में।।

हत्या-लूट बलात्कार अब दिन दहाड़े होते हैं।
न्याय-धर्म सब तोड़ चुके दम अब गांधी के देश में।।

कितनी बात बनाएं अब हम एक वाक्य में सुन लें सब।
गोड् का फहराये परचम अब गांधी के देश में।।

संपर्क: पोस्टल पार्क, बुद्ध नगर,
पथ-सं.-2, पटना-1

नर-संहार

✍ सतीश प्रसाद सिन्हा

नर करता नर का संहार
कौन पिलाता
विष का प्याला
स्वार्थ-द्वेष का
दूषित हाला
स्नेह लूटकर
जन-मानस का
कौन धराता
हाथों को हथियार।
मन में आग
लगाता कौन
गांव-घरों को
कौन जलाता
जली लाश के
अम्बारों पर
कौन मनाता
मरणोत्सव त्योहार।
शायद किसी राजनीति के
शकुनी की
यह चाल
बिछा रहा जो
एक और फिर
कुरूक्षेत्र का जाल
पशु भी चकित
देख हम सबका
बदला यह संसार।
नर करता नर का संहार।

संपर्क: कल्याण विहार, अम्बेदकर पथ, बेली रोड, पटना

हे बापू तुम अमर रहो

✍ संतोष आलोक 'प्रियांशु'

मौन खड़ा हिमालय
बहता गंगा का जल
सब मिल तेरी गाथा गाते
तू था ऐसा अविचल

सत्य अहिंसा के बल तुमनें
अंग्रेजों से भारत छीने
तिरंगा घर-घर फहराकर
सीख गये सब हँस-हँस जीने।

जैसा तुझको नाम मिला था
वैसा तुझसे पैगाम मिला था
गाँधी थे या आँधी थे तुम
तुझसे जीवन-विराम मिला था।

झुलस रहा था भारत सारा
फीर रहा था मारा-मारा
महात्मा बन के तुम आये तब
आके सब को तुमने संवारा

दिल बोझल आँखें न मेरी
सुनता हूं तब सहादत तेरी
हे बापू तुम अमर रहो।
तब राम से विनय हमारी।

तू गाँधी काँटों में खिलकर
हँसते थे काँटों से मिलकर
सत्य-अहिंसा के पथ चलते।
थप्पड़ खाते जुल्म सहन कर।

कमर में धोती तन था नंगा
दिन रोता था मन था चंगा
दृढ़ प्रतिज्ञ तुम समर भूमि में
एक रंग में सबको रंगा।

तेरी पुकार पे सब जन मरते
हँसकर लाठी गोली सहते
दुनिया तुमको कुछ भी कह ले
हम राम भक्त अवतारी कहते।

संपर्क: संस्कार भारती विद्यालय, हिलसा,
राम बाबू उच्च विद्यालय के निकट, जिला-नालंदा

हिंदी दिवस पर

राष्ट्र की अखंडता को चिरंजीवी बनाती है हिंदी

कविता वाचक्नवी

अपने बचपन में लौटूं, तो छुट्टी में दिए गए संस्कार पंजाबी की उस 'बोली' पर ठहर कर याद दिलाते हैं-''जिंद माई जे चल्लयों परदेस, कदीं वी भुल्लीं ना अपनी बोली, अपना देस/भेस।'' भरी भीड़ में व्यक्ति की अपनी अस्मिता जितनी महत्वपूर्ण है उतनी ही वैश्विक परिदृश्य में भी। अपनी भाषा और भूषा व्यक्ति को विश्व-रंगमंच पर किसी-न-किसी राष्ट्र के साथ संबद्ध करती है। राष्ट्र जब पराधीनता की विपरीत परिस्थितियों में जूझ रहा था और अपने गौरव को भूल चला था, तो उस गौरव के प्रतीकों के रूप में जनता को उसकी भाषा के स्वाभिमान को पुनर्जीवित करके अपनी राष्ट्रीय अस्मिता के प्रति आस्था और श्रद्धा का भाव भरकर जागृत किया गया।

एक परंपरा, एक संस्कृति से उद्‌भूत विभिन्न विचारधाराओं वाले लोगों का समूह राष्ट्र कहलाता है। इन अर्थों में राष्ट्र न केवल नदियां है, न केवल पहाड़, न केवल इसमें रहनेवाले लोग और न भौगौलिक सीमारेखा। राष्ट्र इन सभी के समेकित रूप, व्यवहार और एक्य तथा पारस्परिकता का नाम है। इसी एक्य के कारण विश्व के किसी भी भू भाग में बैठा भारत का व्यक्ति भारतीय है, क्योंकि उकी जड़ें उस भूमि में हैं जहां अपनी मां से, और उसने अपनी मां से भाषा का संस्कार लिया। वह भाषा, जो व्यक्ति को जागतिक मंच पर अपनी सूक्ष्म से सूक्ष्म संवदेना को, विचार को अभिव्यक्त करने में सहायता देती है और यदि यह अभिव्यक्ति कभी किसी अन्य भाषा के माध्यम से संपन्न करनी पड़ी हो तो उस भाषा को सीखने का माधयम भी बनती है। अर्थात् कोई भी व्यक्ति परंपरा से जुड़ता अपनी इस भाषा के माधयम से है व इस संसार में अकेला होने से बचा है, मूक होने से बचा है। निस्संदेह जिस भाषा ने उसके भीतर की छटपटाहट को (वैचारिक संवेदनात्मक) शब्द दिए हैं, उसे संसार से जोड़ा है, वह भाषा उस व्यक्ति के लिए श्रद्धा-योग्य होनी ही चाहिए, होती है और वह हर व्यक्ति जो उस भाषा-संस्कार से जुड़ा है-वह अपना। वह राष्ट्र जिसकी पीढ़ियों ने इस संस्कार को जीवित रखा-वह भी उसका अपना।

भारत जैसे बहुभाषी राष्ट्र में राष्ट्र के साथ किसी एक भाषा को संबद्ध करके देखना चाहें तो निस्संदेह इस इस प्रश्न पर विचार करना अब कोई नहीं रखता कि वह 'हिंदी' है। संसार के समक्ष हम पहाड़ी, पंजाबी, गुजराती या मराठी कभी नहीं थे और कभी नहीं हो सकते। भारतीय थे और भारतीय ही रहेंगे। राजभाषा, प्रशासन की भाषा और संपर्क की भाषा हिंदी है। विच्छिन्न राष्ट्रीय गौरव के दिनों से इस देश के चिंतकों, विचारकों, नेताओं और हितैषियों ने भाषा के, हिंदी के इस महत्व को समझ कर ही राष्ट्रीय एकीकरण के लिए भाषा की एक नीति अपनाई। इस नीति के आदिपुरुषों में पं. केशवचन्द्र सेन, महर्षि दयानन्द सरस्वती और महात्मा गांधी जैसे अन्य भाषी क्षेत्रें से आए महापुरुष व विद्वान हैं।

स्वतंत्रा-आंदोलन में देशवासियों की पूर्ण भागीदारी और वैचारिक आदान-प्रदान के लिए हिंदी ने जो भूमिका निभाई, उसका पिष्टपेषण करने की आवयकता यों नहीं है कि वह सर्वविदित है। आज यदि हम स्वतंत्र हैं, पुनर्जागरण की सोच और चेतना हम तक पहुंची तो इनके पीछे इस राष्ट्र की भाषा हिंदी का ही अवदान हैं। यही वह तंत्र है जो हमें बांधता है, एक प्रमाणित करता है।

19वीं शताब्दी के मध्यकाल में जिस प्रकार सुधारकों ने राष्ट्र की इस नब्ज़ को पहचाना उसी प्रकार साहित्य में भी इसकी प्रतिष्ठा के लिए योजनाबद्व प्रयास हुए। निज भाषा की उन्नति के लिए, हिंदी के ठाठ के लिए भारतेंदु से लेकर द्विवेदीकाल तक समर्पित और सन्नद्व रुख अपनाया गया। खंड-खंड मानसिकता में विभाजित राष्ट्र की अखंडता के लिए जोड़नेवाली, संपर्क सिद्वकरने वाली, स्थापित करने वाली भाषा हिंदी की प्रतिष्ठा के लिए साहित्यिक स्तर पर हुए प्रयत्नों के साथ-साथ जनमानस के लिए आंदोलनकारियों ने सत्याग्रह जैसे मार्ग चुने।

स्वतंत्रता के पश्चात् राष्ट्र के एकीकरण के लिए संवैधानिक दृष्टि से ही राजभाषा व राष्ट्रभाषा के स्तर पर हिंदी का महत्व स्वीकार किया गया और उसे मान्य करार दिया गया। बहुभाषी राष्ट्र की केंद्रीय भाषा की भूमिका में केंद्र ने और संविधान ने हिंदी को प्रतिपादित किया। व्यावहारिक रूप से उत्पन्न होने वाली अड़चनों के मद्देनजर शब्दावली के निर्माण के लिए, अनुवाद के लिए आयोगों/ब्यूरों की स्थापना की गई। अधिकांश राज्यों में अन्य भाषा' -शिक्षण के तौर पर हिंदी के पठन-पाठन की व्यवस्था की गई। अनुवाद की भाषा के रूप में हिंदी को अपनाया गया। अब भारतीय भाषाओं का साहित्य हिंदी में आकर राष्ट्रीय स्तर पर स्वीकृति प्राप्त करता है और भारतीयता एक है, इस देश की परंपरा एक है, संवेदना एक है, संस्कृति एक है, सोच एक है--जैसी दृष्टि से हिंदी में अनुदित साहित्य राष्ट्रीय एक्य नहीं पुष्टि करता है।

आधुनिक परिवेश में जनसंचार माधमयों से हिंदी का प्रयोग प्रमाणित करता है कि इस देश की केंद्रीय भाषा हिंदी ही है। हिंदी फिल्में पूरे देश में देखी जाती हैं। अन्य भाषाओं की फिल्मों की डबिंग हिंदी में होने पर ही वे राष्ट्रीय स्तर पर प्रचारित होती हैं। और तो और विदेशी फिल्में भी भारत में हिंदी में डब होकर ही भारतीय दर्शक जुटा पाती हैं या कहें कि पूरे भारत में पहुंच पाती हैं। मनोरंजनात्मक व ज्ञानात्मक अनेक विदेशी चैनल हिंदी में ही प्रस्तुत किए जा रहे हैं। दूरदर्शन पर अनेक ऐसे कार्यक्रम हैं जो हिंदी में होने के कारण ही पूरे राष्ट्र के कार्यक्रम हैं, देश को जोड़ रहे हैं।

हिंदी की पत्र-पत्रिकाएं ही भारतीय साहित्य जैसी अवधरणा की बात उठाती हैं। समूचे भारतीय साहित्य को एक मंच पर लाने का काम करती हैं। ये पत्रिकाएं यद्यपि हिंदी में प्रकाशित होती हैं परंतु इनके माध्यम से पूरा भारतीय साहित्य पाठकों तक पहुँचता है। यह उदारता हिंदी की ही है और हिंदी के संस्कार वालों की। यह कल्पना करना या सोचना चिंतनीय है कि पंजाबी पत्रकारिता योजनाबद्व ढंग से तेलुगु या मराठी की बात करें।

एकीकरण में भाषा की जो राष्ट्रीय भूमिका होनी चाहिए, उसका निर्वाह केवल हिंदी ही कर पा रही है। इसके अपवाद भी हैं। अन्यभाषा क्षेत्र में हिंदी भाषा या साहित्य को उस प्रदेश की भाषा के माध्यम से वहां के पाठकों को उपलब्ध करवाने का कार्य भी हिंदी भाषा और हिंदी क्षेत्र से आए व्यक्तियों की पहल या प्रयत्न से संभव हो पा रहा है। मणिपुरी के माध्यम से प्राचीन और आधुनिक हिंदी साहित्य की जानकारी वहां के पाठकों के लिए कौरवी क्षेत्र से गए प्रो. देवराज के निजी एवं एकांतिक प्रयत्नों से ही संभव हुई। ऐसे प्रयत्नों का ही परिणाम है कि आज मणिपुरी भाषी बड़ा वर्ग हिंदी साहित्य को जानता है, पढ़ता है और उसमें अपनी भागीदारी निभाता है। आंध्र प्रदेश में पं. वंशीधर विद्यालंकार सरीखे व्यक्तियों के निजी प्रयत्नों से दो पीढ़ी पहले के लोगों ने हिंदी के महत्व को स्वीकारा और रुचि से हिंदी सीखी, पढ़ी, जानी। सबको अपने में जोड़ने का संस्कार भी हिंदी ही देती है। इस प्रकार राष्ट्र की अखंडता को चिरजीवी बनाती है। हिंदी और इस प्रयत्नों में नेशनल बुक ट्रस्ट, साहित्य अकादमी, हिंदी अकादमियों की अपनी विशिष्ट भूमिका रही है और आज भी अहम भूमिका निभा रही हैं।

संपर्क: महासचिव 'विश्वम्भरा',
पोस्ट बॉक्स नं. 13, खैरताबाद,
हैदराबाद-500 004

क्या कामायनी का भाषा-संशोधन आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया था?

प्रो.(डॉ.) दीनानाथ 'शरण'

एक लंबे अरसे से साहित्यकारों एवं साहित्य के पाठकों के बीच यह भ्रम फैला था कि महाकवि जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' का भाषा संशोधन आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया था। हिंदी साहित्य के सशक्त हस्ताक्षर डॉ० दीनानाथ 'शरण' ने अपने इस शोध-निबंध के जरिए इस भ्रम को काफी हद तक दूर करने का अथक प्रयास किया है। इसमें कतई संदेह नहीं कि इस शोध परक आलेख को तैयार करने में प्रो० 'शरण' ने दरदर की खाक तक छान मारा है। वे गए जहाँ तक इनके कदम जा सकते थे,

सच्चाई को उजागर करने में इन्होंने कोई कोर-कसर छोड़ नहीं रखा है। सचमुच उम्र के जिस पड़ाव पर आज डॉ० 'शरण' हैं, उसमें यह काम जोखिम भरा तो था ही, काफी मुश्किल भी था उसमें भी तब जब हृदय की 'बाईपास' सर्जरी के चलते वे पिछले कई महीनों से अस्वस्थ चल रहे थे। आखिरकार इस स्थिति में भी आपने इस काम को संपन्न किया और वह निबंध आपके सामने है।

सच कहा जाए तो साहित्य को समझने वाले जिज्ञासुओं, साहित्यिक इतिहास के पाठकों, अध्येताओं और शोध-कर्त्ताओं के लिए यह निबंध एक आदर्श है। लेखक के साहसिक कलम की सराहना की जानी चाहिए। विपुल और सर्जनात्मक दृष्टि से संपन्न 'कामायनी' के भाषा-संशोधन संबंधी विवाद को चुनौती स्वीकार कर डॉ० शरण ने असलियत की पड़ताल की और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि 'कामायनी' का भाषा-संशोधन आचार्य शिवपूजन सहाय ने नहीं किया था। लेखक ने इसकी संपुष्टि में तथ्य की जड़ों तक जाने की कोशिश की है और अनेक प्रमाणिक तथ्य भी प्रस्तुत किए हैं। इस दृष्टि से यह निबंध निश्चित रूप से बहुत लोगों को चौकानेवाला है और इस अर्थ में साहित्य के प्रति डॉ० 'शरण' की सच्ची आसक्ति और गहराई निर्विवाद है, जो उनके बहुआयामी और एक अलग तरह के सर्जक व्यक्तित्व की पहचान बनाती है। नि:संदेह ज्ञानात्मक संवेदन के स्तर पर सजग-सक्रिय चिंतनशील दिमाग के भीतर चलनेवाली उद्विग्नता की ही एक झलक है यह निबंध। ऐसे निबंध पर हम पाठकों की प्रतिक्रिया से अवगत होना चाहेंगे। ----संपादक

क्या महाकवि जयशंकर 'प्रसाद' की 'कामायनी' का संशोधन आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया था? 'कामायनी' छायावाद-युग के प्रवर्त्तक और सर्वोत्कृष्ट महाकवि जयशंकर 'प्रसाद'-लिखित सुख्यात, विद्वानों के बीच लब्धप्रतिष्ठ और सामान्य काव्य-रसिकों के बीच भी अत्यंत लोकप्रिय महाकाव्य है। हिंदी-जगत में कोई ऐसा विश्वविद्यालय नहीं जहाँ बी० ए०-एम० ए० के उच्च पाठ्यक्रम में यह पुस्तक निर्धारित न हो। इसकी व्यापक लोकप्रियता, महत्ता और अमिट गौरव को महसूस करते हुए, हिन्दी के कुछ स्वयं 'आचार्यों' तथा छद्‌म साहित्यानुरागियों ने यह अफवाह फैला रखी है कि 'कामायनी' का संशोधन बिहार के आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया था और इस प्रकार वे लोग 'प्रसाद' जी पर शिवपूजन सहाय का वर्चस्व स्थापित करने की कुचेष्टा करते हैं।

कुछ साल पहले की बात है कि श्रीमती आशा सहाय, उपन्यास-लेखिका, जिनके प्रथम उपन्यास 'एकाकिनी' पर आचार्य शिवपूजन सहाय ने 'भूमिका' लिखी थी तब मुझसे मिलने आयीं थीं तब उनके पति डॉ० बी० एन० सहाय (चिकित्सक) ने राजेन्द्र कॉलेज, छपरा (जहाँ शिवपूजन सहाय 13-11-1939 से 29-12-1949 तक हिन्दी-प्रध्यापक थे) के संबंध में एक संस्मरण सुनाते हुए मुझसे कहा- "जब कॉलेज के छात्रों ने आचार्य शिवपूजन सहाय से पूछा 'क्या आपने "कामायनी" पढ़ी है? तब शिवपूजन सहाय ने बड़ी गंभीरता से उत्तर दिया- 'मैंने कामायनी का संशोधन किया है!' बिहार- विशेषत: पटना के कुछ साहित्यकार अक्सर यह कहते सुने गये हैं और सुने जाते हैं, कि आचार्य शिवपूजन सहाय ने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' का संशोधन किया था। लेकिन क्या यह सच है? इसका प्रमाण? या, यह केवल गप है? गया शहर की एक साहित्यिक पत्रिका में एक सज्जन ने तो यहाँ तक लिख मारा कि 'प्रसाद जी का भाषा-संस्कार तो आचार्य शिवजी ही करते रहे।'

अंतर्राष्ट्रीय ख्याति-प्राप्त भगवान बुद्ध की नगरी में उक्त सज्जन को यह 'दिव्य ज्ञान' पता नहीं कैसे मिला! तब उक्त साहित्यिक पत्रिका में (जिसका नान-पता देना उसको अनावश्यक 'पब्लिसिटी' देना है) मैने लिखा- "प्रसाद" जी का भाषा-संस्कार शिवजी करते रहे- इसका प्रमाण क्या है? क्या 'प्रसाद' जी को भाषा लिखने नहीं आती थी? क्या 'प्रसाद' जी की सभी पुस्तकों की भाषा का संस्कार शिवजी ने किया? या, किसी एक पुस्तक का? सबूत चाहिए। 'प्रसाद' जी की किसी भी पुस्तक का भाषा-संशोधन शिवपूजन जी ने किया तो वह पांडुलिपि है क्या? है कहाँ? यदि शिवपूजन जी-द्वारा प्रसाद जी की सभी या किसी पुस्तक का भाषा-संस्कार किया गया तो वह पांडुलिपि उसी रूप में छपी ताकि 'प्रसाद' जी की भाषा-विषयक दुर्बलता और शिवपूजन जी की क्षमता उजागर हो सके...... 'प्रसाद' जी का भाषा-संस्कार शिवजी ने किया तो यहाँ भाषा-संस्कार' का अर्थ क्या है? भाषा-संशोधन? या प्रूफ-रीडिंग? या यत्र-तत्र कतिपय सुझाव? या आमूल-चूल परिवर्तन, या क्या? बात यह भी मार्के की है कि जो व्यक्ति अर्थात् शिवपूजन सहाय 'प्रसाद'- जी की भाषा का संस्कार कर सका, वह व्यक्ति स्वयं (अर्थात् शिवपूजन सहाय) अपनी किसी भी रचना में वैसी भाषा कहाँ लिख सके? 'कहानी का प्लॉट' पढ़िये या 'देहाती दुनिया' - किसी भी रचना में भाषा का कहीं कोई ताल-मेल रहता, तब यह बात गले उतरती कि प्रसाद जी की भाषा पर शिवपूजन जी की छाप है।" परन्तु पूर्वोक्त सज्जन ने या उक्त पत्रिका के माननीय सम्पादक महोदय ने अथवा अन्य किसी ने आज तक मुझे कोई उत्तर नहीं दिया। मजे की बात तो यह है कि जो कहीं से भी हिंदी साहित्य के अधिकारी विद्वान नहीं हैं और न तो उन्हें

साहित्य की क-ख-ग की ही कोई जानकारी है, जानकारी के बिना ही किसी प्रख्यात कवि लेखक के बारे में फतवे जारी करके अपना बड़प्पन दिखाना चाहते हैं।

अतः इस प्रसंग ने मुझे गंभीरता से यह सोचने-समझने और जानने को प्रेरित-प्रोत्साहित और विचारोत्तेजित किया कि 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' का संशोधन क्या वास्तव में शिवपूजन सहाय ने किया था? क्या यह सच है? या झूठ? क्या प्रसाद जी को हिंदी भाषा लिखने नहीं आती थीं? क्या हिंदी भाषा पर उनका अधिकार न था? और इसी कारण उनका भाषा संस्कार आजीवन शिवपूजन सहाय करते रहे? लेकिन इसका प्रमाण. .....?

तो, इस प्रसंग में मैंने जुलाई, 2001 में सर्वप्रथम, हिंदी के कई कवियों, लेखकों और कई विद्वानों को पत्र लिखे। 1. प्रो० नवल किशोर गौड़, 2. डॉ रामेश्वरी लाल खंडेलवाल 'तरुण' 3. डॉ विजयपाल सिंह, 4. रत्नशंकर 'प्रसाद' (महाकवि जयशंकर 'प्रसाद' के पुत्र) 5. डॉ गिरिराज शरण अग्रवाल 6. रघुनाथ प्रसाद 'विकल' 7. डॉ नगेन्द्र, 8. डॉ स्वर्ण किरण, 9. सुरेन्द्र प्रसाद जमुआर, 10. विष्णु प्रभाकर, 11. डॉ रामनिरंजन परिमलेन्दु, 12. धीरेन्द्रनाथ सिंह, 13. डॉ फतेह सिंह, 14. गोवर्द्धन प्रसाद 'सदय' 15. डॉ वीरेन्द्र नारायण (शिवपूजन सहाय के दामाद) 16. डॉ विजय कुमार वेदालंकार आदि।

"बिहार के कुछ साहित्यकार अक्सर यह कहते हैं कि महाकवि जयशंकर 'प्रसाद' की कामायनी का भाषा-संशोधन आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया था। क्या यह सच है, या झूठ? कोई प्रमाण भी किसी के पास है क्या, जिससे यह सिद्ध हो सके कि वास्तव में आचार्य शिवपूजन सहाय ने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' का भाषा-संशोधन किया था? प्रमाण ये हो सकते हैं, जैसे (1) 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' की हस्तलिपि के कुछ भी ऐसे पन्ने जो शिवपूजन सहाय - द्वारा संशोधित किये गये हों, अथवा (3) स्वयं 'प्रसाद' जी लिखित किसी भी पुस्तक या लेख में इसकी चर्चा की कि उनकी कामायनी का भाषा-संशोधन शिवपूजन सहाय ने किया, अथवा (4) शिवपूजन जी की किसी भी पुस्तक या लेख में इसकी चर्चा कि उन्होंने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' का संशोधन किया था, अथवा (5) किसी अधिकारी विद्वान की कोई पुस्तक/ लेख जिसमें इसकी चर्चा हो कि शिवपूजन सहाय ने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' में भाषा-संशोधन किया था"।

इनमें कई विद्वानों ने कृपा-पूर्वक मेरे पूर्वोक्त पत्र का उत्तर दिया। डॉ० रामेश्वरलाल खंडेलवाल 'तरुण' के सम्बन्ध में उनके शोध-छात्र डॉ० विजय कुमार वेदालंकार ने दिनांक 25-07-2001 के पत्र में मुझे सूचित किया कि - "डॉ० रामेश्वरलाल खंडेलवाल 'तरुण' जी तीन वर्ष पूर्व ही 2 फरवरी, 1998 को स्वर्गवासी हो गये। अतः आपकी जिज्ञासा का समाधान कैसे हो? यदि उनके साहित्य और फाइलों में कहीं कोई संकेत मिला तो भविष्य में अवश्य ही आपको सूचित करूँगा।" अपने 23-8-2001 के पत्र में पुनः उन्होंने लिखा कि "मैंने साहित्य-धर्मिता पत्रिका में एक स्थान पर पढ़ा है कि शिवपूजन सहाय ने प्रेमचंद, प्रसाद, निराला- जैसे हिंदी के कुछ चोटी के लेखकों की पांडुलिपियों का विधिवत संशोधन किया था। कहा जाता है कि 'कामायनी' का 'कामायनी' नाम उन्हीं का दिया हुआ हैं।"

परंतु जब मैंने उक्त पत्रिका ("साहित्य धर्मिता") के बारे में डॉ० बेदालंकार जी से सम्पूर्ण (ैचमबपपिब) विवरण के लिये अनुरोध किया तब उनका उत्तर तक नहीं आया। अतः प्रामाणिक तौर पर यह बात नहीं मानी जा सकती कि शिवपूजन सहाय ने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' का संशोधन किया था।

यह बात भी बिल्कुल गलत है कि 'कामायनी' का 'कामायनी' नाम शिवपूजन सहाय का ही दिया हुआ है, इस संबंध में महाकवि 'प्रसाद' के पुत्र श्री रत्नशंकर प्रसाद ने स्पष्ट लिखा है क "सर्गों के नामांतरण से अधिक महत्त्व का है स्वतः काव्य का नामांतरण। पहले काव्य के चरित-नायकत्व का प्रतिपादक नाम 'श्रद्धा' रहा, जिसकी विज्ञप्ति भी प्रकाशकीय सूची-पत्रों और विज्ञापनों के द्वारा हो चुकी थी। किन्तु 'श्रद्धा' को 'कामायनी' में नामांतरित करने में जो दृष्टि रही उसका परिचय 'ध्रुवस्वामिनी' की 'सूचना' की इन पक्तियों में मिलती है- 'विशाखदत्त ने -'ध्रवदेवी' नाम लिखा है किन्तु मुझे 'ध्रुवस्वामिनी' नाम, जो राजशेखर के मुक्तक में आया है, स्त्रीजनोचित, सुन्दर, आदरसूचक और सार्थक प्रतीत हुआ, इसलिये मैंने उसी का व्यवहार किया है।" स्पष्ट है कि सुन्दर-भाव से समन्वित और समुचित अर्थव्यंजना नाम वाली संज्ञा कामायनी में श्रद्धा का नामांतरण युक्तिसंगत रहा- (कामायनी- छाया-संस्करण- श्री जयशंकर 'प्रसाद' - संपादक, श्री रत्नशंकर प्रसाद- प्रकाशक, प्रसाद प्रकाशन, प्रसाद मंदिर, गोवर्द्धन सराय, वाराणसी-सन् 1995-मूल्य तीन सौ रुपये) इस प्रकार, प्रमाणित है कि 'कामायनी' नाम स्वयं महाकवि जयशंकर 'प्रसाद' का दिया हुआ है, शिवपूजन सहाय का हर्गिज नहीं।

डॉ० वीरेन्द्र नारायण (शिवपूजन सहाय के दामाद) को उनके 7 कैलाश कुंज, ग्रेटर कैलाश-ए, नई दिल्ली-110048 के पते पर मैंने पत्र लिखा था परंतु उनका कोई उत्तर नहीं मिला। श्री गोवर्द्धन प्रसाद 'सदय' और अन्य महानुभावों ने भी उत्तर देने का कष्ट नहीं किया जिनमें शामिल हैं-डॉ० नगेन्द्र, सुरेन्द्र कुमार जमुआर, डॉ० गिरिराज शरण अग्रवाल आदि।

इस प्रकार, मेरे पत्र का उत्तर देने से कई लोग साफ कतरा गये। कुछ लोगों ने स्पष्ट उत्तर दिये भी, निर्भय होकर लिखा। कुछ लोगों ने बीच का रास्ता अपनाया-थोड़ा बचाकर लिखा।

प्रख्यात कथाकार श्री राधाकृष्ण प्रसाद ने अपने दिनांक 20-9-2001 के पत्र में मुझे बताया कि "मुझे आदरणीय शिवपूजन सहाय का स्नेह प्राप्त था। सन् 1940-42 में कुछ दिनों तक मैं उनके निवास में ही छपरा में रहता था। वे राजेन्द्र कॉलेज, छपरा में हिंदी में लेक्चरर होकर गये थे। मैं आई०ए०का छात्र था। प्रेमचंद तथा बनारस के अन्य कुछ साहित्यकारों की रचनाओं का उन्होंने संशोधन किया था। इसकी चर्चा वे बराबर करते थे। 'प्रसाद' जी के साथ भी उनका निकट का संबंध था और वे प्रसाद जी - संबंधी रोचक बातें बताया करते थे। 'कामायनी' की प्रशंसा वे बहुत करते थे। इसके प्रकाशक/संशोधन में, संपादन में भी उनका योग था- ऐसी जानकारी उन्होंने मुझे नहीं दी।"

समालोचक डॉ स्वर्णकिरण ने अपने दिनांक 9-8-2001 के पत्र में मुझे लिखा कि 'स्व० जयशंकर प्रसाद की 'कामायनी' की पांडुलिपि का संशोधन स्व० आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया- इसका पता मुझे नहीं है।'

पुरानी पीढ़ी के प्रख्यात वयोवृद्ध साहित्यकार श्री विष्णु प्रभाकर ने अपने 20-8-2001 के पत्र में मुझे बताया कि "आचार्य शिवपूजन सहाय जी ने प्रसाद की 'कामायनी' में संशोधन किया था- यह बात मैंने किसी से नहीं सुनी, समझ में भी नहीं आती। इन बातों पर विश्वास करने की जरूरत नहीं।"

आधुनिक हिंदी काव्य के विशेषज्ञ एवं वयोवृद्ध विश्वविद्यालय- आचार्य डॉ विजयपाल सिंह ने अपने 11-5-2002 के पत्र में मुझे

लिखा- "कहाँ सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी 'प्रसाद' और कहाँ शिवपूजन सहाय? अपना बाजार-भाव बढ़ाने के लिये लोग ऐसी व्यर्थ की कल्पनाएँ किया करते हैं। गद्य के क्षेत्र में शिवपूजन सहाय का बिहार में कुछ स्थान हो सकता है। पद्य के क्षेत्र में तो वे शून्य हैं। इस प्रकार की बेढंगी तुलना विवेकहीन लोग ही करते हैं।"

बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् (पटना) के पूर्व उपाध्यक्ष सह-निदेशक डॉ० शिववंश पांडेय ने अपने 29-12-2001 के पत्र में मुझे लिखा कि "जहाँ तक शिवपूजन सहाय द्वारा प्रसाद जी की कृतियों के संशोधन की बात है, मुझे इतना ही ज्ञात हुआ है कि- 'कामायनी' का संशोधन आचार्य जी ने किया था और संशोधित प्रति का प्रकाशन यथावत् रूप में इलाहाबाद के किसी प्रकाशक ने किया है। शायद उसकी प्रति 'सिन्हा पुस्तकालय' में है, जैसा किसी ने मुझे बताया था। मैंने वह प्रति देखी नहीं है।" पांडेय जी के उक्त पत्र से इस प्रकार, कोई प्रामाणिक जानकारी नहीं मिली। बस "जैसा किसी ने मुझे बताया था" और "मैंने वह प्रति नहीं देखी।" अत: सुनी-सुनायी बातों पर कौन विश्वास करेगा? और कैसे विश्वास किया जा सकता है? मैने पता किया सिन्हा पुस्तकालय में वैसी कोई प्रति नहीं है। 'कामायनी' का कोई संशोधन आचार्य जी ने नहीं किया था। आगे के अनुच्छेदों में इसे प्रमाणों के साथ सिद्ध किया जा सका है। विख्यात एवं वयोवृद्ध पत्रकार श्री पारसनाथ सिंह ने वृहस्पतिवार 16 मई (2002) को एक विशेष साक्षात्कार में मुझे जानकारी दी कि उन्होंने अपनी आधी से अधिक उम्र बनारस में ही बितायी है- शिवपूजन जी भी कुछ समय बनारस में थे परन्तु उनके द्वारा 'प्रसाद' जी को 'कामायनी' का संशोधन हास्यास्पद बात है। ऐसा कुछ नहीं है कि शिवपूजन जी ने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' का संशोधन किया था। पारस बाबू के पुत्र डॉ० धीरेन्द्र नाथ सिंह ने अपने दिनांक 1-3-2002 के पत्र में मुझे लिखा "जहाँ तक मेरी जानकारी है आचार्य शिवपूजन सहाय जी पुस्तक-भंडार के ग्रंथों के मुद्रण-प्रकाशन के क्रम में काशी आये थे।

मेरी अपील वाराणसी के दैनिक 'आज' में भी छपी थी। परंतु किसी सज्जन ने इस अपील पर अपना कोई पत्र या प्रतिक्रिया नहीं भेजी। तब आचार्य शिवपुजन सहाय के दोनों पुत्रों-प्रो. आनंदपूर्ति और प्रो. मंगलपूर्ति को मैंने 01-08-2001 को पत्र लिखे, परंतु उन दोनों में किसी का कोई उत्तर नहीं आया। तब प्रो. आनंदपूर्ति के फेस नं. की जानकारी प्राप्त कर मैंने 16-8-2001 को उनसे संपर्क किया और रविवार दिनांक 26-8-2001 को पुनाईचक(मोहनपुर) स्थित उनके निवास पर उनसे मिला। मैं वहाँ लगभग बारह बजे दिन में पहुँचा था। उनसे वार्तालाप का मूल और मुख्य विचार बिंदु था-"क्या 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' या किसी भी पुस्तक का भाषा-संशोधन आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया था? प्रो. आनंदमूर्ति जी ने विषय से संबद्ध कोई तथ्यात्मक उत्तर नहीं दिया और विषयांतर करते हुए कहा कि उस जमाने में औपचारिकता की परंपरा या परिपाटी भी नहीं थी कि (1) कोई 'आभार-प्रदर्शन' या 'कृतज्ञता-ज्ञापन' करता अथवा (2) कोई लिखता कि मैंने अमुक का भाषा-संशोधन किया है। जो हो, प्रो. आनंदमूर्ति यह नहीं प्रमाणित कर सके कि शिवपूजन सहाय ने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' या किसी भी कृति का भाषा-संशोधन या संस्कार किया था। मूल विषय से हटकर ही उन्होंने कई बातें कीं।

इस प्रसंग में हिंदी के विद्वान समालोचक डॉ. रामनिरंजन 'परिमलेन्दु' के दिनांक 28-02-2002 के पत्र के अनुसार मैंने काशी नागरी प्रचारिणी सभा के प्रधानमंत्री पं. सुधाकर पांडेय को 05-03-2002 को और बाद में भी कई पत्र लिखे परन्तु पं. सुधाकर पांडेय ने आज तक कोई उत्तर नहीं दिया।

हाँ, इस संदर्भ में सुख्यात समालोचक डॉ. रामनिरंजन 'परिमलेन्दु' का दिनांक 01-02-2002 का लिखा पत्र बड़ा ही ऐतिहासिक एवं महत्वपूर्ण है, जो इस प्रकार है-"आचार्य शिवपूजन सहाय के संबंध में अब मेरी कहानी सुनें। सर्वप्रथम, मैंने डॉ. विजयपाल सिंह से यह प्रश्न किया कि क्या शिवपूजन जी ने 'कामायनी' का संशोधन किया था? उन्होंने तत्काल उत्तर दिया-'ऐसा सवाल ही नहीं है। यह असंभव है!' डॉ. विजयपाल सिंह भारत में हिंदी के जीवित, वरिष्ठतम युनिवर्सिटी प्रोफेसर हैं, बनारस के ही हैं, वर्षो तक बी. एच. यु. (बनारस हिंदू युनिवर्सिटी) के विभागाध्यक्ष रहे-उम्र प्राय: 82 वर्ष। जयशंकर 'प्रसाद' के पुत्र रत्नशंकर प्रसाद से मैं मिला था। उनकी आयु 80 वर्ष। उन्होंने बताया कि 'कामायनी' का लेखन-प्रकाशन हुआ। सन् 1937 में 'प्रसाद' जी का निधन हो गया। प्रथम संस्करण का छाया-संस्करण भी प्रकाशित हो गया है। मूल्य तीन सौ रुपये। 'कामायनी' का भाषा-संशोधन शिवपूजन जी ने किया-यह कल्पना ही है।"

दनांक 28-02-2002 के अपने पत्र में 'परिमलेन्दु' जी ने मुझे पुन: सूचित किया 'प्रसाद जी' के जीवन-काल में 'कामायनी' के प्रथम संस्करण का प्रकाशन हो गया था। इसका प्रूफ-संशोधन उन्होंने स्वयं किया था। उक्त प्रूफ-संशोधन की प्रतियां अभी तक उनके पुत्र रत्नशंकर प्रसाद के पास सुरक्षित हैं। 'कामायनी' के प्रथम संस्करण की छाया-प्रति का प्रकाशन रत्नशंकर प्रसाद ने किया है। यह संस्करण आप डाक से मंगवा सकते हैं। मूल्य तीन सौ रुपये। पता-श्री रत्नशंकर प्रसाद, प्रसाद मंदिर, सराय गोवर्द्धन, वाराणसी 221001 मैंने रत्नशंकर जी से कहा था कि 'कामायनी' की प्रति रचनाकार की हस्तलिपि में प्रो. नवल किशोर गौड़ के पास है। इस कथन पर उन्होंने आश्चर्य व्यक्त किया था। 'कामायनी' का वैकल्पिक नाम 'श्रद्धा' है। इस तथ्य का उद्घाटन इसकी मूल प्रति देखने पर मुझे हुआ। 'कामायनी' के पांडुलिपि-संस्करण देखने पर कही भी यह नहीं कहा जा सकता कि शिवपूजन सहाय जी ने इसका भाषा-संस्कार किया था। शिवपूजन जी की हस्तलिपि मैं पहचानता हूं। कहीं भी उनकी लिखावट का 'शुभ दर्शन', मुझे 'कामायनी' के उक्त संस्करण में नहीं हुआ।"

महाकवि जयशंकर 'प्रसाद' जी के पुत्र श्री रत्नशंकर प्रसाद का पता मिल जाने पर बग मैंने सर्वोचित यही समझा कि श्री रत्नशंकर प्रसाद से इस प्रसंग में पत्र-संपर्क स्थापित किया जाय। वैसे, दिनांक 04-07-2001 को एक पत्र पहले भी उन्हें लिख चुका था और उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया था। फिर भी, दूसरा पत्र मैंने उन्हें लिखा और मनीआर्डर से मैंने तीन सौ रुपये भेजते हुए 'कामायनी' का छाया-संस्करण डाक से भेज देने का आग्रह किया। तदनुसार दिनांक 17-06-2002 को डाक से मुझे 'कामायनी' का "छाया-संस्करण" प्राप्त हुआ। इसके प्रथम पृष्ठ पर श्री रत्नशंकर प्रसाद जी ने कृपा-पूर्वक अपना हस्ताक्षर भी किया है-11जून 2002। इस "छाया-संस्करण" को मैं बहुत गौर से पढ़ गया। इस "छाया-संस्करण" के संबंध में महाकवि जयशंकर 'प्रसाद' के पुत्र और इस "छाया-संस्करण" के संपादक श्री रत्नशंकर प्रसाद ने लिखा है कि "ईसवीय 1936 में 'कामायनी' के आदि-मुद्रण की छाया से प्रस्तुत 'कामायनी' का यह "छाया-संस्करण" 1995 में प्रथम बार प्रकाशित।" इसके प्रारंभ में "यत्किचिंत् श्रद्धायै कामायन्यै" शीर्षक से अपनी भूमिका में श्री

रत्नशंकर प्रसाद ने कई महत्वपूर्ण जानकारियां दी हैं-1. 'कामायनी' का प्रारंभ सं 1984 की श्रीपंचमी को (तदनुसार 1927) और समापन सं. 1992 की महाशिवरात्रि को (तदनुसार सन् 1935 ई. में) हुआ था। 2. "कामायनी" की प्रेस-कॉपी सन् 1935 के अप्रैल में मुद्रणार्थ दी जा चुकी थी किंतु वांछित 'इटैलिक्स टाइपों' की आपूर्ति में विलम्ब लगा, फलतः मुद्रण रूका रहा।" 3. "प्रूफशोधन और मुद्रणादेश देते-देते भी परिवर्तन हुए।"

4. "स्वानुभूति के अंतराभिलाप को लिपि विग्रह दे देने की आकुलता में इसकी पांडुलिपि कभी-कभी उनके उस कर्म-पीठ पर खुली रहती थी जहां गंध-संयोजन की प्रक्रिया और भाव-योग परस्पर संबलित रहते थे और बीच-बीच में केशर-कस्तूरी के खल-बट्ट और गंध की कुप्पियों-शीशियों को विराम देकर अंगुलियां कलम पकड़ लेती थीं। पांडुलिपि के पृष्ठों पर पड़े उन अंगुलियों के चिन्ह जो 'म्यूजियोलाजी' की प्रक्रिया में अब क्षीण हो गये हैं- इसके साक्षी हैं।"-(द्रष्टव्य-कामायनी (छाया- संस्करण)-श्री जयशंकर 'प्रसाद' संपादक श्री रत्नशंकर प्रसाद-प्रकाशक, प्रसाद प्रकाशन, प्रसाद मंदिर, गोवर्द्धन सराय, वाराणसी सन् 1995)

इस प्रकार, 'प्रसाद' जी के पुत्र श्री रत्नशंकर प्रसाद ने यह बिल्कुल स्पष्ट कर दिया है कि 'कामायनी' के भाषा - संशोधन/संस्कार में अन्य किसी व्यक्ति का कोई हाथ नहीं है। 'कामायनी' की पांडुलिपि में ''प्रूफ-संशोधन और मुद्रणादेश देते-देते भी परिवर्तन हुए'' वे ''स्वयं प्रसाद जी के द्वारा ही किये गये और पांडुलिपि के पृष्ठों पर 'उन' अंगुलियों के चिन्ह जो 'म्यूजियोलाजी' की प्रक्रिया में अब क्षीण हो गये हैं। इसके साक्षी हैं'' - ऐसे में, शिवपूजन सहाय-द्वारा 'कामायनी' के भाषा-संशोधन की बात बिल्कुल गलत है।

इसी संदर्भ में एक अन्य तथ्य भी महत्वपूर्ण एवं विशेष उल्लेखनीय है कि 'कामायनी' के आदि मुद्रण/संस्करण में (जो इंसवीय 1936 में प्रकाशित हुआ था।) 'प्रसाद' जी - द्वारा प्रस्तुत किए गये 'आमुख' के बाद एक पृष्ठ 'संशोधन' का है और इससे भी पता चलता है कि संशोधन स्वयं 'प्रसाद' जी ने ही किया था, अन्य किसी ने नहीं। प्रसाद जी द्वारा लिखित 'कामायनी' की मूल पांडुलिपि और प्रूफ-कॉपियां श्री रत्नशंकर प्रसाद जी के पास है।

अंग्रेजी और संस्कृत के प्रकांड विद्वान् एवं हिंदी के सुप्रसिद्ध समालोचक प्रो० नवल किशोर गौड़(उम्र 87 वर्ष) ने 19, गोकुलनगर, उदयपुर (राजस्थान) से दिनांक 19-07-2001 के अपने पत्र में मुझे लिखा कि ''कामायनी के किसी शब्द, वाक्य या वाक्यांश तो क्या, उसके किसी 'कॅमा', फुलस्टाप, 'इनवर्टेट कॉमा' और 'विराम-चिन्हों में भी किसी व्यक्ति ने संशोधन किया होगा-यह बात मेरे गले के नीचे नहीं उतरती। प्रसाद जी की हस्तलिपि में 'कामायनी' के सिर्फ दो-चार पृष्ठ नहीं सम्पूर्ण 'कामायनी' की 'प्रसाद' जी की हस्तलिपि में प्रस्तुत पांडुलिपि की पुस्तकाकार प्रति मेरे पास है। 'भारती भण्डार' की यह दूरदर्शिता थी कि उन्होंने ' कामायनी' की मूल पांडुलिपि की फोटो-प्रिंट प्रतिलिपि की प्रकाशित की थी। हिंदी-प्रकाशन-जगत में शायद यह पहला प्रयास था। मैं भाग्यशाली हूँ कि 'कामायनी' की मूल पांडुलिपि की मुद्रित प्रतिलिपि की एक प्रति मेरे पास है। ....

'कामायनी' की रचना बीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध के हिंदी साहित्य की एक महत्वपूर्ण घटना है... किसी महान् काव्य की भाषा, भाव-भंगिमा, स्वरूप-विधान और आकृति-प्रकृति की पूर्व-रूप-रेखा रचनाकार के अव्यक्त परा-वाक् में प्रच्छन्न रहती है। वहां से क्रमशः स्पष्टतर होती हुई वह रूप-रेखा वैखरी-वाणी में पूर्णतः साकार होती है। जीवन-काव्य की जो रूप-रेखा कवि 'प्रसाद' के परा-वाक् में उदभासित हुई थी,'कामायनी' उसी का, वैखरी-वाणी का, मूर्त्त रूप है। अतः 'कामायनी' के मूल प्रारूप में किसी प्रकार का संशोधन-परिवर्तन करने की क्षमता उसी व्यक्ति में हो सकती है जिसकी प्रतिभा में 'मयूरांडरसवत्' परा-वाक् से लेकर वैखरीवाणी के मयूर-पुच्छ तक का सारा सौंदर्य-बोध प्रतिफलित हुआ हो। मेरी दृष्टि में, स्वयं 'प्रसाद' जी के अतिरिक्त, उनके समकालीन किसी अन्य साहित्यकार में ऐसी क्षमता नहीं थी। 'कामायनी की मूल पांडुलिपि में यत्र-तत्र जो संशोधन-परिवर्तन हुए हैं, वे 'प्रसाद' जी की ही हस्तलिपि में हैं। पांडुलिपि की मुद्रित प्रतिलिपि इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि स्वयं कवि के अतिरिक्त अन्य किसी व्यक्ति ने इसमें कोई संशोधन नहीं किया है। शिवजी के प्रति मेरा गुरु-तुल्य आदर-भाव है। उनके संबंध में ऐसी निराधार चर्चा उनके प्रति अपमानजनक तो है ही, मेरे लिए भी दुखद है। - सस्नेह, नवल किशोर गौड़।''

परन्तु तब मैंने यह भी आवश्यक समझा कि 'कामायनी' के विभिन्न संस्करणों को देखा जाय-ताकि कहीं कोई ऐसा उल्लेख या संकेत मिले कि 'कामायनी' के किसी परवर्ती संसकरण का ही संशोधन शिवपूजन सहाय ने किया हो। भारती भंडार, इलाहाबाद, सरस्वती विहार, दिल्ली और राजकमल प्रकाशन, दिल्ली आदि विभिन्न प्रकाशकों - द्वारा 'कामायनी' छापी गयी है, परन्तु कहीं इस बात का कोई संकेत नहीं मिला। 'प्रसाद' जी की साहित्य-साधना पर लिखनेवाले समकालीन लेखकों में भी इस बात की कहीं कोई चर्चा नही की है।

तब बारी आई स्वयं आचार्य शिवपूजन सहाय-लिखित पुस्तकों की। मैंने विचार किया कि शिवपूजन सहाय ने इस संबंध में शायद कहीं कुछ लिखा हो। बिहार राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना के पुस्तकालय में जाकर 'शिवपूजन-रचनावली' के सभी भाग देख गया। भाग-3 में पृष्ठ 254 पर ''प्रसाद जी की भविष्यवाणी'' शीर्षक आलेख छपा है। चौथे खंड में पृष्ठ 218 पर 'महाकवि प्रसाद का व्यक्तित्व' शीर्षक लेख है। संस्मरण लिखने में तो शिवपूजन सहाय बड़े भारी उस्ताद थे। उनके लिखे अंतरंग संस्मरणों का एक संग्रह 'वे दिन वे लोग' शीर्षक से उनके पुत्र बालेन्दु शेखर मंगलमूर्ति के संपादकत्व में राजकमल प्रकाशन प्रा० लि० दिल्ली से प्रकाशित हुआ था। सन् 1965 में द्वितीय आवृति। यह पुस्तक महिला चर्खा समिति, प्रभावती महिला पुस्तकालय, कदमकुआँ, पटना-3 में उपलब्ध है-क्र०7008/7198 इस पुस्तक में जयशंकर 'प्रसाद' जिसमें शिवपूजन सहाय ने लिखा है कि ''जान-पहचान तो किसी से भी नही। दूर से ही बाबू श्यामसुन्दर दास को 'सभा' में देख लेता था और कभी 'प्रसाद' जी को भी उनके घर जाकर। अपना परिचय मैं कैसे देता! संकोच के मारे साहस न होता था।'' - (पृ० 108) इस संस्मरण में शिवपूजन सहाय ने - प्रसाद जी विषयक छोटी-छोटी कई बातों का खूब रस लेकर वर्णन किया है, जैसे-भोजन बनवाने की सामग्री का चिट्ठा, जर्दा-किमाम-इत्र भी अपनी देख-रेख में बनवाते थे, जवानी में कुश्ती का शौक था, सुनारों और मल्लाहों की बोली का रहस्य समझते थे, वगैरह-वगैरह परंतु कहीं 'प्रसाद' जी की पुस्तकों में भाषा-संशोधन की बात नहीं है।

इसी पुस्तक में पृष्ठ 109 से पृष्ठ 115 पर 'प्रसाद' जी के संबंध में दूसरा संस्मरण भी है जिसमें शिवपूजन सहाय ने लिखा है कि गोवर्द्धन

सराय के रहने वाले राधाकृष्ण जी एडिशनल मुंशिफ बाबू रघुवर दयाल के दफ्तर में काम करते थे और उन दिनों शिवपूजन सहाय बनारस की दीवानी अदालत में हिंदी नकलनवीस पद पर काम करते थे। उन्हीं पूर्वोक्त श्री राधाकृष्ण की प्रेरणा से 'प्रसाद' जी का घर देख चुका था। किसी दिन 'सभा' की ओर न जाकर **'प्रसाद' जी के घर की ही परिक्रमा कर आता था।''** - (पृष्ठ 108)

उपर्युक्त पंक्तियों पर ध्यान देने से यह स्पष्ट है कि 'प्रसाद' जी से मिलने तक में शिवपूजन सहाय को जब ''संकोच के मारे साहस न होता था'' और दूर-दूर से ही वे 'प्रसाद' जी के घर की ही परिक्रमा कर आते थे, '' तो ऐसे में, ऐसे सज्जन द्वारा 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' के भाषा-संशोधन की बात अवश्य ही बिल्कुल हास्यास्पद है। खामखाह शिवपूजन सहाय को महिमा-मंडित करने और 'प्रसाद' जी को नीचा दिखाने की कुचेष्टा है। यह कुछ गैर-जिम्मेवार लोगों का कुचक्र (षड्यंत्र) मात्र है।

आचार्य शिवपूजन सहाय की एक दूसरी पुस्तक है-'मेरा जीवन' जो पारिजात प्रकाशन, पटना से सन् 1985 में छपी थी। डिमाई साइज की इस पुस्तक में 245 पृष्ठ हैं। इसकी 'प्रस्तावना' शिवपूजन सहाय जी के पुत्र डॉ बालेंदु शेखर मंगलमूर्ति ने लिखी है और इस पुस्तक को 'आत्म-संस्मरण' बताया है। इस पुस्तक में पृ० 52 और पृ० 53 पर 'प्रसाद' जी के संबंध में वे ही बातें हैं जो ''वे दिन वे लोग'' के पृ० 108 पर हैं। - कुछ भी नया नहीं है। इसी पुस्तक में ''महाकवि जयशंकर 'प्रसाद' शीर्षक से पृ० 175 से पृ० 179 तक एक दूसरा संस्मरण भी है जिसमें 'प्रसाद' जी के संबंध में वही बातें हैं जो ''वे दिन, वे लोग'' पुस्तक में पृ० 109 से पृ० 115 पर प्रकाशित हैं, - कुछ भी नया नहीं हैं।

इस प्रकार, आचार्य शिवपूजन सहाय- द्वारा लिखित लेखों/टिप्पणियों/संस्मरणों आदि में कहीं कुछ भी ऐसा हल्का-सा भी संकेत नहीं है कि उन्होंने 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' अथवा अन्य किसी भी कृति का भाषा-संशोधन या संस्कार किया था।

इस प्रकार, ऊपर के सूक्ष्म विश्लेषण और गहन विवेचन से स्पष्ट प्रमाणित होता है कि 'प्रसाद' जी की 'कामायनी' का भाषा-संशोधन या संस्कार शिवपूजन सहाय ने नहीं किया था। यह बात बिल्कुल गलत है। झूठ है।

'प्रसाद' जी के जीवन-काल में ही उनकी बढ़ती हुई लोकप्रियता और प्रसिद्धि से कितने ही लोग उनके कट्टर विरोधी और कटु निंदक हो गये थे। आचार्य शिवपूजन सहाय के ही शब्दों में - ''उनके (प्रसाद जी के) जीवन-काल में ही उनका उत्कर्ष बहुतों को असह्य हो गया था .. . 'प्रसाद' जी की जो अवज्ञा और उपेक्षा हुई वह किसी से छिपी नहीं हैं'' ('मेरा जीवन' पृ० 177-शिवपूजन सहाय) समकालीन महान साहित्यकार सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' ने भी उस समय की सुख्यात पत्रिका 'माधुरी' के दिसम्बर-1930 के अंक में 'प्रसाद' जी के संबंध में यह लिखा था कि ''''प्रसाद' जी की आजकाल जैसी आलोचनाएँ निकल रही हैं, उसमें अस्सी-फीसदी आलोचना सहानुभूति से रहित और आक्रमण है।'' (चयन-पृ० 49 - सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' - राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, नई दिल्ली -तृतीय संस्करण - 1981 ई०) यही कारण है कि 'प्रसाद' जी के कट्टर विरोधियों और कटू निन्दकों ने 'प्रसाद' जी को नीचा दिखाने की मंशा से या इरादे से उनके खिलाफ यह दुष्प्रचार किया कि प्रसाद जी की 'कामायनी' का भाषा-संशोधन/संस्कार आचार्य शिवपूजन सहाय ने किया था। परन्तु यह असत्य है, अप्रमाणिक और बिल्कुल गलत है।

संपर्क: दरियापुर गोला, पटना-3

पृष्ठ 50 का शेषांश....

समान नागरिक संहिता .....

वे स्वयं तैयार हैं। श्री प्रसाद के कथन का निचोड़ यह था कि दूसरे वर्गों के कानूनों की तथाकथित खामियों को देखने के पूर्व अपने वर्ग के कानूनों की खामियों पर गौर करना चाहिए। उन्होंने यह भी अनुरोध किया कि इस मुद्दे पर हड़बड़ी में कोई प्रस्ताव पारित करने से मंच को बचना चाहिए। समान नागरिक संहिता के समवेत तथा सम्यक रूप से निर्माण करने के लिए परिपक्व समय आने में वर्षों की प्रतीक्षा करनी पड़े तो की जानी चाहिए।

संगोष्ठी के निर्धारित विषय पर एक आलेख पर प्रस्तुत करते हुए मंच के राष्ट्रीय महासचिव **सिद्धेश्वर** ने स्वीकार किया कि बहरहाल यह सवाल थोड़ा पेचीदा अवश्य है पर इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि देश के सभी नागरिकों के लिए समान नागरिक संहिता बनाने की दिशा में प्रयास किया जाना चाहिए। संगोष्ठी में **श्री जौहर** ने तलाक एवं वसीयत की गुत्थियों को विस्तार से प्रस्तुत करते हुए सुधीजनों को एक अच्छी खासी जानकारी मुहैया करायी।

डॉ. शाहिद जमील ने समान नागरिक संहिता बनाने के पूर्व शादी-विवाह तलाक तथा वसीयत जैसे मुद्दों पर व्यवहारिक दृष्टिकोण अपनाने की बात कही।

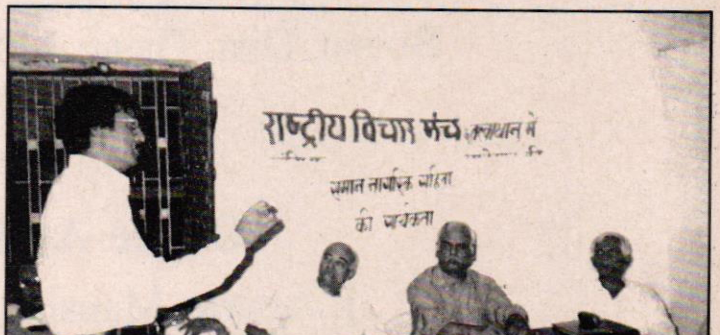

प्रारंभ में **के.बी. प्रसाद** ने संगोष्ठी का विषय प्रवर्तन करते हुए मंच द्वारा देश की ज्वलंत समस्याओं पर किए जा रहे सेमिनार को एक सार्थक कदम बताया तथा समान नागरिक संहिता की सार्थकता पर प्रकाश डाला। पटना ब्रांच ए.जी. ऑफिस सहकारी गृह निर्माण समिति के सचिव **अवधेश प्रसाद सिन्हा** ने शुरू में मान्य अतिथियों का स्वागत किया तथा मंच के महासचिव **मनोज कुमार** ने आभार व्यक्त किया।

प्रस्तुतिः मनोज कुमार, पटना से

DENSA

PHARMACEUTICALS PVT. LTD.

Fact. Add. :Plot No. 10, Dewan&Sons Udyog Nagar,
Taluka Palghar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Phone No.: (952525) 55285èk54471, Fax: 55286

&

DANBAXY

PHARMACEUTICALS PVT. LTD.

(SOFT GELATIN)

Fact. Add: Plot No. K-38, MIDCTarapur,

Boisar, Dist. Thane, MAHARASHTRA

Office Address:

1, Anurag Mansion, Ashokvan,
Shiv Vallabh Raod, Dahisar (E),
Mumbai-400068
Phone No.: 8974777, Fax: 8972458

MR. DEVENDRA KUMAR SINGH, C.M.D

MAHESH HOMOEPATHIC LABORATORY & GERMAN HOMOEO STORES

Saket plaza, Jamal Road,
Patna-800001
Ph:(0612) 2238292 (O) 2674041 (R)

Offers a wide range of mother Tinchers, Dillutin Biochemic Tablet patents, Globels

Dr. Mahesh Prasad
D.M.S. (Patna)

Dr. Arun kumar
D.H.M.S (Patna)

Spcialist in chronic Diseases

रचनाकारों से

(1) रचना भेजने के लिए कोई शर्त नहीं है, सभी रचनाकारों का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। उदीयमान रचनाकारों को विशेष रूप से प्रोत्साहित किए जाने का प्रयास रहेगा।
(2) राष्ट्रीय भावनाओं पर आधारित तथा वैचारिक रचनाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।
(3) रचना एक तरफ/कम्प्यूटर पर कम्पोज्ड अथवा सुवाच्य स्पष्ट लिखी होनी चाहिए।
(4) रचना के अंत में उसके मौलिक अप्रकाशित व अप्रसारित होने के प्रमाण पत्र के साथ रचनाकार का नाम व पूरा पता अवश्य लिखा होना चाहिए।
(5) रचना के साथ पासपोर्ट/स्टाम्प आकार की श्वेत एवं श्याम तस्वीर की दो प्रतियाँ अवश्य संलग्न करें।
(6) प्रकाशित रचनाएँ वापस नहीं की जाती, कृपया उसकी प्रति अवश्य रख लें।
(7) प्रकाशित रचनाओं पर फिलहाल पारिश्रमिक देने की कोई व्यवस्था नहीं है, हाँ, रचना प्रकाशित होने पर अंक की प्रति अवश्य भेजी जाऐगी।
(8) किसी भी विधा की गद्य रचनाएं 1500 शब्दों अथवा दो पृष्ठों की मर्यादा में ही स्वीकार्य होंगी।
(9) समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियां भेजना आवश्यक है।
(10) रचनाएं कम्प्यूटर पर कम्पोज्ड कराकर उसे इन्टरनेट पर भेजें जिसका **E-mail - vichardrishti@hotmail.com**

सिद्धेश्वर
सम्पादक, विचार दृष्टि दृष्टि 6, विचार बिहार,
यू-207, शकरपुर, विकास मार्ग, दिल्ली-92,
दूरभाष: (011) 22530652

अद्वितीय राष्ट्रनिर्माता सरदार पटेल

बाबू गुप्तनाथ सिंह

सरदार पटेल भारत के महान् नेता थे। देश में और भी अनेक बड़े नेता हो गये हैं। कोई लक्ष्मी का लाडला होने कारण, कोई बड़े बाप का बेटा बनने की वजह से, कोई पण्डित-पुरोहित के पुत्र या पौत्र होने के बहाने, कोई महज संयोगवश, कोई अपने वैभव-विलास और शान-शौकत का सीधे-सादे लोगों पर दम्भ-दुरभियान प्रकट करके,.कोई अपनी धूर्तता से भोली-भाली जनता की आंखों मं धूल झोककर अपनी कुटिलता कुठार पकड़कर और कोई किसी अन्य साधन के सहारे नेता बना। किसी को एक बात का बल तो किसी को दूसरे साधन का सहारा। और वल्लभभाई को? उनकी स्थिति सबसे भिन्न! उनको न धन का बल, न अन्य किसी साधन का सहारां उनके नेतृत्व का आधार था उनका तप, त्याग, तेजस्विता, परिश्रम, प्रयत्न, पुरुषार्थ और प्रतिभा। देश में कुछ और भी त्यागी-तपस्वी नेता माने जाते हैं, पर उनमें जितनी त्याग-तपस्या बतायी जाती है, उससे अनेक गुणा अधिक थी उमें भोग के प्रति भक्ति। सरदार महान् दशभक्त थे, और भी अनेक देशभक्त हो गये हैं। पर वल्लभभाई की देश्भक्ति लोकैषणा के लवण में लिपटने वाली नहीं थी, वह पूर्ण अनासक्त थी-जलकमलवत्। वे असहयोग थे और भी असंख्य असहयोगी अधाकचरा नहीं था।

असहयोग आन्दोलन काल में अपनी संतानों को सरकारी स्कूल-कॉलेजों से हटाना तो दूर रहा हमारे बहुसंख्यक वरिष्ठ नेता उन्हें इंगलैण्ड भेजने तक का लोभ संवरण न कर सके, जबकि सरदार ने अपनी दोनों संतानों-मणि बहिन और डाह्याभाई को सरकारी संस्थाओं से जो हटाया तो सदा के लिए उन्हें राष्ट्रीय विद्यापीठ का विद्यार्थी बना दिया। सरदार पटेल की वाणी में थोथी वाग्वीरता नहीं थी-उनके प्रत्येक शब्द में कमीरता का पुट रहता था-वे सच्चे कर्मयोगी थे। जिस बात को सही समझ लेते थे उसे पूरा करके ही दम लेते थे। वे बाहर से अति कठोर थे-बहुत ही रुक्ष और भयावने दीखे थे, परंतु भीतर से वे अन्तःसलिला सरस्वती के समान सरस थे। मुखमण्डल जितना गंभीर था, अन्तःकरण उतना ही मृदुल था। उनके हृदय में दुःखियों के लिए करुणा की धारा बहती रहती थी तो अन्याय, अत्याचार और शोषण दोहन को जलाकर भस्मशात् कर देने वाला ज्वालामुखी भी जलता रहता था। वे 'वज्रादपि कठोराणि मृदूनी कुसुमादपि'-वज्र से भी कठोर और कुसुम से भी कोमल थे। सरदार पटेल बड़े मितभाषी थे, उनसे भी बढ़कर मितभाषी होंगे, पर सरदार के मुख से जो थोड़े से शब्द निकलते थे, उन्हें

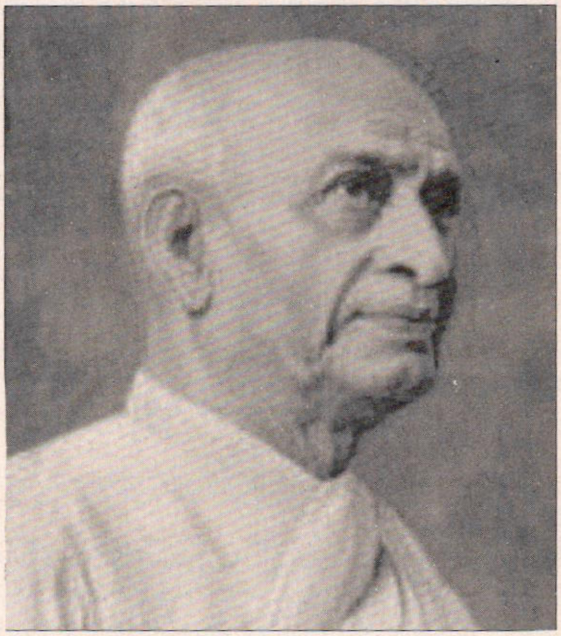

सुनकर जहां निराशा-निष्ठा के घोर अन्धकार में भटकने वालों को आशा-उषा का आलोक मिल जाता था, वहां क्रूर, कुटिल और कुविचारी कांप उठते थे, उनके दिल दहल जाते थे। सरदार पटेल पटु प्रशासक माने जाते थे और भी अनेक प्रवीण प्रशासक माने जाते थे(और भी अनेक प्रशासक हुए होंगे। पर सरदार के संकेत मात्र से बड़े नेता, अधिकारी, अत्याचारी, भष्टाचारी, मंत्री, मुख्यमंत्री आदि ठीक उसी प्रकार दुबक जाया करते थे, जिस प्रकार बिजली की छड़ी देखकर सरकस के शेर सटक जाते हैं, जबकि देश के दूसरे प्रशासकों की घमण्ड

भरी घुड़कियों को सुनकर भी लोग अनसुनी कर देते हैं, किसी के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती, अराजकता का अन्धेरखाता चलता रहता है, भ्रष्टाचार की भट्ठी भड़कती रहती है। वल्लभ भाई सत्ता-शक्ति के केन्द्र थे, और लोग भी सत्ता शक्ति के केन्द्र हो गये है(पर जहां दूसरों ने अपनी अयोग्य संतानों, सगे-संबंधियों और जाति-बंधुओं को उच्चासन पर बैठाने में, उनकी जेब भरने में तनिक भी संकोच नहीं किया, वहां लौह पुरुष ने अपनी सुयोग्य संतानों और सगे-संबंधियों का भी, जिन्होंने स्वातंत्र्य-संग्राम में सक्रिय भाग लेकर देश की बहुमूल्य सेवा की थी, अपना सर्वस्व स्वाहा कर दिया था, सत्ता-सोपान के समीप पहुंचाने में नाम मात्र की भी सहायता नहीं पहुंचाई। उन्होंने दूसरे बहिन तथा पुत्र डाह्याभाई को किसी पद नहीं बिठाया और न बड़े कारखाने का मालिक बनाकर उन्हें करोड़पति बनाने का प्रयास किया। स्वयं शोषण-दोहन में लिप्त रहने की सामाजिक न्याय की गाहे-बेगाहे तोता रटंत करने में ही दीन दुःखियों और पीड़ित-प्रताडितों का हित-साधन मानते रहे हैं, पर सरदार पटेल ने समाजवाद के कोरे नारो से नफरत करते हुए भी स्वयं अपना सर्वस्व त्याग कर फकीरी ले ली थी--न भोग-विलास का जीवन बिताया, न अपने उत्तराधिकारियों के लिए संपत्ति का संचय किया! ऐसा तो था सरदार का सात्विक समाजवाद।

सरदार को कुल परंपरा भी अन्य नेताओं से निराली थी। सरदार पटेल का जन्म अपनी तेजस्विता, आन, टेक और कृषि-कौशल के लिए विख्यात लेवा पाटीदार कूर्मि कुल के एक साधाारण आर्थिक स्थिति वाले कुटुम्ब में हुआ था। उनका विद्याध्ययन भी अनोखा था। साधानहीन होने पर भी स्वावलम्बन के सहारे सरदार पटेल

ने बैरिस्टरी की परीक्षा में ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के देशों के परीक्षार्थियों में सर्वश्रेष्ठ स्थान प्राप्त करके अंगरेज विद्वानों को चकित कर दिया था। क्या कोई कल्पना कर सकता है कि एक देहाती किसान का साधनहीन पुत्र ब्रिटिश राष्ट्रमंडल के सारे परीक्षार्थियों में प्रथम स्थान प्राप्त करने की क्षमता वाला भी होगा? उन्होंने कानूनी पेशे में भी कमाल कर दिखलाया था।

सरदार पटेल का अपने वैभवपूर्ण जीवन से विराग ले लेना भी बेजोड़ था। उन्होंने स्वेच्छा से जीवन भर के लिये गरीबी का वरण कर लिया था, जब दूसरे नेताओं ने कुछ त्याग किया तो उससे अधिाक मांग की भक्ति की।

किसानों के कर्णधार–

सरदार पटेल किसानों के कुशल कर्णधाार थे। खेड़ा और बारदोली के किसान आंदोलनों द्वारा गांधीजी के सतय-अहिंसा के सिद्वांत को फ़ल बना देना भी सरदार पटेल के ही बूते की बात थी। उन्होंने सिद्व कर दिया कि किसान राष्ट्र की रीढ़ है और वह अपनी वीरता, त्याग और बलिदान द्वारा अपने अधिकारों की रक्षा में सर्वथा समर्थ है।

आदर्श अनुशासक–

सरदार पटेल अप्रतिम अनुशासक थे। वे स्वयं अनुशासन में रहते और दूसरों को भी अनुशासन में रखते। अनुशासन के विरुद्व आचारण करने वालों को, चाहे वे कितने भी बड़े क्यों न माने जाते हों दंडित करके ही दम लेते थे। उन्होंने अपने जीवन काल में कितने ही प्रभावशाली व्यक्तियों को, अनुशासन हीनता के अपराध में पकड़े जाने पर सार्वजनिक जीवन से सदा के लिये अलग कर दिया। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्रि डॉ. खरे तथा मुंबई के प्रख्यात नेता नरीमान जैसे व्यक्ति तक सरदार पटेल के अमोध बाण से न बच पाये। ऐसा करने में उन्हें कटुता सहन करनी पड़ती थी, उन पर आलोचनाओं के आयुध भी छोड़े जाते थे, पर उन्होंने इस बात की कोई परवाह न की कि कौन क्या कहता है। सरदार जैसे अनुशासक के अभाव में आये दिन अनुशासनहीनता का अकांड तांडव रहता है-शासक, सेवक सभी अनुशासनहीन बन गए हैं।

स्वातंत्र्य-संग्राम के फ़ल सेनानी

सरदार पटेल महान् योद्वा और स्वातंत्र्य-संग्राम के सफल सेनानी थे। देश की स्वतंत्रता और जन सम्मान के लिए ये जीवन भर युद्व रत रहे, सैन्य संचालन किया और प्रत्येक मोर्चे पर विजयी हुए। नागपुर के झंडा सत्याग्रह एवं बोरसद की लडाई का नेतृत्व वल्लभ भाई ने ही किया था।

समस्याओं के समाधाता–

सरदार पटेल राष्ट्र की समस्याओं के सिद्व समाधाता थे। राष्ट्र के सम्मुख जितनी भी समस्याएं उठतीं, उनका उन्होंने समुचित समाधान निकाला। जटिल से जटिल समस्याओं के समाधान का भार सदा उन पर ही डाला जाता था।

आजाद हिंद फौज के सैनिक न्यायालय में दण्डित होकर गोली से उड़ा दिए गये थे-सरदार पटेल की सूक्ष्म चौकसी के फलस्वरूप हो, गांधी जी के अनजान में ही सैनिक गोपनीयता में, आजाद हिंद फौज के बचे-खुचे सैनिक भारत लाये जा सके थे और सरदार ने उनकी सहायता के लिए पर्याप्त धान का संग्रह किया था। उन्होंने उन पर चले मुकद्दमे स्थगित करने के पक्ष में यह अकाट्य तर्क पेश किया था कि यदि जर्मन सरकार की ओर से देशद्रोहात्मक प्रचार करनेवाले भारत के तत्कालीन स्वराष्ट्र सचिव एमरी के पुत्र पर चलाया जाने वाला मुकद्दमा स्थगित हो सकता है तो भारत की स्वतंत्रता के लिए युद्व करने वाले आजाद हिंदी फौज के देशभक्त सैनिकों पर चलाए जाने वाले मुकद्दमें क्यों नहीं स्थगित हो सकते?

अपने समय के विलक्षण बैरिस्टर होने हुए भी, बैरिस्टरी छोड़ चुकने के बाद आजाद हिंदी फौज के सैनिकों का मुकद्दमा आरंभ होने पर उन्होंने कानूनी पैरवी का काम भूलाभाई देसाई को सौंप दिया। स्वयं कानूनी पैरवी न कर वे सैनिकों को आर्थिक सहायता पहुँचाते रहना ही उचित समझा, जब कि कतिपय दूसरे नामी नेता जिनकी वकालत नाम मात्र की भी नहीं चली थी, आत्मविज्ञापन के लिए झट लाइसेंस का नवीनीकरण करा गाउन पहनकर सैनिक इजलास में खड़ा होने का हास्यास्पद काम किया।

इसी प्रकार जब 1946 ई के फरवरी मास में जल सेना के कर्मचारियों ने विद्रोह कर दिया था तो भयंकर स्थिति उत्पन्न हो गई थी। उसमें 200 व्यक्ति मारे गये थे ।और एक हजार के लगभग घायल हो गये थे। बाद में इस विद्रोह को दबाने के लिये, जिसमें विद्रोहियों ने 74 जहाजों, 4 जहाजी बेड़ों ओर 4 बड़े जहाजी अड्डों सहित 20 तटीय जहाजी संस्थानों को प्रभावित कर दिया था और 23 जहाजों पर पूरा कब्जा कर लिया था, सुविशाल ब्रिटिश सैनिक शक्ति का प्रयोग करने की धमकी दे दी थी। इस जल सैनिक एवं वायु सैनिक हड़ताल और विद्रोह से गांधी जी बहुत चिंतित हो उठे। उन्होंने इसे अनुचित और अवांछनीय बताया था। सरदार पटेल के मना करने पर भी समाजवादियों को प्रसन्न करने के लिये जवाहर लाल नेहरू मुंबई तक दौड़े गए थे। विद्रोह का प्रसार मुंबई, मद्रास, करांची, दिल्ली आदि प्रमुख नगरों तक हो गया था। स्थिति अत्यन्त विस्रोटक और नाजुक थी। विद्रोहियों की उचित मांगों को पूरा कराने के आश्वासन के साथ आत्म समर्पण कर देने की सलाह देकर सरदार ने देश को भारी संकट से बचा लिया। केवल सरदार की बुद्विमत्तापूर्ण, संतुलित मस्तिज्क, साहसपूर्ण दृढ़ता से ही यह जटिल समस्या सुलझ सकी थी। इसी तरह भारतव्यापी डाकखाना कर्मचारियों की हड़ताल का भी सरदार पटेल ने, लार्ड वेवल के अनुरोध पर, समाधान निकाला था।

भारत की एकता का निर्माण

स्वराज्य-प्राप्ति के बाद उत्पन्न अनेक जटिल समस्याओं में सरदार ने जिस अद्‌भुत क्षमता एवं प्रशासकीय पटुता-प्रवीणता का परिचय दिया, वह उनकी अजेय शक्ति और सामर्थ्य का द्योतक है। 15 अगस्त, 1947 ई. को जब अंगरेजी शासन का भारत में अंत हुआ और देशवासी स्वतं॰ नागरिक बने, तब अंग्रेज शासकों की कुटिल नीति के कारण 562 स्वतंत्र देशी रियासतें भयभत करने लगीं। अंग्रेज भारत को छोड़कर जाते समय मन ही मन खुश हो रहे थे कि ये स्वतंत्र दशी रियासतें सांप बनकर भारतीय स्वराज्य को डंस मारेंगी। पर वाह रे, सरदार की सूझ-बूझ! उन्होंने अपने कार्य-कौशल से इन स्वतं॰ ।रियासतों का भारत में विलयन कर उन्हें गणराज्य का अविभाज्य अंग बना दिया। ऐसी अनोखी सरदार पटेल-प्रदत्त भारत की वह एकता जो संसार के इतिहास में अतुलनीय है।

अन्य अधिकांश राजा-महाराजाओं की रियासतों के भारत संघ में विलय के बाद भी

कुछ रजवाड़े-नबाब भी बच रहे थे जो पाकिस्तान से मिलकर भारत को भून डालने का षड्यंत्र कर रहे थे। पर सरदार पटेल की दृढ़ता, नीतिज्ञता, विवेक और वीरता ने उनके चक्र-वालों को चकनाचूर कर दिया।

जूनागढ़ के नबाब ने तो पाकिस्तान में शामिल होने की घोषणा तक रक दी थी। हैदराबाद की हेकड़ी का तो कुछ कहना ही नहीं था। यदि सरदार पटेल दृढ़ता से काम न लेते तो हैदराबाद के भारत भूमि में तीसरे पाकिस्तान का रूप धारण कर लेने में कोई संदेह न था। हैदराबाद का होश ठिकाने लगाने के लिये दो-दो बार अभियान करने की तिथि रखी गई, पर भारत सरकार के कतिपय मुसलमान परस्त नेताओं और मंत्रियों के कारण अभियान स्थगित होता रहा, तीसरी बार हैदराबाद पर पुलस कार्वाही की अंतिम तारीख जब 13 सितंबर, 1949 रखी गई तो अंग्रेज सेनापति ने पुन: 2 दिन के लिए रुक जाने की सलाह दी और प्रधानमंत्री ने उसका समर्थन किया, वे बहुत झुंझलाए-बौखलाए भी पर सरदार पटेल ने किसी की बात पर धयान न देकर ठीक समय पर भारतीय सेना को हैदराबाद में प्रवेश करा दिया। यदि एक दिन की भी देर होती तो हैदराबाद का भारत में विलय होना असंभव हो जाता--वह सरदार पटेल के शब्दों में भारत मां के पेट का हमेशा के लिये कैंसर-नासूर बना रह जाता! जिस हैदराबाद का रजाकार नेता कासिम रिजवी, दिल्ली के लाल किले पर अस्फ़जाही झंडा फहराने की बात करता था, उसी हैदराबाद ने भारतीय सेना के समक्ष 108 घण्टे में ही घुटने टेक दिए। हैदराबाद विजय के बाद प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू हैदराबाद गए तो निजाम उनसे मिलने तक नहीं आया, पर सरदार पटेल के जाने पर वह एक घण्टा पहले से ही हवाई अड्डे पर खड़ा था।

जिस काम को चाणक्य और चन्द्रगुप्त नहीं कर सके, जिसे पूरा करने में अशोक और अजातशत्रु असफल रहे, जिसे सिद्व करने में पुरुष पुंगव हर्ज़ को हताशा होना पड़ा, जिसे हासिल करने में अकबर और औरंगजेब जैसे बलशाली बाद के ऊपर छोड़ दिया था। शेख अब्दुल्ला के पाकिस्तान-प्रेमी होने का बारे में सरदार पटेल को जो अभिमत था वह आगे चलकर शत-प्रतिशत सत्य साबित हुआ, सरदार पटेल और गांधीजी कश्मीर के मामले में राष्ट्रसंघ में भेजने के विरुद्व थे, पर जवाहरलाल जी को अपने अन्तरर्राष्ट्रीय ज्ञान का बहुत गर्व था-इसलिए किसी की बात न मानकर उन्होंने वहां मामले को पेश किया। परिणामत: आज तक समस्या नहीं सुलझ सकी और उत्तरोत्तर जटिल से जटिलतर ही होती जा रही है। इसी प्रकार नेहरू जी द्वारा तिब्बत पर चीनियों का प्रभुत्व स्वीकार करने का भी सरदार पटेल ने विरोधा किया था और चीनी चक्रवात के विज़य में अपनी मृत्यु के पहले ही 7-11-50 को चेतावनी का पत्र लिखा था, किन्तु जवाहरलाल ने चीन की चिकनी-चुपड़ी पर मुग्धा होकर सरदार पटेल की चेतावनी पर धयान नहीं दिया। इतिहास साक्षी है कि चीन की भविष्यवाणी की थी, वह कुछ ही वर्ज़ों बाद सत्य सिद्व होकर रही। चीन ने भारत-भूमि पर आक्रमण ही नहीं किया, वरन् उसके सुविस्तृत भूभाग पर सर्वदा के लिये अपना अधिकार भी जमा लिया।

सरदार पटेल ने अपने जीवन काल में देश की प्राय: सभी जटिल समस्याओं को सुलझा दिया था। जो कुछ रह गई थीं, उनके मार्ग में यदि रोड़े न अटकाए गए होते तो वे भी सुलझ गई होती। यह दु:ख और दुर्भाग्य की ही बात है कि सरदार पटेल के जीवन-काल में जो समस्याएं, आर्तरिक अडंगेबाजी के कारण, बिना सुलझे रह गई, वे आज भी बिकराल रूप में देश को निगल जाने के लिये मुंह बाए खड़ी हैं।

यदि सरदार पटेल ने अपनी लोकप्रियता और बहुमत के बल पर प्रधानमंत्री बनने का आग्रह किया होता और वे प्रधानमंत्री हुए होते तो देश का दूसरा ही नक्शा होता। देश दुर्गति के दावानल में तिल तिल करके न जलता। सरदार पटेल ने अपने जीवन में जो यश अर्जित किया, वह अक्षय है। आगे आने वाली पीढ़ियां उन्हें देश का नेता मानती रहेंगी। उनका जीवन इतिहास का ऐसा अमर अघ्याय बन गया है, जिसे क्रूर, काल भी मिटा न सकेगा।

बाबू गुप्तनाथ सिंह स्मृति ग्रंथ से साभार कुछ अंश

With Best Compliments from
Racy Style BOUTIQUE
HOUSE OF FASHION

All types of Accessories, Embroidory work, Stiching, designer, dresses & Sarees, Bridal Wear, Latest designed Clothes for Suits & Tops
Raj Tower (Sahara India)
Shop No.-21, Ist Floor,
Beside Allahabad Bank,
Boring Road Crossing, Patna-1

लोकनायक जयप्रकाश नारायण जिन्होंने राजनैतिक चिंतन को नयी दिशा दी

✍ शैलजा सक्सेना

इतिहास के पथ पर महापुरूषों का जीवन क्या है? प्रकाश-स्तंभ है। महापुरूषों का जीवन, उनका व्यक्तित्व और उनके कार्य-कलाप हमें प्रेरणा प्रदान करते हैं, प्रकाश दिखाते हैं कि हम भी कुछ कर दिखायें। अंग्रेजी के विख्यात कवि एच. डब्लू. लांगफेलो के शब्दों में-

Lives of great men all remind us-
We can make our life sublime
And departing leave behind us-
Foot-prints on the sands of time.

भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के दुर्दम्य सेनानी, गांधीवाद और समाजवाद के नये व्याख्याता और निर्दलीय शासन-व्यवस्था के अथक समर्थक और "सम्पूर्ण क्रांति" के प्रणेता लोकनायक जयप्रकाश नारायण विगत शताब्दी के अन्यतम महापुरुष थे। उनका जन्म एक साधारण परिवार में, उत्तरप्रदेश के 'बलिया' जिले के 'सिताब दियारा' गाँव में ग्यारह अक्टूबर, उन्नीस सौ दो (11 अक्टूबर 1902 ई.) को हुआ था। माता का नाम फूलरानी और पिता का नाम हरसू दयाल था। उनकी छः संताने थीं-तीन बेटे और तीन बेटियां। इस छः में जयप्रकाश का स्थान चौथा था। इनके बचपन का नाम था- 'बडलजी'। प्राइमरी शिक्षा 'सिताब दियारा गाँव' में हुई। आगे की स्कूली शिक्षा पटना(बिहार की राजधानी) के 'पटना कॉलिजिएट स्कूल' में सन् 1919 में। प्रथम श्रेणी में मैट्रिक पास होकर इन्हें 'मेरिट स्कालरशिप' मिला था। अठारह साल की उम्र में इनका विवाह उन्हीं ब्रजकिशोर बाबू की बेटी प्रभावती से हुआ था, जिन्होंने महात्मा गाँधी को चम्पारण में निलहे साहबों के अत्याचारों के खिलाफ 'सत्याग्रह' कराया था। सबसे पहला सत्याग्रह।

तदंतर सन् 1920 में जयप्रकाश नारायण गांधीजी के 'असहयोग आंदोलन' में शामिल होने के लिए बेचैन हो उठे परंतु इसी बीच फरवरी, 1922 में 'चौराचौरी-कांड' के कारण गाँधी जी ने अपना 'असहृयोग आंदोलन' वापस ले लिया। तब सन् 1922 में जयप्रकाश उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए अमेरिका चले गये। वहाँ से समाजशास्त्र में एम.ए. करके सन् 1929 के सितम्बर में वे भारत लौटे। उन दिनों भारत में 'पूर्ण स्वराज्य' का राष्ट्रीय आंदोलन तेजी से चल रहा था। जयप्रकाश(जे.पी.) भी आंदोलन में कूद पड़े। सन् 1932 में उन्होंने 'कांग्रेस समाजवादी दल' की स्थापना की।

इसी बीच सन् 1934 की 15 जनवरी को बिहार में भयंकर भूकम्प आया। सारा बिहार चीत्कार उठा। तब भूकम्प-पीड़ित लोगों की सहायता करते हुए जे.पी. ने बिहार को ही अपने राष्ट्रीय कार्य-कलापों की भूमि बनाने का निश्चय किया। सन् 1934 की 17 मई को पटना के 'अंजुमन इस्लामिया हॉल में' में आचार्य नरेन्द्र देव की अध्यक्षता में पूरे भारत के लगभग सौ प्रतिनिधियों का सम्मेलन हुआ जिसमें 'कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी' का गठन किया गया।

सन् 1939 की पहली सितम्बर को 'द्वितीय विश्व-युद्ध' छिड़ने पर जे.पी. ने उसे 'साम्राज्यवादी युद्ध' कहते हुए अंग्रेज-सरकार का विरोध किया, जिस कारण उन्हें 'देवली कैम्प जेल' में बंद कर दिया गया। सन् 1942 की 'अगस्त क्रांति' के समय जयप्रकाश हजारीबाग जेल में बंदी थे। क्रांति को नेतृत्व देने के उद्देश्य से वे जेल की दीवार फाँदकर बाहर निकल भागे। गुप्त रूप से उन्होंने 'अगस्त क्रांति' का संचालन किया। इस दौरान कितनी बार स्थान बदले। 'अगस्त क्रांति के वे बहुत बड़े' 'हीरो'(नायक) बन गये थे। सन् 1943 में 'फ्रंटियर मेल' से यात्रा करते हुए वे मुगलपुरा स्टेशन पर गिरफ्तार कर लिये गये। लाहौर किले की जेल में उन्हें कठोर यात्राणाएं दी गयीं। फिर आगर जेल में। 'कैबिनेट मिशन' जब 1946 में भारत आया तब गांधी जी के आग्रह पर 1946 के ग्यारह अप्रैल को जयप्रकाश को जेल से रिहा कर दिया गया।

इधर पूरे देश में वे 'अगस्त क्रांति' के 'महा-नेता', के रूप में प्रतिष्ठित हो चुके थे। पूरे भारत में जयप्रकाश की रिहाई का शानदार स्वागत किया गया। अनेक संस्थानों की ओर से उनके अभिनंदन के अवसर पर हिंदी के स्वनामधन्य राष्ट्रकवि रामधारी सिंह 'दिनकर' ने जयप्रकाश के प्रति लिखी गयी अपनी कविता में कहा था-

सेनानी करो प्रयाण अभय,
भावी इतिहास तुम्हारा है
ये नखत अमा के बुझते हैं,
सारा आकाश तुम्हारा है!

अंग्रेज हिन्दुस्तान को छोड़कर जानेवाले थे-कांग्रेस के हाथों में सत्ता सौंप कर। अतः कांग्रेस सत्ता-लोलुप हो चली थी। जयप्रकाश ने कांग्रेस की इस सत्ता-वादी लोलुपता को बड़ी गहराई से अनुभव किया और उपेक्षित 'कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी' गाँधी-नेहरू वाली कांग्रेस से अलग हो गयी। सन् 1947 की फरवरी में कानपुर में 'कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी' का वह बहुत बड़ा सम्मेल हुआ जिसमें 'कांग्रेस' शब्द काट दिया गया और तब बन गयी सोशलिस्ट पार्टी।

जब फरवरी 1947 में ब्रिटिश हुकूमत ने 'सत्ता-हस्तांतरण', की घोषणा कर दी तब देश-विभाजन के लिये नेहरू और पटेल तैयार हो गये। जयप्रकाश और डॉ. राम मनोहर लोहिया दो ऐसे व्यक्ति थे जो 'कांग्रेस कार्य-समिति' की बैठक में (14-15 जून, 1947) देश-विभाजन का विरोध कर रहे थे। गाँधी जी नेहरू को मना नहीं कर सके। जयप्रकाश ने विरोध में 'सत्याग्रह' की बात कही तो गाँधी जी ने उन्हें रोक दिया। इस

प्रकार, देश का विभाजन हो गया जिसका खामियाजा आज तक हम लोग भोग रहे हैं। कांग्रेस में राजनीति से सदाचरण विदा हो चुका था। कांग्रेस अब येन-केन-प्रकरण सत्ता में रहना चाहती थी। समाजवादी और खास कर जयप्रकाश और लोहिया बिल्कुल अकेले पड़ गये। जयप्रकाश अब सर्वोदय की ओर मुड़े। यह जयप्रकाश के जीवन का एक नया अध्याय था। जयप्रकाश-द्वारा दलीय राजनीति का ऐसा परित्याग बीसवीं शताब्दी के राजनैतिक इतिहास की अद्भुत अभूतपूर्व घटना है।

जयप्रकाश ने राजनीतिक चिंतन को एक नयी दिशा दी-एक नया आयाम दिया-कि राजनीतिक पार्टियां जनता की भाग्य-विधाता बन जाती हैं-छल-छद्म से, बलपूर्वक चुनाव जीतकर। परंतु जनता की भलाई का काम नहीं करतीं, बल्कि अपना स्वार्थ सिद्ध करती है। अत: उन्होंने दल-मुक्त लोकतंत्र(च्तजल.समे क्मउवबतंबल) का सुझाव दिया। लेकिन सत्ता-धारी सुनते किसकी हैं?

कांग्रेस के शासन-काल में देश की हालत बिगड़ती चली गयी-महंगाई, गरीबी, भुखमरी, भ्रष्टाचार। सत्ताधारियों द्वारा जनता पर अत्याचार। आग सुलगती गयी और सन् 1974 में आग ने विकराल ज्वाल का रूप धारण कर लिया-'बिहार आंदोलन'। आंदोलन शुरू किया था छात्रों ने। छात्रों-युवकों के आग्रह पर नेतृत्व दिया जयप्रकाश ने। यह आंदोलन पूरे देश में फैल गया। तब घबड़ाकर तत्कालीन केन्द्र-सरकार की प्रधान मंत्री इंदिरा गांधी ने 26 जून 1975 को 'आपात् स्थिति' की घोषणा की आड़ में कितनी को जेल में ठूस दिया। जेल में कठोर यंत्रणाएं दी। जयप्रकाश जब जेल में मरने-मरने को हो गये तब उन्हें 12 नवम्बर 1975 को जेल से रिहा किया गया।

अचानक 18 जनवरी 1977 को इंदिरा गांध ी ने लोक-सभा-चुनाव की घोषणा कर दी। विभिन्न राजनीतिक पार्टियां (जो कांग्रेस-विरोधी थीं) जयप्रकाश के नेतृत्व में चुनाव लड़ीं(जनता पार्टी के नाम से) और चुनाव में विजयी हुई। यह एक बहुत बड़ा राजनैतिक चमत्कार था जिसे जयप्रकाश नारायण ने कर दिखाया। वे वास्तव में 'लोकनायक' थे। राष्ट्रकवि 'दिनकर' की वाणी सत्य निकली-इंदिरा गांधी को प्रधानमंत्री की कुर्सी छोड़नी पड़ी-

सिंहासन खाली करो
कि जनता आती हैं!

संपर्क: महिला चरखा समिति
कदमकुआँ, पटना-4

जे.पी. की कालजयी प्रासंगिकता

प्रो. (डॉ.) लखनलाल सिंह'आरोही'

1974 के जे. पी. आंदोलन में मैं शरीक नहीं अलग हाशिए पर खड़ा था। धारा के बाहर तट पर खड़ा होकर मैं बड़ी उत्सुकता और बारीकी से आंदोलन की गतिविधि को देख रहा था। एक बड़ा तूफानी दौड़ था। रोज-रोज निकलनवाले जुलूश में सब तरह के लोग सम्मिलित रहते थे-सभी तबके के लोग, अच्छे भी, बुरे भी। युवकों की भागीदारी ज्यादा थी। परिवर्तन के लिए उन्मादी जन-सैलाव उमड़ पड़ा था। कांग्रेसी और कम्युनिष्टों को छोड़कर प्राय: सभी राजनीतिक दल के नेता-कार्यकर्त्ता भी इस जन-प्लावन में शामिल थे।

जे.पी. का यह आंदोलन जन-आंदोलन था जो व्यवस्था परिवर्तन के लिए संपूर्ण क्रांति से प्रेरित था। जे.पी. सत्ता-परिवर्तन के लिए नहीं-व्यवस्था परिवर्तन के लिए सड़क पर उतरे थे और सत्ता के विरूद्ध आवाज उठाने के कारण पुलिस की लाठी से घायल हुए थे। जे.पी. का सपना एक नए स्वस्थ समाज-निर्माण का था जिसके लिए उन्होंने संपूर्ण क्रांति का कार्यक्रम जनता को दिया। संपन्न दृष्टि वाले जे.पी. पूरी तरह आश्वस्त थे कि व्यवस्था परिवर्तन से ही एक नए स्वस्थ समाज का निर्माण किया जा सकता है। सत्ता परिवर्तन से नागनाथ के स्थान पर सांपनाथ आते हैं और देश-समाज के रोगों का इलाज नही हो पाता-जनता का कष्ट दूर नहीं होता।

यह एक ऐतिहासिक जन आंदोलन था, जिसका प्रभाव राजधानी से लेकर दूर देहात के गाँवों की गलियों तक था। लोग आत्मविश्वास से भरे थे। उन्हें जे.पी. के नेतृत्व में अपूर्व आस्था थी। जे.पी. के दधीचि व्यक्तित्व ने संपूर्ण देश को आंदोलित कर दिया।

समाजवादी लेखक रामवृक्ष बेनीपुरी की जे. पी. की लिखी जीवनी मैंने अपने छात्र-जीवन में ही पढ़ी थी और तब से ही मैं उनके व्यक्तित्व-पाश में बंध गया था। मेरे हृदय में जे.पी. के प्रति अखण्ड आस्था और श्रद्धा थी और आज भी है, परन्तु उनके आंदोलन को मैं प्रशंसा की दृष्टि से नहीं देखता था। मुझे आंदोलन की सफलता में तनिक भी विश्वास नहीं था। आंदोलन में शामिल अधिकांश संस्था ऐसे लोगों की थी जो सत्ता परिवर्तन कर स्वयं सत्ता पर आसीन होने का सपना संजोए हुए थे। वे जे.पी. के सपनों के साथ नहीं थे। वे छद्म आंदोलनकारी थे।

व्यवस्था-परिवर्तन से इन छद्म आंदोलनकारियों का दूर तक रिश्ता नहीं था।

जन-आंदोलन ने इन्दिरा गांधी की सत्ता को पत्ते के समान उड़ा दिया। नए सत्ताधारियों को राजघाट में जे.पी. ने सामूहिक शपथ दिलाई। सभी राज्यों में सत्ता परिवर्तन हुआ। परन्तु सत्ता-परिवर्तन का हश्र क्या हुआ? क्या हुआ 'संपूर्ण क्रांति' का? नए सत्ताधारियों ने जे.पी. से मार्गदर्शन क्या, उनकी अपमानजनक उपेक्षा की। उनके तथाकथित अनुयायियों और शिष्यों ने उन्हें धोखा दिया। संपूर्ण क्रांति का कोई नाम लेना नहीं। जे. पी. के कथित भक्तों ने ही उनके सपनों को रौंद दिया। इतिहास में एक जन आंदोलन मजाक बनकर रह गया। बहुत कीमती आहुतियां व्यर्थ चली गई। समय के आह्वान पर उपस्थित एक दधीचि का अस्थिदान फलीभूत न हो सका।

समय आज और एक जे.पी. के पद-चाप की प्रतीक्षा कर रहा है। जे.पी. के कथित अनुयायियों, शिष्यों और भक्तों ने बिहार सहित संपूर्ण देश को भयंकर भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, गरीबी, निरक्षरता, अपराध, सांप्रदायिकता आदि के जनविरोधी अराजक स्थिति में डाल दिया है। विश्व व्यापार संगठन ने भारत की प्रभुसत्ता पर प्रश्न चिह्न लगा दिया है। देश विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों का खुला बाजार बनता जा रहा है। लेकिन देश के नेतृत्व के कपाल पर कहीं शिकन नहीं। बड़ी भयावह स्थिति है।

सरकार और जन प्रतिनिधि संवेदनहीनता से आक्रान्त हैं। दूर गाँव की गलियों में गरीबों को पीने के लिए स्वच्छ पानी की बूँद नहीं और इध र संसद और विधानमंडलों में जन प्रतिनिधि एवं मंत्रीगण अपना वेतन और पेंशन बढ़ाने में लीन हैं। ये कैसे जनप्रतिनिधि हैं जिन्हें जनता से अधिक अपनी चिन्ता है। दुनिया के किसी भी देश में जन प्रतिनिधियों को पेंशन का प्रावधान नहीं।

यह कैसी बेशर्मी है? समय 1974 से भी बदतर है। समय पुन: जे.पी. की प्रतीक्षा कर रहा है।

जब भी समय बदतर होगा, जे.पी. का इंतजार होगा। जे.पी. की कालजयी प्रासंगिकता असंदिग्ध है-

"बुझ जाता है दीप
आलोक अमर रहता है।"

संपर्क: "ऋतंबरा", खैरा,
पो. पतसौरी खैरा, बांका

दुष्यंत से आगे हम नहीं निकल पा रहे हैं .....

आधुनिक संदर्भों में एक सर्वाधिक लोकप्रिय काव्यविधा ग़ज़ल मूलतः एक आयातित विधा होते हुए भी आज अपने एक निजी भारतीय स्वरूप को पा चुकी है और सामाजिक सरोकारों के बीच ग़ज़ल के शेर एक महत्वपूर्ण माध्यम बने हुए हैं, ऐसा मानना है समकालीन हिंदी ग़ज़ल के एक सशक्त हस्ताक्षर लक्ष्मण का, जिसे 'विचार दृष्टि' के साहित्य प्रतिनिधि रामयतन यादव से पिछले दिनों एक भेंटवार्ता में उन्होंने व्यक्त किए। वैसे तो हिंदी ग़ज़ल के दौर में नेपाली के बाद दुष्यंत, त्रिलोचन, निराला रामावतार त्यागी, शमशेर, आरसी प्रसाद सिहं, गुलाब खंडेलवाल, डॉ. कुँवर बेचैन, डा. रमा सिंह राम, सूर्यभानु गुप्त, नीरज, राजेश रेड्डी, हनुमंत नायडू आदि रचनाकारों ने हिंदी ग़ज़ल को अपनी ग़ज़लों से संवर्द्धन किया है, किंतु उनमें सर्वाधिक देदीप्यमान नक्षत्र दुष्यंत कुमार के रूप में प्रकट हुआ, जिसने अल्पायु में ही ग़ज़ल के क्षेत्र में प्रवेश कर हिंदी ग़ज़ल को एक नयी जमीन, नई रवानी, नया काव्य शिल्प तथा नई भाव भंगिमा एक साथ प्रदान की। आपातकाल के दौरान दुष्यंत का अचानक आना और लोकप्रियता पा लेना, एक ऐसा हादसा रहा कि उसके अनुशरण पर टोले के टोले ग़ज़ल यात्रा पर निकल पड़े। आपातकाल के दबाव ने जब दुष्यंत को झकझोरा, तो गीतात्मक प्रवृत्ति से संपन्न रचनाकार के नागरिकचेता मन से जनलय निःसत हो उठी और उस वक्त पत्र-पत्रिकाओं और गायकों के माध्यमों से लोगों तक पहुंचकर वक्त की आवाज बन गई। सच कहा जाए तो दुष्यंत ग़ज़ल की दुनिया में एक ऐसे मील के पत्थर हैं, जहां से खड़ा होकर ग़ज़ल के संपूर्ण सफर का एक संतुलित तथा ठोस जायजा लिया जा सकता है। आज ग़ज़ल की रंग-विरंगी बगिया अपने सौंदर्य से सारे संसार को रंगमय कर रही है। लक्ष्मण बगिया एक ऐसे ही ग़ज़लकार हैं जो इस विधा की नई जमीन तलाश रहे हैं और जिनसे हिंदी ग़ज़ल एक नई ऊँचाई मिलने की उम्मीद है। विष्णु खरे के शब्दों में - 'लक्ष्मण के शेरों में विद्यमान दार्शनिकता ने फिराक के बाद ग़ज़ल को गालिब की जमीन पर लाने का प्रयास किया है। अपनी शायरी के माध्यम से समसामयिक जीवन के यथार्थ को स्वर प्रदान करने वाले लक्ष्मण की 'कोई घर में ढूंढ़े घर', 'जो किनारा था कभी', तथा 'मधु के द्वीप' जैसी इनकी उत्कृष्ट कृतियां प्रकाशित हो चुकी हैं। 15 मार्च, 1942 का तत्कालीन भारत के सिंध प्रदेश के गोद गांव में जनमें लक्ष्मण जी से पिछले दिनों विचार दृष्टि के प्रतिनिधि रामयतन यादव मिले और ग़ज़ल के विभिन्न आयामों सहित बदलते सामाजिक मूल्य-मर्यादाओं के बीच ग़ज़ल विधा की उपादेयता आदि पर विस्तार से उन्होंने बातचीत की। प्रस्तुत है यहां उनसे हुई बातचीत के अंश- संपादक

रामयतन - लक्ष्मण जी, मैं अपनी और पाठकों की उत्सुकता को ध्यान में रखते हुए सर्वप्रथम यह जानना चाहूंगा कि आपका जन्म कब और कहां हुआ?

लक्ष्मण - मेरा जन्म 15 मार्च, 1942 को तत्कालीन भारत के सिंध प्रदेश के एक गांव गोड-मेंछो-फ़कीर-शर, रियासत खैरपुर में हुआ। वैसे मूलतः हम उत्तरप्रदेश के सीतापुर से संबंधित बताये जाते हैं, जहां हमारे पूर्वजों की चावल की मिलें थी। मेरी पढ़ाई बतौर प्राइवेट टीचर कैंडिडेट की हैसियत से बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से हुई। इस प्रकार पुनः यू.पी. से जुड़ा।

अब आप यह बताने की कृपा करें कि साहित्य सृजन की तरफ आपका झुकाव

किन परिस्थितियों में हुआ ?

भाई रामयतन जी, बात यह है कि पढ़ने-लिखने की प्रवृत्ति हमारे परिवार को संस्कार के रूप में प्राप्त थी। कला भी हमारे खून में थी। पिताजी व बड़े भाई अच्छा गाते थे। दो अन्य बड़े भाई लिखते थे। मैं सबसे छोटा था ये प्रभाव अनिवार्यतः मुझपर पड़े। विभाजन के बाद मैं जब भारत (गुजरात) लाया गया - मेरी उम्र पांच-छः वर्ष की थी। अपना सबकुछ छोड़-छाड़कर आए थे। रोजी-रोटी की उधेड़बुन स्वभाविक थी। मुझे प्राइमरी स्कूल की पढ़ाई तक नसीब नहीं हुई। मेरी उम्र के बच्चों के लिखने-पढ़ने, स्कूल जाते देखता तो जल उठता। यही जलन रंग लाई। दूकान बंद करके घर खाना खाने न जाकर सायंकालीन संस्कृत पाठशाला में जाने लगा। संस्कृत पाठशाला के आचार्य ने मेरा पठन-प्रेम देखकर मुझे अपना मानस-पुत्र मान लिया। इस तरह बारह-तेरह वर्ष की आयु में हिन्दी-संस्कृत के माध्यम से उत्तम साहित्य का संस्कार प्राप्त हुआ। साहित्य जैसे खून में पनपने लगा। पंद्रह-सोलह वर्ष की आयु में सुमित्रानंदन पंत, महादेवी इत्यादि की रचनाएं पढ़ गया। अनुकरण भी करने लगा। कई गीत, पद और दोह भी इसी उम्र में लिखा।

पृथ्वीराज कपूर शहर में आए तो उनके नाटक देखे, उनको संवाद लिखकर दिए जिसे उन्होंने नाटक में शामिल किया। इससे मुझे काफी प्रेरणा मिली। मैथिलीशरण गुप्त के साथ पत्र-व्यवहार किया। उनका आशीर्वाद प्राप्त हुआ।

लेकिन कुछ लोग यह मानते हैं कि ग़ज़ल का मिज़ाज इतना नाजूक होता है कि इसके माध्यम से सामाजिक-राजनीतिक जीवन के खुरदरे यथार्थ को व्यक्त नहीं किया जा सकता और अगर ऐसा किया जा रहा है, तो यह ग़ज़ल विधा के साथ ज्यादती है। आप इस बारे में क्या कहेंगें ?

ग़ज़ल का मिज़ाज नाजुक था-यह ग़ज़ल की अत्यंत प्रारंभिक परिभाषा या अवस्था की बात है जो अब भूतकाल बन चुकी है। ग़ज़ल में ऐतिहासिक बदलाव आया है। ग़ज़ल का भारतीयकरण ग़ज़ल के इतिहास में एक महत्वपूर्ण साहित्यिक घटना है। ग़ज़ल अब मात्र प्रेयसी के साथ संवाद नहीं रही। ग़ज़ल का चोला और स्वभाव दोनों बदले। हिन्दी में दुष्यंत ने यह अच्छी तरह प्रमाणित कर दिया है कि ग़ज़ल मात्र रोमांटिक अनुभूतियों का मृदु-चित्रण नहीं। ग़ज़ल मात्र गेय काव्य-प्रकार नहीं। दुष्यंत की ग़ज़लों को गाने की कई व्यर्थ चेष्टाएं हुई लेकिन दुष्यंत तक आकर ग़ज़ल मर्दाना बन चुकी थी। साहित्य का एक समर्थ साधन-हथियार बन चुकी थी। ग़ज़ल सामाजिक-राजनीतिक जीवन के खुरदरे यथार्थ को व्यक्त करने के लिए कितना समर्थ या जोरदार माध्यम है यह हिंदी में दुष्यंत व अन्य भारतीय भाषाओं में अनेक ग़ज़लगों शायरों ने प्रमाणित कर दिया है।

हंस के संपादक राजेन्द्र यादव ने आरोप लगाया है कि ग़ज़ल गैर जिम्मेदारी से लिखी जा रही है। आप इस मत से सहमत हैं?

मैं राजेन्द्र यादव जी के आरोप से सहमत हूँ। इस प्रकार की प्रतिक्रिया मैंने 'काव्या' - 19 के संपादकीय में प्रकट भी की है। ग़ज़ल के साथ निहायत बचकाना हरकतें हो रही हैं। ग़ज़ल न सिर्फ गैर जिम्मेदाराना ढंग से कही या लिखी जा रही हैं बल्कि उतनी ही लापरवाही, गैर-जिम्मेदाराना तरीके से छापी भी जा रही है। कुछ भी ग़ज़ल के नाम से मुझको कह देना है और लोग उसे छाप देता है।

मंचीय ग़ज़लकारों ने ग़ज़ल विधा की गंभीरता को नुकसान पहुंचाया है या लाभ ?

रामयतन जी, पहली बात तो यह कि ग़ज़ल मंचीय या अमंचीय नहीं हो सकती। ग़ज़ल के प्रस्तुतीकरण का एक प्रकार मंचीय है-जो ज्यादातर गेय होता है। मेरा मत है कि तरन्नुम में पेश की गई ग़ज़ल का अर्थ-कथ्य-सुरों-लय-ताल में बिखर जाता है। कथ्य गौण बन जाने से ग़ज़ल की व्यंजना शक्ति पर कुठाराघात होता है जो काव्य-प्रेमी के लिए सर्वथा असत्य है। कई निरर्थक ग़ज़लें तरन्नुम में प्रस्तुत कर वाहवाही लूटी जाती रही हैं लेकिन काव्य के मूल प्रभाव से श्रोता वंचित ही रह जाते हैं। इस तरह ग़ज़ल का नुकसान ही होता है परन्तु इस बात का दूसरा पक्ष भी है। अच्छी ग़ज़ल अगर मंच पर सस्वर या अस्वर पाठ से प्रस्तुत की जाए तो उसकी प्रभाव-विष्णुता अक्षुग्ण रहती है। बात घूम-फिरकर काव्य की गुणवता पर आएगी। वैसे अच्छी-मान्यता प्राप्त ग़ज़लों का मंचीय श्रवण एक मधुर अनुभव तो है ही।

अब आपसे यह जानना चाहूंगा कि बदलते सामाजिक मूल्यों के बीच ग़ज़ल विधा की क्या उपादेयता है?

बदलते सामाजिक मूल्यों के बीच ग़ज़ल की वही उपादेयता है, जो काव्य के एक उत्तम प्रकार की हो सकती है। आधुनिक संदर्भों में ग़ज़ल एक सर्वाधिक लोकप्रिय व मान्य काव्य-विधा है-इसमें कोई शक नहीं। मजेदार बात ये है कि ग़ज़ल मूलत: एक आयातित विधा होते हुए भी अपने एक निजी भारतीयता स्वरूप को पा चुकी है। ग़ज़ल के शेरों में रमें सूक्ति, श्लोक, सुभाषित, दोहा, इत्यादि काव्य प्रकारों का दर्शन होता है। ग़ज़ल के शेरों को समसामयिक जीवन शैली के संदर्भों में बेसाख्ता कोट किया जाता रहा है। ग़ज़ल के शेरों के जरिये लोग अपनी बात कहते-सुनते पाये गये हैं अतएव सामाजिक सरोकारों के बीच ग़ज़ल के शेर एक महत्वपूर्ण माध्यम बने हुए हैं।

आपकी दृष्टि में हिन्दी ग़ज़ल के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती क्या है?

हिन्दी ग़ज़ल के संदर्भ में यह प्रश्न बहुत ही महत्वपूर्ण प्रश्न है। यादव जी, इस प्रश्न के साथ एक कटू सत्य जुड़ा हुआ है जिसका दुर्लक्ष कर हम आत्मवंचना की गर्त में गिर सकते हैं। अत: उसके बारे में खुले दिमाग से सोचना ही श्रेयस्कर होगा। इस तथ्य को हमें स्वीकार करना ही होगा कि हिन्दी-ग़ज़ल अभी अपनी प्रारंभिक अवस्था में है। हिन्दी ग़ज़ल को अभी अपनी पहचान बनानी है। अपना निजी स्वरूप स्थापित करना है। उर्दू ग़ज़ल में आप ग़ज़ल की चरम-सीमा देख सकते हैं। उसके बाद-जहां तक मेरी जानकारी है-गुजराती और सिंधी ग़ज़ल ऊँचाईयों के शिखर देख चुकी हैं। दोनों भाषाओं में ग़ज़ल सौ-सौ साल से ऊपर अपनी साधना-यात्रा पूरी कर चुकी हैं। उर्दू ग़ज़ल के विकास का विस्तार इससे भी ज्यादा है। इस तथ्य के अनुसार हिन्दी-ग़ज़ल का मूल स्वरूप चाहे हम खुसरो-कबीर-भारतेन्दु में देखें पर जहां तक उसके रूप के विशद विस्तार का सवाल है - वह नदारद है। हिन्दी ग़ज़ल के गरिमामय व एक पुण्य-संकेत नाम है - दुष्यंत कुमार। लेकिन यहां पर भी हिन्दी-ग़ज़ल के साथ एक दुर्भाग्ययपूर्ण तथ्य जूड़ा हुआ है, वो ये हैं कि दुष्यंत एक शुभ शुरुआत के संकेत थे जहां से आगे हम नहीं निकल पा रहे हैं।

तो क्या यही सबसे बड़ी चुनौती है ?

बिलकुल। हिन्दी ग़ज़लगों को अभी बड़ी जिम्मेवारी निभानी है। गंभीर चुनौती स्वीकार करनी है। निरंतर प्रयास करना है। उर्दू ग़ज़ल से अलग अपनी पहचान बनानी है। दुष्यन्त कुमार के हाथ से सूत्र लेकर बहुत आगे तक जाना होगा।

इन तमाम स्थितियों को ध्यान में रखते हुए आप हिन्दी ग़ज़ल के भविष्य के बारे में क्या सोचते हैं?

हिन्दी ग़ज़ल का भविष्य उज्ज्वल है। हिन्दी काव्य की पिछले दिनों जो हानि हुई ग़ज़ल उसकी पूर्ति कर रही है, करेगी। सामान्य-जन की कविता के प्रति जो अरूचि हो गई थी ग़ज़ल उस निराशा और अरूचि को मिटा रही है। अछांदस और नई कविता के नाम पर बहुत कुछ व्यर्थ लिखा गया, काव्य का माधुर्य खत्म हो चला था। ग़ज़ल अगर अपनी सही दिशा में अग्रसर होती रही तो कविता को अपना शाश्वत स्थान दिला सकेगी। मात्र विचार और बुद्धि की

दक्षता ढोते हुए कविता भाव-जगत से विदा हो चुकी थी। ग़ज़ल उसके गौरव ाके पुनः स्थापित करेगी । कविता के नाम पर, हास्य-कवि-सम्मेलनों के बहाने मंचों पर लतीफे, चुटकुलेबाज़ी से जो कविता का नुकसान हुआ ग़ज़ल उसकी भरपाई करेगी और कविता को अपना गरिमामय चिंतनमुखी रूप प्रदान करेगी।

मेरा आखिरी सवाल यह है कि आज ग़ज़ल के क्षेत्र में काफी लोग हैं, लेकिन आप ऐसे ग़ज़लकारों की चर्चा करना चाहेंगे, जिन्होंने वास्तविक तौर पर इस विधा को समृद्ध किया है ?

क्यों नहीं, जरूर चर्चा करना चाहूंगा। यह सुखद सच है कि आज हिंदी में कई हस्ताक्षर हिंदी-ग़ज़ल को समृद्धियां प्रदान कर रहे हैं। ग़ज़ल अपना अभीष्ट, निजी स्वरूप निर्मित करने लगी है। कई नाम हैं जो प्रवृत हैं ग़ज़ल को निखारने में। सूर्यभानु गुप्त का नाम ग़ज़ल की महती संभावना से जुड़ा है। पिछले 30-35 वर्षों से गुप्त जी ग़ज़ल को कई रंग दे चुके हैं। कुँवर बेचैन सशक्त ग़ज़ल के प्रयास में रत हैं। कई भावपूर्ण ग़ज़लें उनकी कलम से निकल चुकी हैं। नीरज जैसे युग-कवि ने भी कुछ भाववादी ग़ज़लें कही हैं। राजगोपाल सिंह ने अपनी ग़ज़लों से जो पहचान बनाई है वह अनुकरणीय है। विज्ञान-व्रत ग़ज़ल की नव्यता व चिंतन की भव्यता के प्रतीक हैं। ज्ञान प्रकाश विवेक ग़ज़ल का प्रयोगधर्मी नाम है। डॉ० शेरजंग गर्ग वस्तुतः दुष्यंत के भी पुरोगामी और ग़ज़ल विधा के अग्रगामी नामों में से हैं। निदा फाज़ली ग़ज़ल की दुनिया का एक ऐसा नाम है जिसके जुड़ने से कोई भी भाषा गौरवान्वित हुए बिना नहीं रह सकती। बहरहाल यह निर्णय करना मुश्किल है कि निदाफ़ाजली हिन्दी ग़ज़ल के प्रवर्तक ग़ज़लगों हैं या उर्दू के इसी तरह मंगल नसीम उस्ताद शायर हैं जो उर्दू और हिंदी के पारंपरिक ग़ज़ल की सीमा रेखा पर खड़े हैं। यही हाल राजेश रेड्डी, खलील धनतेजवी, जफर गोरखपुरी का है। ग़ज़ल की दुनिया को इन महारथियों से बड़ी उम्मीदें हैं। हनुमंत नायडू, हरजीत सिंह, हस्तीमल 'हस्ती', शिब्बन बैजी, दीक्षित दनकौरी कई नाम हैं जो ग़ज़ल के स्वरूप-गठन में प्रवृत हैं।

जी हाँ, इस सूची में एक और उल्लेखनीय नाम मैं जोड़ना चाहूंगा और वह नाम है लक्ष्मण जी का।

यह तो आपकी उदारता है।

बंगला कविता की रवीन्द्रोतर पीढ़ी के प्रतिनिधि स्वर सुभाष मुखोपाध्याय का निधन

पद्मभूषण और ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित बंगला कविता की रवीन्द्रोतर पीढ़ी के प्रतिनिधि स्वर कवि सुभाष मुखोपाध्याय का पिछले 8 जुलाई को निधन हो गया। गुर्दे के रोग के अतिरिक्त वे अन्य कई बीमारियों से भी ग्रस्त थे। अविभाजित कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य रहे बेहद लोकप्रिय कवि सुभाष की अधिकतर रचनाओं ने देश ही नहीं बल्कि विदेशों में भी लोगों के मन पर एक गहरी छाप छोड़ी है। फरवरी 1919 में जन्में मुखोपाध्याय को 1964 में उनकी रचना 'जत दूरे जाई' (जितनी दूर जाऊँ) के लिए साहित्य अकादमी का पुरस्कार भी प्रदान किया गया था। उसी वर्ष उन्हें विश्व भारती विश्वविद्यालय का सर्वोच्च सम्मान 'देशिकोत्तम' भी दिया गया था। भारत सरकार ने साहित्य में उल्लेखनीय योगदान के लिए इस वर्ष पद्मभूषण पुरस्कार से सम्मानित किया था। छह दशक के अपने लंबे साहित्यिक जीवन में सुभाष ने साहित्य प्रतिनिधि के रूप में सोवियत संघ, क्यूबा, अमरीका और ब्रिटेन की यात्राएं की।

वामपंथी विचारधारा के कवि सुभाष ने 'अग्निगर्भ' जैसी कलाकृतियों के जरिए अपने वैचारिक प्रतिबद्धता को श्रेष्ठ कलात्मकता के साथ अभिव्यक्त किया। कवि सुभाष को विचार दृष्टि की हार्दिक श्रद्धांजलि।

कृपया ध्यान दें

पत्रिकाएँ और पुस्तकें खरीदकर पढ़ने में जितना मजा आता है उतना मुफ्त में पाकर नहीं। इसलिए जब आप 'विचार दृष्टि' पत्रिका नमूना प्रति की माँग करें तो यह लिखना न भूलें कि आप इसकी सदस्यता ग्रहण करना चाहते हैं। पता नहीं क्यों पत्रिकाओं का सदस्य बनना अपना कर्तव्य नहीं, लोग उसे मुफ्त में झपटना अपना अधिकार समझते हैं।'

दो वर्षों तक 'राष्ट्रीय विचार पत्रिका' और बाद में भारत के समाचार पत्रों के पंजीयक द्वारा 'विचार दृष्टि' शीर्षक अनुमोदित एवं निबंधित होने पर पिछले पाँच साल से निरंतर इसकी प्रति आप प्रबुद्ध पाठाकों एवं साहित्य सेवियों के हाथों जा रही है और जिसके तेवर व कलेवर को भी आपने तहेदिल से स्वीकारा है। समझदारी का तकाजा है कि इसकी सदस्यता ग्रहण कर इसके नियमित प्रकाशन में आप अपेक्षित सहयोग करें। यह आप पाठकों की गरिमा के अनुरूप होगा और मैं भी आपकी आकांक्षाओं एवं विश्वासों के अनुरूप एक स्वस्थ पत्रिका आप तक पहुँचाने में समर्थ हो सकूँगा। पिछले दो-तीन महीनों में इसकी सदस्यता ग्रहण में अभिरूचि लेकर आपने मुझे प्रोत्साहित किया है यह आपकी सदाशयता एवं उदारता का द्योतक है। मैं तहेदिल आभारी हूँ आप सभी नए सदस्यों का। अगर आपकी सदस्यता समाप्त हो चुकी है तो एक सौ रुपए भेजकर उसका नवीनीकरण करा लें।

राज्य कार्यालय
'बसेरा', पुरन्दरपुर
पटना-1 (बिहार)
फोनः 2228519

संपादक, 'विचार दृष्टि'
'दृष्टि', यू. 207, शकरपुर,
विकास मार्ग, दिल्ली-92
फोनः 011-22530652

अमीन साहेब : जमीन की लड़ाई बनाम स्वार्थों की लड़ाई

समीक्षक: दिनेश पंकज

आज जबकि नया से नया लेखक और प्रतिष्ठित लेखक महानगरीय जीवन, वैश्वीकरण, स्त्री-पुरुष संबंध, विवाहेत्तर संबंधों को आधार बनाकर, प्रयोगवाद के नाम पर अश्लील से अश्लील उपन्यास लिख रहे हैं, यहाँ तक कि कुछेक तथाकथित लेखक तो अपने बिलकुल निजी संबंधों को उपन्यास का विषय बनाकर यथार्थवाद के नाम पर सैक्स से भरपूर उपन्यास पाठकों को परोस रहे हैं, ऐसे माहौल में ग्रामीण पृष्ठभूमि में 'जमीन' को लेकर लिखा गया, प्रसिद्ध व्यंग्यकार रमाशंकर श्रीवास्तव का लिखा उपन्यास अमीन साहेब पढ़कर पाठकों को लगता है कि हां, हमारे देश में अभी गांव जिंदा हैं, अपनी पूरी विशेषताओं के साथ। कहते हैं जर, जोरू और जमीन को लेकर ही आज तक झगड़े होते रहे हैं। इनमें से जमीन को लेकर हुए झगड़ों ने तो इतिहास और भूगोल को न जाने कितनी बार बदला है। मानव सभ्यता पर जितना प्रभाव जमीन को लेकर हुए झगड़ों या युद्धों का हुआ है उतना और किसी अन्य बात का प्रभाव नहीं हुआ। जमीन को लेकर हुए इन युद्धों ने कई बार विकसित सभ्यताओं को नष्ट किया है तो कई बार सभ्यताओं का विकास भी हुआ है। जमीन के एक टुकड़े को लेकर परिवार के दो भाइयों से लेकर दो देशों, दो सभ्यताओं तक ने अनेक बार लड़ाई झगड़े किए। झगड़ने वाले तो अतंतः मर-खप गए पर जमीन जहां की तहां रही। उसका अंतिम रूप से फैसला कोई पटवारी, अमीन लेखपाल, या सुपर पावर नहीं कर सका। स्वार्थों ने जमीन की सरहदों को बार-बार तोड़ा और लोग लड़ाई-झगझे, चिंता-द्वेष की आग में जलते रहे, और जलते रहेंगे।

प्रस्तुत उपन्यास में बिहार के एक गांव की कहानी है जहां जमीन के एक टुकड़े को लेकर गांव की एक महिला यमुदा देवी गांव के मुखिया के जमीन को हड़पने की चालों का डटकर मुकाबला करती है, लेकिन क्या अंत तक उस जमीन के टुकड़े का फैसला हो पाया, यही उपन्यास की कथावस्तु है जिसे रोचक भाषा-शैली में उपन्यासकार ने प्रस्तुत किया है। उपन्यास अंत तक पाठक की जिज्ञासा बनाए रखता है। किस तरह जमीन को पाने के लिए गांव का मुखिया बालम सिंह षड्यंत्र पर षड्यंत्र रचता है और यमुना देवी किस प्रकार उसके षड्यंत्रों को काटती है पुस्तक में रोचकता के साथ इसका वर्णन है। बालम सिंह और यमुना देवी के बीच के इस झगड़े ने गांव को भी दो दलों में विभाजित कर दिया है। झगड़ा इतना बढ़ जाता है कि कई बार तो मार-पीट हो जाती है और एक-दो हत्या तक हो जाती है। जमीन को नापने के लिए दोनों पक्ष बार-बार अमीनों (पटवारियों) को बुलाते हैं। जमीन को नापने के लिए बार-बार अमीनों का अपना और दोनों पक्षों को वेवकूफ बनाकर अपना उल्लू सीधा करना, का वर्णन देश में पनपते भ्रष्टाचार की पोल खोलता है। कोई भी विभाग भ्रष्टाचार से मुक्त नहीं है। बिना घूस दिए आप अपना कोई छोटा से छोटा काम भी नहीं करा सकते। जमीन के टुकड़ें को प्राप्त करने के लिए यमुना देवी का दामाद हरेन्दर लाल आपनी नौकरी छोड़कर ससुराल में ही रहने लगता है। हरेन्दर लाल के माध्यम से लेखक ने मनुष्य का जमीन के प्रति मोह तो दिखाया ही है उसकी लालची प्रवृत्ति का भी वर्णन किया है।

समीक्ष्य उपन्यास- अमीन साहेब
उपन्यासकार: डॉ. रमाशंकर श्रीवास्तव
प्रकाशक: नवराज प्रकाशन, बी-ब्लॉक, म.न.-422, गली नं.-21, गांवड़ी एक्सटेंशन, भजनपुरा, दिल्ली-53
मूल्य: महज 195 रुपये

यमुना देवी भी कोई दूध की धुली नहीं है। वह भी गांव के एक निवासी सुरेन्द्र सिंह की जमीन हड़प चुकी थी। बड़ी मुश्किल से सुरेन्द्र सिंह अपनी जमीन छुड़वाने में कामयाब रहा लेकिन इसके लिए उसे अपनी सरकारी नौकरी तक खोनी पड़ी और मन का सुख-चैन गया सो अलग। यमुना देवी जैसी औरत जिसने अपने कठोर स्वभाव के कारण भरी जवानी में ही अपने पति से संन्यास लेने पर मजबूर कर दिया, और जिसका एकमात्र पुत्र प्रभात भी अपनी मां को छोड़कर बंबई चला जाता है, वह भी जमीन के लिए बालम सिंह जैसे बाघ, बलवान मुखिया से भिड़ जाती है और अंत तक उसकी धमकियों में नहीं आती।

उपन्यास की भाषा सीधी-सरल और प्रवाहपूर्ण है। स्थानीय मुहावरों और लोकोक्तियों को लेखक ने भरपूर उपयोग किया है जो उपन्यास की पठनीयता में वृद्धि करते हैं। पात्रों के माध्यम से ही लेखक ने अपनी बात कही है। पाठकों के मुंह से स्थानीय शब्दों, मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग करवाना लेखक की भाषा पर मजबूत पकड़ का परिचायक है।

उपन्यास के पात्र और निवेश कथानक के अनुकूल हैं। मुख्य पात्रों यमुना देवी और बालम सिंह के अतिरिक्त अन्य सहायक पात्रों में अमीन, यमुना देवी का दामाद हरेन्द्र लाल, हीरा बाबू, डाक्टर साहब, बालम सिंह के पिता रामायन सिंह, सुरेश सिंह आदि प्रमुख हैं, जिनमें हीराबाबू ईमानदार और न्यायप्रिय हैं, फिर भी व्यवहारकुशल न होने के कारण जिंदगी भर परेशान रहते हैं और अपनी लड़की की शादी तक नहीं करा पाते। बाकी अन्य सभी पात्र अपनी अच्छाई-बुराइयों के साथ पाठकों से रू-ब-रू होते हैं।

उपन्यास बिहार के आज के गांव को समझने में न केवल पाठक की मदद करता है बल्कि जमीन की लड़ाई के बहाने पाठक को सोचने पर मजबूर भी करता है कि छोटे-छोटे स्वार्थों के पीछे लड़ने से आखिर मिलता क्या है। लड़ने में नुकसान तो दोनों पक्षों का होता है चाहे वे दो भाई हों, दो देश हों या दो सभ्यताएं हों। एक पक्ष इसे अपनी विजय समझने की भूल करे तो करे अन्तर्मन से वह भी महसूस करता है कि आखिर वह लड़ा तो किसके लिए। जिसके साथ लड़ा वह भी तो उसी की तरह है....उसका भाई है, उसका पड़ोसी है, पड़ोसी देश है, या कुछ नहीं तो उसकी तरह इंसान तो है ही........।

भूत एवं वर्तमान के साथ भविष्य की दिशा को प्रतिबिंबित करता काव्य-संग्रह

समीक्षक: बिपिन बिप्लवी

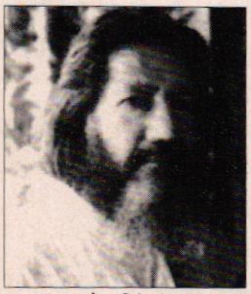
डॉ. सहदेव सिंह 'पाचर'

साहित्य जगत में प्रायः नित नयी रचनाओं का आगमन रचनात्मक क्रांति का लक्षण है। जरूरी नहीं कि प्रत्येक नयी रचना किसी नए हिमालय का आभास कराती रहे, किंतु कुछ की ऊँचाई 'गति भी तू गगन भी तू' का पर्यायवाची प्रतीत हो तो कोई आश्चर्य नहीं। विगत 26 जुलाई को पटना के श्रीकृष्ण स्मारक भवन में एक ऐसे ही नए काव्य ग्रंथ 'वाज और रोटी' का लोकार्पण हुआ।

भूमिका एवं प्रस्तावना सहित 264 पृष्ठों में आबद्ध कवि की छोटी-बड़ी 214 कविताओं का यह संग्रह भूत और वर्तमान के सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यों में भविष्य की दिशा को भी प्रतिबिंबित करता है। रचनाकार सहित पाँच प्रौढ़ विद्वतजनों के परिचयात्मक लेख पाठकों का काम और भी सरल कर देते हैं। इसकी कविताओं को पढ़ने से आम पाठक पाएंगे कि काव्य इतिहास से अधिक दर्शनमय होता है, चिंतकों की यह मान्यता वस्तुतः सही है। ग्रंथ के रचनाकार डॉ. सहदेव सिंह 'पाचर' की खासकर नयी पीढ़ी को संबोधित ये दो पंक्तियाँ ही इनके काव्य, व्यक्तित्व व लक्ष्य को स्पष्ट करने के लिए पर्याप्त हैं-'चाहे हँस के लिखना या रो के लिखना / जब भी लिखना इंसान हो के लिखना।'

समीक्ष्य काव्य-संग्रह- ताज और रोटी
कवि: डॉ. सहदेव सिंह 'पाचर'
संपादक: डॉ. गनौरी महतो
प्रकाशन: प्रोफेसर कॉलोनी, भभूआ (कैमूर), बिहार
मूल्य: 150 रुपये मात्र

इस संग्रह की कविताओं में आकर्षक शब्द, बिंब और मुहावरों का यत्र-तत्र सटीक प्रयोग काव्य-सौष्ठव पर चार चाँद लगा देता है। ध्यातव्य है एक छोटा-सा उद्धरण-'छा गया आतंकवाद/ वह उबल उबल रहा। अँगुलीमाल बन रहा/ हम अभी जगे नहीं। मूँग छाती दल रहा/ बुद्ध युद्ध में ठगा/है उठ गया नया विवाह/ बोल गाँधी क्यों?'

दैनिक कार्यकलापों के दरम्यान कार्यालयों की ड्योढ़ी-अटारी पर खड़ा होने पर जो भ्रष्टाचार का दृश्य प्रस्तुत होता है उसकी बखिया उधेड़कर सामने परोसी गयी ये व्यंग्यात्मक पंक्तियाँ वास्तविकता का रंग-रंगरेज की अदाकारी वाले मिश्रित चोखेपन से कुछ कम नहीं सुहाती हैं-'हुजूर यह अस्पताल नहीं/ सचिवालय है/ यहाँ आदमी से बढ़कर पैसा है/ मेरा बेटा कैसा है/ अपने बाप जैसा है।' आए दिन अपहरण की घटनाओं की कितनी जीवंत प्रस्तुत है इसे आप इन पंक्तियों में देखें-'सुना है रावण ने/राम की पत्नी सीता को............/ अशोक वन में बिठा दिया था/ आज भी उठा लाता है...... ...../ फर्क इतना ही है कि/सीता को लक्ष्मण-लकीर के बाहर से नहीं/ संविधान के घेरा से उठा लाता है।'

पुस्तक में प्रूफ की पढ़ाई अधिक सावधानी की अपेक्षा करती है और आशा है अभिव्यक्ति की कतिपय दुरूहता अगले संस्करण में गंभीर गुरूता का पर्याय बनकर प्रकाश बिखेरेगी।

सरदार पटेल की जयंती पर शुभकामनाएं

मोबाइल: 9835285849

मे. न्यू कृष्णा फ्लोरिंग्स

खगौल रोड, फुलवारी शरीफ
पंजाब नेशनल बैंक के पास
बी. एम. पी.-16

मे. कृष्णा फ्लोरिंग्स

भीमसेन मार्केट,
खगौल रोड, अनीशाबाद,
पटना-2

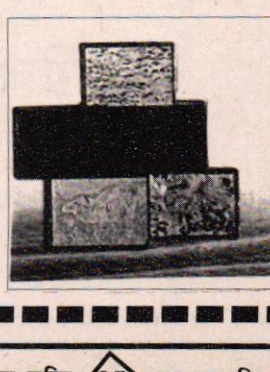

'गीत तुम्हारे नाम' से 'मन वृंदावन' तक

समीक्षक: राजकिशोर राजन

अंग्रेज कवि वर्ड्सवर्थ ने प्रकृति से संवेदना के स्तर पर एकाकार होते हुए कहा है कि 'प्रकृति उन्हें अपने प्रत्येक रूप के माध्यम से कोई न कोई संदेशोपदेश देते ही रहती है। हमें ज्ञात है कि मनुष्य का प्रकृति के साथ साहचर्य उतना ही पुराना है जितना वह स्वयं है। संस्कार-क्रम में मानव-जाति का भाव-जगत ही नहीं, उसके चिंतन की दिशाएं भी प्रकृति के विविध रूपात्मक परिचय द्वारा तथा उससे उत्पन्न अनुभूतियों से प्रभावित होती रही है। गीतकार श्री द्वारिका राय 'सुबोध' की काव्य-यात्रा भी मनुष्य का प्रकृति के साथ साहचर्य का प्रतिफलन है जिसने उनके चिंतन की दिशाएं तथा अनुभूतियों को अत्यन्त गहराई से प्रभावित किया है।

गीतकार की प्रथम कृति 'गीत तुम्हारे नाम' में संयोगपक्ष, वियोगपक्ष और आत्मपक्ष के रूप में विभाजित कुल 53 गीत हैं। वियोगपक्ष में सर्वाधिक 23 गीत हैं जबकि संयोग और आत्मपक्ष में क्रमश: 13 और 17 गीत हैं। प्रकृति को पृष्ठभूमि में रखकर मानव हृदय के भावों को तीव्र रूप में प्रस्तुत करने की काव्य-रचना-प्रक्रिया बहुत पुरानी है। किसी भी अनुभूति को तीव्रता प्रदान करने के लिए प्रकृति 'उद्दीपन विभाव' का रूप प्राप्त कर सकती है। संयोगपक्ष के अंतर्गत जो गीत हैं 'कहना न होगा' उसके केंद्र में प्रकृति है। उसको सप्राण प्रस्तुत करते हुए गीतकार मानव-भावनाओं का आरोपण करता है और उसकी 'कोंपल-सी कमनीय जवानी' पर मुग्ध हो जाता है। कहीं-कहीं एक ही गीत में हैरान कर देने वाला परिवर्तन भी दिखता है। अपने धुन में मस्त कवि परस्पर विरोधी कथ्यों को कह मग्न हो जाता है। कुछ शब्दों से कवि मोहग्रस्त भी प्रतीत होता है। वैसे शब्दों में एक 'अरमान' भी है। कवि का प्रकृति-प्रेमी मन आम-अमराई, फूल-पत्तों, अरूणोदय, तारे, कलियों, धान, मकई के रूप-लावण्य को देख आह्लादित हो जाता है।

आज के दौर में यह सुकून की बात है जब कि कोई रचनाकार अपने प्रकृति और परिवेश को इतने उत्कट रूप में जीता हो। यूं भी कविता या गीत हम भारतीय लोगों का जीवन रस ही नहीं आत्मबल भी है। 'गीत तुम्हारे नाम' में केवल संयोगपक्ष ही नहीं वियोगपक्ष और आत्मपक्ष में भी प्रकृति प्रेम के गीत ही छाये हुए हैं। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इस गीत संग्रह में शुभकामना-स्वरूप लिखा है "यद्यपि इन गीतों को नए आलोचक पुराने ढंग की कविता ही कहेंगे परन्तु इनमें जो भाव अभिव्यक्ति हुए हैं, वे कभी पुराने नहीं पड़ते।" वर्ष 2001 में प्रकाशित गीतकार की दूसरी कृति 'मन वृंदावन' में भी यदि आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी शुभकामना-स्वरूप लिखते तो वही लिखते जो उन्होंने गीतकार की पूर्व कृति के लिए लिखा था। परन्तु ध्यान देने की बात है कि गीतकार की यह दूसरी कृति उसकी प्रथम कृति के प्रकाशन के 25 वर्षों की लंबी अवधि के बाद आई है और स्वयं गीतकार ने इसका प्रमुख कारण 'गृह कारज नाना जंजाला' माना है। उसके मतानुसार 'मन वृंदावन को बीसवीं सदी में ही प्रकाशित कर देने की मेरी प्रबल इच्छा थी किन्तु ऐसा संभव नहीं हो सकने पर मैं बीसवीं सदी का गीतोपहार इक्कीसवीं सदी को भेंट कर रहा हूँ।' गीतकार की दूसरी कृति 'मन वृंदावन' में प्रेम, प्रकृति एवं परिवेश में बँटे कुल 63 गीत हैं। अपनी कृति में आत्मकथ्य के अंतर्गत इशारों में ही उसने कह दिया है 'गद्य आँखें खोलकर और पद्य आँखें मूँदकर लिखे जाते हैं।' कवि ने आँख मूँदकर भले ही लिखा हो परन्तु उसकी आँखों में सब कुछ समाया हुआ है। इस गीत संग्रह में गीतकार वर्तमान के स्वप्नभंग से मर्माहत है। 'वर्तमान के प्रश्न' नाम गीत में वह लिखता है:-

कोरे वादों के आश्वासन
कैसा है नैतिक अनुशासन
भूल-भुलैया का है जीवन
उत्पीड़न ही है उत्पीड़न।
वर्तमान के प्रश्न अशेष
टुकड़ों में बँटा रहे देश!

परन्तु ज्यादा देर तक वह वर्तमान और अपने आस-पास धुँआए तस्वीर को नहीं देख पाता और आँख मूंदकर निमग्न हो जाता है-आगे की ओर। शब्दों के कुशल चितेरे, सौंदर्य के पारखी इस गीतकार की आह! पावस के बादल के साथ बरसने को आतुर हैं।

गीतकार के सरल, सरस और निश्छल ये गीत उस एहसास की तरह हैं, जो जब कभी याद आएगा-बहुत याद आएगा। गीतकार प्रकृति-सुन्दरी प्रिया के हर रूप, हर मुद्रा को जीवन भर टक-टकी लगा कर देखता ही रहा परन्तु हाल विद्यापति के राधा जैसी-

सखि हे, जनम अवधि हम रूप निहारल.
.........।

संपर्क: डी-137 पी. सी. कॉलोनी
कंकड़बाग, पटना-20

सरदार पटेल जयंती पर हमारी शुभकामनाएँ

मे० पोपुलर फार्मा

(अंग्रेजी दवाखाना)

न्यू मार्केट, पटना - 1

अंतहीन अंधकार के आसार

राम संजीवन शर्मा

रामचरित्र मानस में तुलसी ने लिखा है कि यह दुनिया गुण-दोषमय है। जिस प्रकार हंस पानी का अंश छोड़ देता है और दूध का तत्त्व ग्रहण करता है उसी प्रकार संत दुनिया से व्याप्त बुराई को छोड़ देता है और अच्छाई को ग्रहण करता है। लोग सतयुग और कलयुग की बातें करते हैं, पर मैं मानता हूँ कि न तो सतयुग होता है और न कलयुग, हर युग मनुष्य युग होता है। युग का आकलन मनुष्य के कार्य से होता है। हर युग में अच्छे बुरे लोग हुए हैं और आज भी हैं। गुण-दोष का नाम दुनिया है। यह मेल बराबर रहा है और रहेगा। राम के समय रावण भी था और उसी का भाई विभीषण भी। कृष्ण के समय उन्हीं का मामा कंस भी। गाँधी युग में हिटलर और मुसोलिनी भी। मनुष्य इस सृष्टि की आधारभूत इकाई है। जैसा मानव होगा वैसी दुनिया होगी और युग होगा। हर व्यक्ति में चोर भी है और संत भी (साधु) भी हैं भले ही अनुपातिक अन्तर हो।

जीवन-कहानी कुछ चोर कुछ संत है

जीवन गर पतझर तो वह वसंत है

जीवन में त्याग है तो नवीनता भी है, वरना वह गड्ढे का जमा हुआ विषाक्त जल है। इसी संदर्भ में आज के युग की समीक्षा होनी चाहिए। विशेषकर हम बिहारवासियों तथा भारतवासियों की। जो समय गुजर जाता है उसका गीत गाने से कोई लाभ नहीं और भविष्य को हम जानते नहीं। कल्पना हमारी सच भी हो सकती है, गलत भी। जिस युग में हम जी रहे हैं वह युग काफी प्रदूषित हो चुका है। कहने का मतलब आज का आदमी सहजता और सरलता हो चुका है, मानवीय मूल्यों का अवमूल्यन हो चुका है। जीवन पैसा-प्रधान बन गया है। सभी लोगों ने येन-केन-प्रकारेण पैसा कमाना अपने जीवन का एक मात्र उद्देश बना लिए हैं। अर्थ संग्रह आज की विशेषता बन गई है। सारे विश्व में पैसे की लिप्सा ही कष्ट का कारण बन गया है।

आज एक राजनेता कुर्सी पर बैठते ही करोड़पति बनना चाहता है, ऊँचे महल उठाना चाहता है और अपने सारे सगे-संबंधियों को हर तरह का लाभ पुहँचाना चाहता है। लोकहित गौण बन जाता है। आज के नेता लोकहित की सिर्फ बात करतें हैं और बराबर सम्पति बटोरने के फेरे में रहते हैं। ऐसी स्थिति व्यवसाय के क्षेत्र में भी है। व्यवसाय खड़ा करते ही वह किसी तरह करोड़पति-अरबपति बनना चाहता है। खाद्य पदार्थों में मिलावट करता है, कम तौलता-मापता है। ग्राहक को सही माल न देकर घटिया माल देता है। इस प्रकार वह जन स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचाता है, लोगों की जेब काटता और आम लोगों की मजबूरी का लाभ उठाता है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी बदहाली है। शिक्षकों ने शिक्षा को व्यवसाय बना लिया है। स्कूल-कॉलेज में पढ़ाई नहीं होती है। शिक्षक घर पर ट्यूसन करते हैं, नोट बनाते हैं और उन्हें बेचते हैं। उत्तर-पुस्तिकाओं की जाँच भी पैसे लेकर की जाती है। जो पैसा देता है, उसके अंक बढ़ा दिए जाते हैं। उत्तर-पुस्तिका देखने में जातीयता भी की जाती है। अपनी जाति के परीक्षार्थी को अधिक अंक देकर आगे रखना चाहते हैं। परिणाम यह होता है कि मेधावी छात्र मारे जाते हैं और गए-गुजरे छात्र बाजी मार लेते हैं। मैंने तो यहाँ तक सुना है कि रंगदार परीक्षार्थी घर पर उत्तर-पुस्तिका ले जाकर उत्तर लिखता या लिखवाता है। सुनने में तो यह भी आता है कि राज्य लोक सेवा आयोग द्वारा ली गई परीक्षाओं में भी उत्तर-पुस्तिकाएँ बदली जाती हैं। पैसे लेकर यह काम किया जाता है। ऐसी हालत में एक कर्मठ तथा मेधावी परीक्षार्थी का क्या हाल है, यह सहज अनुमान्य है।

हम रोज देखते हैं कि लोग ट्रेनों तथा बसों में बिना टिकट के सफर करना चाहते हैं। जहाँ-तहाँ ट्रेनों को रोक देते हैं। टिकटचेकर को ट्रेन में मारते हैं। मुस्किल से कोई ट्रेन समय से खुलती है। नुकसान बेकसूर मुसाफिरों का होता है। आप किसी दफ्तर में जाइये-चाहे वह केन्द्र सरकार का दफ्तर हो या राज्य सरकार का- बिना नजराना अथवा सेवा-शुल्क दिये कोई काम नहीं होता है। नतीजा यह है कि साधारण लोग परेशान होते हैं। घूस की कर्मनाशा मंत्री तथा राजनेताओं के महल से निकलती है बेग बहती हुई सरकारी दफ्तरों तक पहुँचती है। इस प्रकार इस कर्मनाशा नदी में नेता हाकिम और कर्मचारी सभी रोज डुबकी लगा रहे हैं। ईमानदारी आज बेवकूफी समझी जा रही है। क्या कोई इसका जवाब दे सकता है कि एक राजनेता जो कल तक कौड़ीपति था, आज करोड़पति कैसे बन गया? भ्रष्टाचार-निरोधक कानून सिर्फ छोटे कर्मचारियों के लिए बना है। राजनेता और बड़े अफसर ऐसे कानून के शिकार नहीं होते हैं। अतः मैं मानता हूँ कि भ्रष्टाचार की नदी राजनीति के गोमुख्य से निकली है। जब हमारे जन-प्रतिनिधि और राजनेता ही भ्रष्ट हो गये हैं,

तो कर्मचारियों के बारे में क्या कहा जाये? आज का प्रशासन और भ्रष्टाचार एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। आज की राजनीति का अपराधीकरण हो गया है। सभी पार्टियों के नेता अपराधियों को संरक्षण दे रहे हैं। जमाना ऐसा आ गया है कि अपराधी सीना तान कर जी रहे हैं और शराफत से झुके इंसान का हररोज सर कलम हो रहा है। अपराधियों के बल पर राजनीति चल रही है या यूँ कहें कि अधिकतर अपराधी लोग ही गुंडई के बल पर राजनीति में आ गए हैं। इसका भयंकर परिणाम सामने आ गया है। बिहार के पुलिस महानिदेशक ने तो यहाँ तक कह दिया है कि पुलिस राजनीतिज्ञों के हस्तक्षेप के कारण अपना काम स्वतंत्र रूप से नहीं कर रही है।

अन्य विभागों में भी यही हाल है। नीचे से उपर तक ठीकेदार पैसे देते हैं या अधिकारियों को डरा-धमका कर बिना काम किए ही बिल बनवा लेते हैं और हड़प जाते हैं। आज पुलिस का मनोबल टूट गया है यह नेताओं द्वारा संरक्षित अपराधियों के खिलाफ कोई अधिकारी कार्रवाई नहीं कर सकता। उसे डर बना रहता है कि उसका स्थानान्तर कर दिया जाएगा और वह कहीं कोने में फेंक दिया जाएगा। इस प्रकार हम देख रहे हैं कि हर जगह अपराधियों का बोलबाला है। सचिवालय में जाकर ये लोग कर्मचारियों-अधिकारियों को डराते-धमकाते हैं। विधान-सभा तथा लोक-सभा में ये लोग लाठी-गोली के बल पर चले जाते हैं। ऐसी स्थिति में लोगों का कल्याण कैसे हो सकता है? अगर इसे रावण-राज तथा कंस-राज की संज्ञा दी जाए तो कोई गलत नहीं होगा।

मुझे ऐसा लगता है कि अपराध वृद्धि का मुख्य कारण शिक्षित बेरोजगारी, विपन्नता और असीम महत्वाकांक्षा है। पढ़े-लिखे लोगों को तथा गरीबों को रोजी-रोटी नहीं मिलेगी, तो वे अपराधी बनेंगे ही। हमारी मानसिकता बनगई है कि जो रोजी-रोटी की लड़ाई लड़ता है उसे हम उग्रवादी या नक्सलाईट कहने लगते हैं। एक छोटी बात मैं यह पूछना चाहता हूँ कि जो जमीन की सेवा नहीं करता है, जोतना-बोना नहीं जानता है ऐसे एसे जमीन का मालिक बनने का क्या हक है। एक नपुंसक आदमी को जिस प्रकार पत्नी रखने का हक नहीं है उसी प्रकार जो जमीन को जोता-बोता नहीं है उसे जमीन की मिलकियत नहीं मिलनी चाहिए। आज की स्थिति यह है कि जो श्रमिक है वह भूखों मर रहा है और जो बुद्धि-की जिंदगी बसर कर रहा है उसके पास अपार धन है। इस प्रकार आर्थिम विषमता के चलते सामाजिक विषमता बढ़ गई है और अपराध कर्मियों की संख्या बढ़ गई है। किसी व्यक्ति का विकास सिर्फ उसके माँ-बाप नहीं करते। उसके विकास में समाज का बहुत योगदान रहता है। वह समाज से बहुत कुछ सीखता है। अत: अपनी उपलब्धि का लाभ समाज को पहुँचाना हम लोगों का नैतिक धर्म है।

आज लोग एम. ए., पी.एच डी. करके मारे-मारे फिर रहे हैं। एक साधारण नौकरी भी नहीं मिल पा रही है जब कि उन्हें पढ़ाने में अभिभावक तबाह हो जाते हैं, उनकी जगह-जमीन बिक जाती है। पढ़ाई-लिखाई का लाभ न तो अभिभावक को मिल पाता है और न विद्यार्थी को। वह कुंठा का शिकार बन जाता है और अपराध कर्मी बन जाता है। वह बैंक की डकैती करता है और रेल-बस में भी लूट-पाट करता है। ऐसे ही लोग हमारे राजनीतिज्ञों के साथ मिल कर दलाली करने लगते हैं। वे मानसिक संताप के शिकार हो नैराश्यपूर्ण जीवन गलत ढंग से बिताते हैं। इस प्रकार युवा शक्ति का उपयोग नहीं हो पा रहा है। फिर भी शिक्षा-विस्तार के नाम पर शिक्षा माफिया नये-नये स्कूल कॉलेज खोल कर लोगों को ठग रहे हैं और शिक्षित बेरोजगार की फौज तैयार हो रही है।

आज सबसे बड़ी दुगर्ति लोकतंत्र की हो रही है। महत्व तंत्र का नहीं होता है, महत्व लोकहित का होता है। अगर लोकतंत्र से लोकहित नहीं हो पा रही है तो लाकतंत्र से आम लोगों को क्या लाभ है? लोकतंत्र की गाड़ी दो पहियों पर चलती है। पहला पहिया मतदान का अधिकार है और दूसरा पहिया उम्मीदवार का। क्या यह अधिकार लोगों को मिल रहा है? आज तो बूथ कंट्रोल का जमाना है। हमारे राज नेता गुंडों की मदद से वोट लुटेरे हैं। वोटर लाठी-गोली के डर से वोट देने ही नहीं जाते। दो-चार गुंडे मतदान अधिकारी को डरा-धमका कर बंडल के बंडल मतदान-पत्रों पर मुहर लगा कर मत-पेटी में डाल देते हैं। मशीनी मतदान में भी बोगस वोट नहीं रुक पा रहे हैं। जहाँ तक उम्मीदवार का सवाल है, विधान-सभा चुनाव में भी, जिसके पास दस-बीस लाख रुपये नहीं हैं, वह गम्भीर उम्मीदवार बनने की हिमाकत नहीं कर सकता। सभी पार्टियाँ ऐसे लोगों को ही टिकट देती हैं जिनके पास काफी माल-पानी रहता है। यह मौलिक अधिकार भी गरीबों के लिए आकाश-कुसुम है। लोकतंत्र के नाम पर पैसा-तंत्र और गुंडा-तंत्र चल रहा है। जो लोकतंत्र लोकहित में नहीं है उससे देश को कुछ फायदा नहीं है।

देखा जाए, तो हर क्षेत्र में गड़बड़ी गड़बड़ी ही है। ढेर सारी रचनाएँ जीवन मूल्यों तथा लोकमान्यताओं पर आधारित नहीं हैं। लेखक और मीडिया वाले भी राजनीति के दास हो रहे हैं। साहित्यकार तलवाचाटू बन चुके हैं। प्रशासन से लाभ उठाना उनका लेखा धर्म बन गया है। साहित्कार भी अगड़ा-पिछड़ा जात-पाँत से प्रभावित हो कर साहित्य की रचना कर रहे हैं।

आज का सबसे पहला काम लोक जीवन को संवारना, सुंदर और स्वस्थ बनाना है। इसके लिए नैतिकता, संवेदनशीलता और राष्ट्रीय एकता जरूरी है। इन सभी मानवीय मूल्यों को जीवन में उतारना होगा। वरना हमारा सुंदर भरत रूग्न बनकर दुनिया के नक्शे से मिट जाएगा और हम इतिहास में पढ़ी जाने की वस्तु भर रह जायेंगे, इतिहास बनाने वाले नहीं।

इस प्रकार कुल मिलाकर जब हम इस देश के सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य पर नजर डालते हैं तो इसकी दिशा नकारात्मक अधिक है और इधर के कुछेक वर्षों में ही भारतीय समाज आत्मविस्मृति का तेजी से शिकार हुआ है। इसकी वजह से इस देश में अंतहीन अंधकार के आसार दिख रहे हैं। ऐसी स्थिति में एक ईमानदार संकल्प और प्रबल इच्छाशक्ति के बदौलत ही इस अंधकार पर विजय प्राप्त किया जा सकता है।

संपर्क: मकान सं॰ ए/12, वित्त विभाग कॉलोनी, फेज-4 खाजपुरा, पटना-800014

ऊ.प्र. की तिकड़मी राजनीति का सफाया
मुलायम को मिला काँटों का ताज

विचार कार्यालय, दिल्ली

देश के सबसे बड़े सतरह करोड़ की आबादी वाले राज्य उत्तप्रदेश की तिकड़मी राजनीतिक का एक बार फिर सफाया हो गया। राज्य के बीसवें मुख्यमंत्री के रूप में समाजवादी पार्टी के मुखिया मुलायम सिंह यादव की ताजपोशी के साथ ही बसपा-भाजपा का अप्राकृतिक गठबंधन टूट गया। इन दोनों का बेमेल गठबंधन टूटना ही था क्योंकि सिद्धांत के आधार पर दोनों दो छोर पर हैं। वस्तुत: ऊ.प्र. के पिछले विधानसभा चुनाव में मुलायम सिंह यादव की समाजवादी पार्टी सबसे बड़े दले के रूप में उभरी थी। इस लिहाज से उसके नेता को ही सरकार बनाने का मौका मिलना चाहिए था, किंतु ऐसा न होकर बसपा-भाजपा गठबंधन को अवसर दे दिया गया, कारण कि भाजपा को आगामी लोकसभा चुनाव बसपा को साथ लेकर लड़ना था ताकि सवर्णों एवं दलितों का वोट पाकर वह अधिकाधिक लोकसभा सीटों पर अपनी जीत हासिल कर सके और केंद्र में पुन: कुर्सी पा सके। लोजपा के रामविलास पासवान के राजग से हटने की वजह से भी मायावती को तरजीह देना पड़ा। भाजपा यह भूल गयी कि मायावती की विचारधारा का खेल अलग है और यह खेल वह कभी भी अपने ढंग से खेल सकती है क्योंकि उसका मानना है कि सत्ता ही हर चीज की चाभी है।

सोलह महीने के एक लंबे इंतजार के बाद आखिरकार मुलायम सिंह यादव को ऊ.प्र. का ताज पहराया गया और भारी बहुमत से उन्होंने विश्वास मत पाकर उत्तरप्रदेश के तमाम नेताओं से अपना कद ऊँचा कर लिया। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता कि राष्ट्रीय राजनीति में मुलायम सिंह यादव एक बड़ी शक्ति के रूप में माने जाते हैं और उनकी इसी शक्ति की वजह से भाजपा किसी भी कीमत पर उन्हें सत्ता पर काबिज नहीं देखना चाहती थी। यही कारण था कि भाजपा ने अपने कट्टर दुश्मन बसपा नेता मायावती के साथ कदमताल किया जबकि उनके साथ भाजपा का कड़वा अनुभव

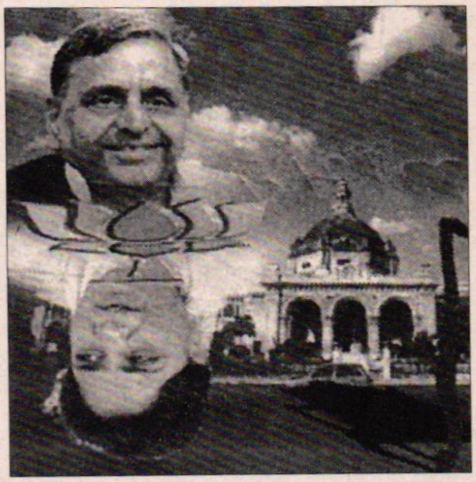

था। वैसे भी कहा जाता है कि राजनीति में कोई स्थायी शत्रु नहीं होता। खैर जो हो, बहरहाल मुलायम सिंह यादव ने ऊ.प्र. सरकार की कुर्सी संभालकर वहाँ की आम जनता को राहत पहुँचाया है क्योंकि श्री यादव को इतना समर्थन मिल गया है कि यह सरकार अब अपनी अवधि पूरा कर लेगी और उनकी सरकार से लोगों ने बहुत आशाएं भी बाँध रखी है क्योंकि पिछले आठ वर्षों से यह राज्य तिकड़म से बनी सरकारों को झेलता रहा है।

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि देश का ऊ.प्र. की जनता पिछले एक दशक से बिजली, पानी, स्वास्थ्य, शिक्षा, स्थायी प्रशासन और रोजमर्रा की सामान्य जरूरतों के लिए भी तरसती रही है। इस राज्य की आर्थिक स्थिति जर्जर है और पूरे राज्य में विकास की गति लगभग ठप्प है। विधि-व्यवस्था की हालत दयनीय है और अपराध का ग्राफ काफी ऊँचा हो गया है। दूसरी ओर भारतीय सर्वेक्षण विभाग द्वारा अयोध्या में की गयी खुदाई और उसके रपट ने भी राममंदिर के प्रश्न को और पेंचीदा एवं विस्फोटक बना दिया है। इन सभी चुनौतियों के मद्दे नजर मुलायम सिंह यादव के सिर पर दिये गए ताज को काँटों का ताज कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। प्रतिशोध की राजनीति के लिए प्रसिद्ध उत्तरप्रदेश की इस कुर्सी को बरकरार रखने के लिए मुलायम सिंह यादव को एक ओर जहाँ वहाँ की जनता की आकांक्षाओं को पूरा करने का प्रयास करना होगा वहीं अपने सहयोगी दलों का विश्वास भी कायम रखना आवश्यक होगा। इस बार मुलायम सिंह यादव के साथ वही कांग्रेस है जिसके मुखिया सोनिया को उन्होंने प्रधानमंत्री की कुर्सी पर बैठने से इसलिए रोका कि सोनिया उन दिनों मुलायम की नजर में विदेशी थीं। किंतु सपा सुप्रीमों को किसी भी कीमत पर ऊ.प्र. की सत्ता नजर नहीं आई तो उन्होंने सोनिया को विदेशी न होने का प्रमाण पत्र दे डाला। मुलायम के काफी आरजू-मिन्नत के बाद भी सोनिया उनकी सरकार में कांग्रेसियों को शामिल नहीं किया। कांग्रेस यह बात नहीं भूल पायी है किंतु केंद्रीय सत्ता हासिल करने के लिए कांग्रेस को भी मुलायम तथा लालू सरीखे नेताओं के सहयोग की जरूरत है। उत्तरप्रदेश में तो कांग्रेस को अपने अस्तित्व बचाने के लिए भी समाजवादी पार्टी के सहारे की आवश्यकता है। जब कांग्रेस ने मुलायम का साथ दिया है तो उन्होंने ने कांग्रेस को कुछ देने का आश्वासन जरूर दिया होगा और वह आश्वासन और कुछ नहीं आगामी लोकसभा चुनाव के बाद सोनिया यदि केंद्र में सरकार बनाने का दावा करती हैं तो ऐसा संभव है कि सपा उस समय समर्थन करे। हालाँकि बदलते वक्त में कुछ कहा नहीं जा सकता। यह तो समय ही बताएगा कि कौन किसका दुश्मन होता है या दोस्त। मुलायम सिंह कांग्रेस के साथ कितनी दूरी तक सफर करते हैं यह तो वक्त ही बताएगा।

गुजराती कवि राजेन्द्र शाह को ज्ञानपीठ पुरस्कार

विचार कार्यालय, दिल्ली

गुजराती के जानेमाने कवि राजेन्द्र केशवलाल शाह को वर्ष 2001 के ज्ञानपीठ पुरस्कार के लिए चयन किया गया है। इस पुरस्कार के तहत पाँच लाख रुपए की राशि सहित प्रशस्ति पत्र एवं वाग्देवी की कास्य प्रतिमा भेंट की जाती है।

1965 में प्रारंभ इस सर्वोच्च पुरस्कार से

पिछले 36 वर्षों में विभिन्न भाषाओं के 39 साहित्यकार अबतक नवाजे गए हैं। कवि शाह इस पुरस्कार से सम्मानित 40 वें और गुजराती भाषा के तीसरे लेखक हैं। इनके पूर्व 1967 में गुजराती साहित्यकार उमाशंकर जोशी और 1985 में पन्नालाल पटेल को यह सम्मान मिल चुका है। इसी प्रकार ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किए जा चुके पूर्व बांग्ला के ताराशंकर वंद्योपाध्याय, सुमित्रानंदन पंत, निर्मल वर्मा, फिराक गोरखपुरी, अली सरदार जाफरी, विष्णु सखाराम खांडेकर, तकषी शिवशंकर पिल्लै तथा गुरदयाल सिंह सरीखे साहित्यकार हैं। 1967, 1973 तथा 1999 में यह पुरस्कार दो-दो साहित्यकारों को संयुक्त रूप से दिया गया।

गुजरात के कैरा जिले में 1913 में जन्मे श्री शाह की साहित्य यात्रा 1933 में मुंबई के विल्सन कॉलेज की पत्रिका 'विल्सोनियन' में प्रकाशित एक कविता के साथ शुरू हुई। किंतु इसके 18 साल बाद इनका प्रथम काव्य-संग्रह 'ध्वनि' प्रकाशित हुआ और इस पहले संग्रह ने ही गुजराती साहित्य की दुनिया में भारी हलचल पैदा कर दी।

सौंदर्य के अन्वेषी और उसके गायक 'श्री शाह के अबतक 21 काव्य संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। गेयता उनके काव्य शिल्प का प्रमुख गुण है और प्रेम, प्रकृति, ईश्वर, आधुनिक सभ्यता, राजनीति और ग्रामजीवन तक की सारी चिंताएं समाज के प्रति उनकी प्रतिबद्धता की गवाही देते हैं। वे प्रेम के रस को जमीन की खुश्बू से तरबतर कर जीवन की सच्चाई के इतने करीब ले आते हैं कि कविता अपनी लय ताल में नाचती नजर आती है और एक युग का निर्माण करती है जिसे गुजराती कविता में 'राजेन्द्र निरंजन युग' कहा जाता है। मिजाज की बात करें तो संवेदना को उसके मूल स्वरूप में महसूस कराने में शाह का कोई सानी नहीं और उनके इसी जादू ने गुजराती कविता और साहित्य को समृद्ध किया जो सिर चढ़कर बोलता है। उनकी एक कविता की पंक्तियाँ हैं-'पंथ नहीं कोई निश्चित मेरा/चलूँ वही पंथ मेरा/ मैं ही रहूँ विलसत सब संग/ और मैं ही रहूँ अशेष।'

साहित्य अकादमी के फेलो रह चुके कवि राजेन्द्र शाह की कविताओं में एक ओर जहाँ प्रेम, वेद, उपनिषद हैं तो दूसरी ओर आम आदमी की पीड़ा भी है। कही वह प्रकृति की गोद में किलकारियाँ मारते हैं तो कहीं अध्यात्म से ओतप्रोत किसी अलग राह की तलाश में निकल पड़ते हैं। पवन का झोंका, सुगंध, कोयल, ध्वनि, श्रुति, चित्र, पल, याद, विरह, माधुर्य जैसे उपनामों का प्रभावूपर्ण इस्तेमाल कर शाह ने कविता को जीवंत बना दिया।

शाह की रचनाओं में अपनी ही तरह की मस्ती है जो न सिर्फ कवि को बल्कि उसका रसपान करनेवाले को भी आनंदित कर देती है।

कवि राजेन्द्र शाह को ज्ञानपीठ मिलने से पहले कुमारचंद्रक, रणजितराम सुवर्णचद्रक नरसिंह मेहता एवार्ड, साहित्य अकादमी पुरस्कार सम्मानित किया जा चुका है। श्री शाह ने जयदेव, विद्यापति, जीवनानंद दास तथा बुद्धदेव बसु की अनेक कृतियों का गुजराती में अनुवाद भी किया है।

राजेन्द्र यादव को शलाका सम्मान

विचार कार्यालय, दिल्ली

हिंदी अकादमी द्वारा प्रदत वर्ष 2003 का सर्वोच्च शलाका सम्मान 'हंस' के संपादक राजेन्द्र यादव को प्रदान कथाकार कमलेश्वर द्वारा किया गया। अकादमी के अन्य पुरस्कार से निम्नांकित हस्ताक्षर सम्मानित किए गए-

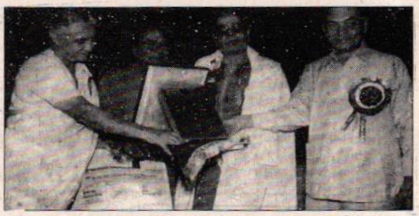

साहित्यकार सम्मान से सम्मानित होने वालों में प्रो. चमनलाल सप्र, डॉ. बलदेव वंशी, डॉ. भगवती प्रसाद, डॉ. हरदलयाल, डॉ. दिवीक रमेश, उपेन्द्र कुमार, सुरेन्द्र तिवारी, डॉ. यतीश अग्रवाल, बलराम, भगवान दास, मोरवाल तथा अलका सक्सेना, इसके अलावा फोटो पत्रकारिता के लिए वीरेन्द्र प्रभाकर, काका हाथरसी सम्मान सत्यपाल नागिया को प्रदान किया गया। दिल्ली की मुख्यमंत्री श्रीमती शीला दीक्षित ने अकादमी के कार्यों की सराहना की।

साहित्यि कृति सम्मान सुश्री मनीषा को 'हम सभ्य औरतें' के लिए, राजेन्द्र अवस्थी को 'बहता हुआ पानी' के लिए, राजनारायण विसारिया को 'कुछ देह कुछ विदेह' के लिए, सुश्री मीरा सीकरी को 'बलात्कार एवं अन्य कहानियाँ' के लिए, सुरेन्द्रनाथ सिंह को 'कालजयी प्रसाद' के लिए, रामकुमार कृषक को 'लौट आएगी आँखें, के लिए, मधुसूदन आनंद को 'बचपन' के लिए, डॉ. ओमप्रकाश जमलोकी को 'आकाशवाणी एवं दूरदर्शन: उद्भव तथा विकास' के लिए, हेमंत कुकरेतो को 'नया बस्ता' के लिए तथा गौरीनाथ को 'नाच के बाहर' के लिए प्रदान किया गया। इसके अतिरिक्त बाल एवं किशोर साहित्य कृति सम्मान से छह साहित्यकार सम्मानित हुए।

पंकज सिंह को मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार

पंकज सिंह को उनकी पुस्तक 'जैसे पवन पानी' के लिए इस साल का मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। पिछले दिनों नई दिल्ली के राष्ट्रीय संग्रहालय में आयोजित राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जयंती समारोह के अवसर पर उप राष्ट्रपति भैरो सिंह शेखावत ने कहा कि यदि बाल कवि वैरागी राज्य सभा के पूरे तनाव भरे गतिरोध को एक कविता में सहज कर सकते हैं तो कवि एवं साहित्यकार देश की पूरी समस्या के प्रति लोगों को जागरूक क्यों नहीं कर सकता है। राज्यसभा एवं

लोकसभा में सांसदों के आचरण पर चिंता व्यक्त करते हुए उप राष्ट्रपति ने कहा कि कवि एवं साहित्यकार समाज में जागृति एवं तूफान पैदा करते हैं। जिस देश का साहित्य निर्जीव है उस देश की जनता निर्जीव है।

हाइकू जागरण

नलिनीकांत

भोर के प्रार्थी
हम तो सूर्योदयी
प्रसन्न पाखी।

डाल डाल पै
फक्कड़ कबीर की
गीत हैं साखी।

कसम तुम्हें
जागो और बंधा लो
देश की राखी।

बुला रही है
सीमा पर तुम को
अपनी माटी।

तुम तो अरे
बलिदानों के चिर
हठीले साथी।

संपर्क: अंडाल, प. बंगाल, 713321

सुंदर चंद ठाकुर को भारतभूषण अग्रवाल पुरस्कार

पैंतीस वर्ष तक के युवा कवियों की कविता पर दिए जाने वाले भारतभूषण पुरस्कार से इस वर्ष सुंदर चंद ठाकुर नवाजे गए हैं। श्री ठाकुर साफ-सुथरी, कटी-छटी, सरल-सपाट और सुघड़-सलोनी कविता लिखने से बचकर जिंदगी के बिहड़ में धंसने का हौसला रखाते है। इसीलिए इनकी कविताओं में

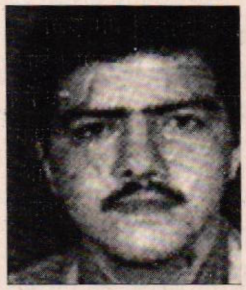

सर्जनात्मक छटपटाहट स्पष्ट नजर आती है। अरुण कमल, उदयप्रकाश, कुमार अंबुज जैसे समर्थ कवियों की श्रृंखला में श्री ठाकुर के लिए यह पुरस्कार पाना गौरव की बात है। इस कवि के भीतर एक लहूलुहान क्रौंच पक्षी छटपटाता रहता है शब्दों की पकड़ में आने को इनकार करता।

'राजस्थान रत्नाकर' से 14 लोग सम्मानित

उपराष्ट्रपति भैरोंसिंह शेखावत द्वारा

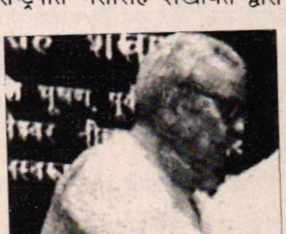

पिछले दिनों नई दिल्ली के मावलंकर हाल में राजधानी में रहनेवाले अप्रवासी, राजस्थानियों की संस्था 'राजस्थान रत्नाकर' की ओर से आयोजित एक सम्मान समारोह में 14 लोगों राजस्थान रत्नाकर से सम्मानित किया जिनमें दीपचंद्र जैन, डॉ. तारादत्त निर्विरोध, महेन्द्र जाजो दिया, डॉ. भगवतीलाल व्यास, रूपरामका, कल्याण सिंह 'राजावत', नरसिंह दास गुप्ता, सुश्री बरखादत्त, रघुनाथ राय, डॉ. शेखर अग्रवाल, अभिप्रा, के.के. अग्रवाल, तथा एस. के जैन का नाम उल्लेखनीय है।

बौद्धिक शून्यता के कारण ही हिंसा और आतंकवाद

आज ऐसा कोई धर्म ही नहीं बचा जो असली धार्मिकता को स्वीकार करता हो धर्म तो इद्रलोक और परलोक को सुधारने के लिए बना था लेकिन ये तो दोनों को बरबाद कर रहें हैं। ये विचार हैं सुप्रसिद्ब साहित्कार एवं विचारक अशोक वाजपेयी के जिसे पिछले दिनों नई दिल्ली में थिंक इंडिया समूह की ओर से थिक इंडिया त्रैमासिक शोध पत्रिका को पेश करने के कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए कहा कि राजनीति ने हमें ओछा बना दिया है। यहाँ समानता और न्याय के मूल्यों की बात करना मना हो गया है और इसी का नतीजा है कि लोगों ने समाज और देश के बारे में बड़े सपने देखने बंद कर दिए हैं।

इस अवसर पर जाने-माने आलोचक डॉ॰ नामवर सिंह ने कहा कि आज के दौर में सोचने की जगह ही समाप्त हो गयी है। उनका मानना है कि बौद्धिक शून्यता की स्थिति में हिंसा और आंतकवाद पैदा हो रहे हैं।

विदेश राज्यमंत्री और समता पार्टी के नेता दिग्विजय सिहं ने इस अवसर पर कहा कि इस अकेले रहकर समस्याओं का समाधागंज-जवारान करने में विफल रहने के बाद ही इंसान ने समाज और राज्य की रचना की तथा राज्य को अपना (इंसान का) वजूद समाप्त करने का अधिकार भी दे दिया।

दिल्ली के पेशेगत भागमभाग एवं गलाकाट बदहवासियों के बीच समाज के विभिन्न क्षेत्रों से जुड़े कुछ प्रर्खर प्रबुद्बजनों ने चितंन की उस प्रक्रिया में जेपी आंदोलन के प्रख्यात चिंतक रमेश दिक्षित ने भी कहा कि आज जिनके हाथों में सत्ता की बागडोर है उन्होंने हर चीज के अंतिम सत्य को पहचानने का दावा किया है और वे अपने इस सत्य को हिंसा और अराजकता फैलाकर लागू भी कर रहें हैं। राजनीति से निकली बात न्यायपालिका तक भी चली गयी है और सभा में उपस्थित सर्वोच्च न्यायालय में देश की प्रथम महिला अधिवक्ता श्यामला पप्पू ने 'भी लार्डो' (न्यायधीशों) पर निशाना साध उन्होंने देवत्व से पदच्यूत न्यायधीशों की बहाली स्थानांतरण तथा दंडित करने के लिए एक स्वतत्र राष्ट्रीय न्यायिक आयोग के गठन की वकालत की ।

रंगे-सियारों का 'राष्ट्रवाद'

✍ अग्निवाण

संतों ने सोचना शुरू कर दिया है। 'भारत के संतों ने फिर 'देश, समाज और विश्व कल्याण' के लिए सोचना शुरू कर दिया है।'

अब देश का कायापलट होकर रहेगा। जब हराम की खाकर आराम की सोचने वाले, देश-समाज को दिशा देने की सोच लें तो परिवर्तन को कौन रोक सकता है?

इन दिनों सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का हौवा खड़ा हुआ है। धर्म आधारित साहित्य और संस्कृति का मिश्रण सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का मूल तत्व है। इसके अनुसार 'अनेकता में एकता' की विशेषतावाले देश भारत में एक धर्म का वर्चस्व रहेगा, एक ही समुदाय के लोग शासन करने का अधिकार पा सकेंगे। मन्दिर राष्ट्रीय प्रतीक बनेगा। हर हिन्दू अपने घर में मन्दिर जरूर बनाएगा जिसमें रामलला की आत्मा कैद की जाएगी। सांस्कृतिक राष्ट्रवाद के नायक राम हैं। आज तक जितने घृणित कार्य महात्मा गांधी की तस्वीर लगाकर किए जा रहे हैं वही सब रामलला की मूर्ति के सामने किए जाएंगे। रामलला की आत्मा इन सबसे प्रसन्न होगी। अपनी संतति के परिवर्तन को देखकर भला कौन खुश नहीं होता?

सांस्कृतिक राष्ट्रवाद का नारा देने वाले भारत की परंपरागत समृद्ध संस्कृति की लाश पर अपनी संकीर्ण, विभेदकारी, असहिष्णु, खोखली संस्कृति का निर्माण करना चाहते हैं। इन संकीर्णतावादियों को 'कचरा-पुराण' से विशेष लगाव है। इसका सपना है कि वे इतिहास का पुनर्लेखन कर भारतीय इतिहास को गौरवमंडित कर देंगे। अतीत की तमाम विफलताओं, विद्रूपताओं, विषमताओं को अपनी थोथी दलील से गौरवपूर्ण बताने वाले ये लोग नहीं जानते कि अतीत के इतिहास का पुनर्लेखन कर वर्तमान और भविष्य को संवारा नहीं जा सकता जबकि इतिहास से सीख लेकर व वर्तमान को सुदृढ़ बनाकर भविष्य को गौरवपूर्ण बनाया जा सकता है।

एक संकीर्णतावादी ने पिछले दिनों लिखा-'चौदह सौ वर्ष पुराने इस्लाम और सात सौ वर्ष पुराने कुरान की पुनर्विवेचना की जानी चाहिए एवं मुसलमानों को आज के संदर्भ में सोचना चाहिए।' बात ठीक है पर इसी तरह पांच हजार वर्ष पुराने वेद, उपनिषद, पुराण की पुनर्विवेचना क्या जरूरी नहीं? कपोल कल्पनाओं पर आधारित ये ग्रंथ भारतीय मानस की प्रगति के रास्ते की सबसे बड़ी अड़चन हैं। यथार्थ से दूर स्वप्नजीवी बनाने का कार्य इन ग्रंथों ने किया है। वस्तुतः सदियों पुराने धर्मग्रंथ आज के युग में प्रासंगिक नहीं हो सकते।

एक संकीर्णतावादी ने पिछले दिनों लिखा-'चौदह सौ वर्ष पुराने इस्लाम और सात सौ वर्ष पुराने कुरान की पुनर्विवेचना की जानी चाहिए एवं मुसलमानों को आज के संदर्भ में सोचना चाहिए।' बात ठीक है पर इसी तरह पांच हजार वर्ष पुराने वेद, उपनिषद, पुराण की पुनर्विवेचना क्या जरूरी नहीं? कपोल कल्पनाओं पर आधारित ये ग्रंथ भारतीय मानस की प्रगति के रास्ते की सबसे बड़ी अड़चन हैं।

संकीर्णतावादी गला फाड़-फाड़ चिल्ला रहे हैं-वेदों में विज्ञान है। हवाई जहाज बनाने की कला का वर्णन है। जीवन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, पदार्थ विज्ञान सबका उत्स वेदों से है। वेदों को पढ़िए और ज्ञान-विज्ञान के पंडित बन जाइए। विज्ञान के प्राध्यापक रहे मानव संसाधन विकास मंत्री ने तो पंडिताई, ज्योतिष, हस्तरेखा बांचने को बाकायदा विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में शामिल करवा ही दिया है। अब दर-दर भटकने की जरूरत नहीं घर-घर घूम कर घंटी डुलाइए, दक्षिणा लीजिए एवं जीवन के सारे सुख भोगिए।

मजे की बात देखिए। नेताओं के बच्चे अंग्रेजी माध्यम के विख्यात स्कूलों, कॉलेजों में विदेशों में रहकर पढ़ेंगे, विज्ञान की शिक्षा पाएंगे। जनता को हिन्दी, संस्कृत में पढ़ने की सलाह दी जाएगी। एक तरफ संपूर्ण साक्षरता का नारा लगाएंगे, दूसरी ओर शिक्षा को इतना खर्चीला बनाएंगे कि आम आदमी अपने बच्चे को बढ़ाने की हिम्मत ही न कर सके।

करनी और कथनी में जमीन-आसमान का फर्क सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की एक और विशेषता है। स्वदेशी का नारा लगाकर विदेशी आकाओं के जूता चाटनेवाले जब राष्ट्रवाद के नायक बनेंगे तो इस बात से इंकार कैसे किया जा सकता है कि वे 'रंगे- सियार' नहीं होंगे? भारतीय राजनीति में 'रंगे-सियारों' का सितारा अभी बुलंदी पर है। ये सियार शेर की खाल ओढ़कर चाहे जितना रोब गांठ लें पर असल में हैं ये कायर, डरपोक, लफ्फाज ही। इनकी धूर्तता इन्हें सत्ता पर बिठाती है, अकर्मण्यता सत्ता से बेदखल करती है। पर ये बेशर्म अपनी आदतों से बाज नहीं आते।

आदतों से ये बाज आयेंगे भी क्यों? स्वातंत्रोत्तर भारत में नैतिकता जिस तरह खत्म हुई है उससे अनैतिकता को ही सर्वमान्य सिद्धांत बनाकर अपनी गोटी फिट करनेवालों की चांदी हो गई है। आज जनभावनाओं की फिक्र किसी को नहीं है। राजनेताओं ने यह मान लिया है कि चुनाव के समय कोई न कोई भावनात्मक मुद्दा उछाल कर जीत पाई जा सकती है। इसलिए भुखमरी, गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी अब चुनावी मुद्दे नहीं होते। अब चुनाव राम, अयोध्या, भोजनशाला, गोधरा जैसे मुद्दों पर लड़े जा रहे हैं जिनकी अहमियत जनता के

लिए कुछ भी नहीं। धनबल, छलबल, गुंडाबल की बदौलत चुनाव जीतने की प्रक्रिया ने सारे नियम, कानून, नैतिकता, मानवता को ठंडे बस्ते में डाल दिया है। ये शब्द सिर्फ दूसरों को सुनाने के लिए हैं, स्वयं अपनाने के लिए नहीं।

अनैतिक सत्ता की दुरभिसंधि का आकर्षण संतों को भा गया है। वस्तुतः धर्म का उपयोग सत्ताप्राप्ति के लिए करने की मानसिकता ने संतों को यह अवसर प्रदान कर दिया है कि वे भी सत्ता सुख भोगें। **संत अब धर्म की जगह राजनीति की भाषा बोलने लगे हैं। स्वयं को धर्म के अलम्बरदार कहने वाले शंकराचार्यगण भी अब राजनीतिक पार्टियों के पालतू सेवक बन कर रह गए हैं।**

सत्ता से जुड़कर अपनी प्रभुसत्ता स्थापित करने की संतों की इच्छा इतनी बलबती हो गई है कि कई संत तो खुलेआम राजनीतिक दलों की नीतियों का प्रचार करने में जुट गए हैं।

ऐसे ही एक संत ने पिछले दिनों कोलकाता में 'राष्ट्रवाद और संत' विषयक गोष्ठी आयोजित करके कहा कि भारत चूंकि हिन्दू बहूल राष्ट्र है एवं संत हिन्दुओं के शीर्षस्थ बौद्धिक प्राणी रहे हैं इसलिए इस देश की सत्ता संतों की भावना के अनुरूप ही चलनी चाहिए। इस संत महोदय की धारणा है कि संतकृत राष्ट्रवाद ही असली राष्ट्रवाद है। मुसलमानों, ईसाइयों के विरुद्ध विषवमन करते हुए इस संत ने हिन्दू सत्ता स्थापित करने के भाजपाई और संघी प्रयासों को बल देने का आवाह्न भी किया।

यह बात ठीक है कि भारत के संतों ने एक समय समाज और राष्ट्र को संचालित करने हेतु अपना दर्शन दिया था। पर उस दर्शन के पीछे न तो सत्तालोलुपता की भावना थी, न हराम की कमाई की। भारतीय संत तो बीहड़ जंगलों में कष्टसाध्य जीवन जीते हुए समग्र मानवता के कल्याण की बात करते रहे हैं। राजसत्ता में रहकर भी अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रखा भारतीय संतों ने।

लेकिन आज के संत? प्रासादनुमा आश्रमों, मठों के वातानुकूलित कक्ष में बैठकर त्याग, तप, परोपकार, दान की बात करने वाले आज के संत तो संतत्व के नाम पर कलंक हैं। सत्ता की चिरौरी करने वाले तो सत्ता के दलाल होते हैं। आज के संत भी सत्ता की दलाली में लगे हैं। यही कारण है कि सत्ता इनके और ये सत्ता के पूरक बनते जा रहे हैं।

आज जिस सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की बात की जा रही है वह एक तो संक्रमित है, दूसरे संतकृत, यह राष्ट्र की सच्चाई से आंख मूंदकर अपनी घृणास्पद, राष्ट्रद्रोही, जनविरोधी सोच को जन-गण पर थोपने की साजिश है, देश की पहचान बनाने की कोशिश नहीं।

यह कैसा राष्ट्रवाद है जिसमें विचारों की स्वतंत्रता का हनन किया जा रहा है, साहित्य को खानों में बांटा जा रहा है, जनभावनाओं की अभिव्यक्ति को कुचला जा रहा है। इस देशद्रोही राष्ट्रवाद का एक रूपक 'धर्म संसद' के रूप में सामने आया है। देश की सर्वोच्च जनप्रतिनिधियों की सभा 'संसद' को नकार कर धर्मसंसद की राय सर-आंखों पर उठाने वाली सत्ता जनविरोधी नहीं तो क्या है? संसद, न्यायालय की अवमानना करने का जनविरोधी अधिकार अगर भगवा धारण करने से मिल जाता है तो देश के हर उपेक्षित नागरिक को ऐसा करने का अधिकार मिलना चाहिए। अगर संघ परिवार को अपनी संसदें बनाने का अधिकार है तो देश के दूसरे धर्मावलंबियों को अपनी-अपनी धर्म-संसद बनाने से कैसे रोका जा सकता है? फिर यदि धर्म-संसदों के निर्देश पर ही देश को चलना है तो जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों की संसद की उपयोगिता क्या रह जाएगी?

कबीर ने (अ) संतों के लिए कहा था- 'मन न रंगाए, रंगाए जोगी कपड़ा', और आज हम इस सच को अपनी आंखों के समक्ष घटित होते देख रहे हैं। जिन्हें हम संत मानते हैं उनका जीवन कितना कलुषपूर्ण है इसका अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि राम की नगर अयोध्या में 109 माफिया संत हैं, चित्रकूट में संत-महंत अस्त्रों की छाया में रह रहे हैं, हरिद्वार-ऋषिकेश-वृन्दावन-मथुरा-काशी-बनारस-गया में संतों के वेश में आततायी बैठे हैं जो जर, जमीन, जोरू के लिए खूनी संघर्ष करते रहते हैं।

ये संत राष्ट्रवाद की परिभाषा देंगे? ये हमें जीवन का दर्शन देंगे?

असम्भव!

सत्ता और ऐय्याशी के लिए आदर्शों की तिलांजलि देकर भोली जनता को बेवकूफ बनाने की प्रक्रिया का सच आज नहीं तो कल उजागर होगा ही और उस दिन जनाक्रोश से बचकर ये संत कहां जाएंगे? कहां जाएंगे इनके पृष्ठपोषक राजनेता और राजनीतिक दल?

समय सदा एक सा नहीं रहता। वक्त का पहिया बड़ी से बड़ी सत्ता को धूलिसात् कर देता है। बारह वर्ष में घूरे के भी दिन फिरते हैं। फिर जनता तो जनता है।

सांस्कृतिक राष्ट्रविदों सावधान!

'जन संसार' से साभार

सरदार पटेल जयंती की शुभकामनाओं के साथः-

मे० न्यू रामप्यारे सिंह एण्ड सन्स

के.सी. सुपर, ए.सी.सी,
लफार्ज सीमेंट और छड़ के थोक
एवं खुदरा बिक्रेता

मीठापुर, खगौल रोड
पटना - 800001

मनस् क्रांति ही परिवर्तन की बुनियाद

मुनि लोकप्रकाश 'लोकेश'

प्रख्यात स्वीडिश अर्थशास्त्री प्रो० गुन्नार मिर्डल ने लिखा था कि – "किसी भी योजना को तबतक सफल नहीं माना जा सकता, जब तक कि उससे गरीब तबका लाभान्वित न हो। ... अविकसित देशों में यथास्थिति और विकास की चुनौतियों का सामना करने के लिए परिवर्तन की गति को तेज करनी होती है। अक्सर विकास की गति इसलिए मंद होती है कि जो लोग उसके लिए उत्तरदायी होते हैं, वे आर्थिक विकास के मानवीय आयामों को समझ सकने में विफल होते हैं।

प्रो० गुन्नार मिर्डल ने यह भारत के संदर्भ में कहा था। उन्होंने यह कोई कल्पनाशीलता के आधार पर नहीं बल्कि भारत को अच्छी तरह देखने-समझने के बाद अपनी टिप्पणी दी थी। कहना न होगा कि प्रो० मिर्डल का भारत से आंतरिक लगाव रहा है। उन्होंने भारत की समस्या और व्यथा को अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "एशियन ड्रामा" में विस्तार से रेखांकित किया है। उनकी स्पष्ट धारणा रही है कि भारत साम्यवादी और पूंजीवादी व्यवस्थाओं का विकल्प बन सकता है।

लेकिन क्या हम अपनी शक्ति और खासियत के प्रति सचेत है? क्या हमें अपनी सही पहचान है? क्या ऐसा नहीं लगता कि हमारी हालत हनुमान की तरह है जिन्हें बार-बार उनकी शक्ति का अहसास कराया जाता था। वे तो फिर भी अपनी ओर लौट आते थे लेकिन हम तो लगातार कभी साम्यवाद तो कभी पूंजीवाद की ओर भाग रहे हैं। हम अपनी सभ्यता और संस्कृति को छोड़कर पश्चिम की उधार की संस्कृति को अपनाएं जा रहे हैं। यह वैसा विरोधाभास है कि पश्चिम भारत की ओर देख रहा है और भारत पश्चिम को अपना रहा है। प्रधानमंत्री श्री अटलबिहारी वाजपेयी ने पिछले दिनों महान दार्शनिक एवं प्रखर चिंतक आचार्यश्री महाप्रज्ञ द्वारा लिखित शोशियल पुस्तक के लोकार्पण समारोह में बोलते हुए कहा था कि जिस देश ने दुनियां को रोशनी दिखाई वही देश आज अपनी राह नहीं ढूंढ़ पा रहा है।

आज हर कोई भारत में विकास की चुनौतियों का सवाल उठा रहा है। यह इसलिए कि हम विकास-योजनाओं से लगातार दूर होते जा रहे हैं। यहां तो आदर्श और व्यवहार की समानता भी लुप्त हो रही है। हर भारतीय दुहरा जीवन जीने के लिए विवश है। शासन हर आदमी से सहयोग की अपेक्षा करता है लेकिन विकास योजनाओं को उन तक पहुंचने नहीं देता है। वहीं हर नागरिक शासन में हिस्सेदार चाहता है लेकिन शासन की समस्याओं के रूप में देखने से कतराता है।

भगवान महावीर सहित अनेक भारतीय मनीषियों ने समय-समय पर यही कहा है कि हमारे विचार और व्यवहार में एकरूपता रहनी चाहिए। महावीर के ग्रंथों में यह हर जगह दिखाई पड़ता है जब वे कहते हैं-आय-तुले पयासु-यानी आत्म तुल्य समझेंगे सभी प्राणियों को। जैसी भावना हम अपने प्रति रखते हैं, वैसी ही दूसरे के प्रति भी रखें। इसके लिए उन्होंने आत्मिक विकास पर बल दिया क्योंकि उसी रास्ते से सारे विकास के रास्ते खुलते हैं। तब न तो हिस्सेदारी, न अधिकार और न कर्तव्य का सवाल उठेगा। सभी अपने-अपने रास्ते मगर सामूहिक जीवन दर्शन के साथ चलेंगे। तभी तो महावीर ने कहा कि जो एक को जानता है सबको जानता है और जो सबको जानता है वह एक को जानता है।

भारतीय मनीषियों के अनुभवों और मान्यताओं के आधार पर अगर चला जाए तो निश्चित तौर पर न तो कहीं कोई अन्याय होगा और न शोषण। तब विकास योजनाओं के लागू होने का संदेह भी नहीं व्यक्त किया जाएगा। तब लोकनायक जयप्रकाश नारायण को भी यह नहीं कहना पड़ता कि "संपूर्ण क्रांति का मेरा स्वप्न जमीन पर उतारना युवा शक्ति के ही हाथ में है। मैं तो यह दिन देखने के लिए नहीं रहूँगा, पर समाज का अंतिम व्यक्ति इज्जत के साथ जीवन जी सकेगा, अपनी क्षमता भर मेहनत कर सकेगा और अपनी आवश्यकता भर पा सकेगा, तब मुझे संतोष होगा।" जे०पी० का यह स्वप्न माओत्सेतुंग की उस कोशिश से मिलता हुआ है, जिन्होंने चीन में छात्रों को गावों की ओर जाने और वहां गरीब-विपन्न लोगों के सुख-दुख में समरस होने के लिए प्रेरित किया था। इतिहास की यह कोशिश रही है कि हमारा रिश्ता सबसे, खास तौर पर समाज के अंतिम व्यक्ति से जुड़ा रहे। सभी अपनी समस्याओं के प्रति संवेदनशील रहें और समाज के निर्माण के लिए साथ-साथ चलें।

कोई भी परिवर्तन सामाजिक संरचनाओं तथा लोक परंपराओं के आधार पर ही हो सकता है। ऐसा कतई संभव नहीं कि जैसी परिवर्तनकारी क्रांति फ्रांस में हुई, वैसी क्रांति भारत में भी हो सकती है या दोनों देशों में एक तरह के परिणाम हो सकते हैं। मार्क्स अगर सोवियत रूस में परिवर्तन की भूमिका तैयार करता है तो वह वहां धर्म को अफीम कह देता है लेकिन भारत में कोई भी परिवर्तन धर्म को अलग फेंक कर नहीं किया जा सकता। मार्क्स के दर्शन की यह एक बड़ी भूल रही है कि वे समाज में शोषण के कारण के लिए वर्गभेद भरे सामाजिक ढांचे को जिम्मेदार ठहराया और कहा कि इसको बदल देने से शोषण का अंत हो जाएगा। उन्होंने "मन" जैसी सत्ता की पूरी तरह नकार दिया जबकि भारतीय परंपरा और सामाजिक संरचना में "मन" एक प्रभावशाली अस्त्र है, जिसके बदले बिना कोई भी क्रांति संभव नहीं है। महावीर अगर करुणा की बात कहते हैं तो वह करुणा मानव मात्र की नहीं बल्कि संपूर्ण जीव मात्र की है। मार्क्स ने शोषण के अंत के लिए हिंसा की उपेक्षा नहीं की जबकि महावीर शोषण को ही हिंसा मानते है। महावीर ने इसके प्रतिकार का जो रास्ता दिखाया वह पूर्णतः अहिंसक है।

यहां फिर गुन्नार मिर्डल की उस टिप्पणी को रेखांकित करना होगा कि विकास की गति इसलिए मंद होती है क्योंकि इसकी जिम्मेदारी

ढोनेवाले लोग मानवीय आयामों को समझ पाने में विफल होते हैं। विकास के बाधित होने के लिए हम सारे लोग जिम्मेदार हैं। गांधीजी ने जिस अवज्ञा आंदोलन का श्री गणेश किया था और इसमें अधिकांश लोगों ने हिस्सेदारी निभाई, दरअसल वह आंदोलन अहिंसक तो था, मन के भीतरी स्तर से असहमति की आवज भी थी। इस संदर्भ में कहा जाए तो श्रमिकों का शोषण इसलिए होता है क्योंकि भीतर से असहमति की आवाज उठाने का उनमें साहस नहीं है। यह व्यवहार में देखा गया है कि शोषण दमन की भावना का उन्मूलन अगर भीतर से हो जाए तो समाज को बदलना मुश्किल नहीं है। आचार्यश्री महाप्रज्ञ शिक्षा के क्षेत्र में जो जीवन विज्ञान पर सर्वाधिक बल इसलिए दे रहे हैं क्योंकि जीवन विज्ञान भीतर से बदलाव की प्रक्रिया है और यह देखा गया है कि जो भीतर से बदलाव होता है वह स्थायी होता है। समस्या जनसमर्थन की नहीं है बल्कि आंतरिक शुद्धि की है। अगर उत्पादन में श्रमिक ईमानदारी से लगे तो मालिकों को भी एक बार सोचना होगा। अगर मालिक श्रमिकों के प्रति ईमानदारी से उत्तरदायी नहीं है तो श्रमिकों को असहमत होने का पूरा अधिकार है। सवाल है कि जो जनशक्ति सत्ता परिवर्तन कर सकती है, साम्राज्यों को ध्वस्त कर सकती है वह मानवीय आदर्शों को क्यों स्थापित नहीं कर सकती? इसमें महत्व है प्रवृत्तियों का, जो किसी भी बदलाव का आधार बिन्दु होता है।

भारत ने हजारों वर्षों के इतिहास में लड़ाईयां ही लड़ी है। लेकिन दुर्भाग्य है कि जीत के जश्न के बाद जो संघर्षशील लोग थकान मिटाने जाते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि असली संघर्ष तो अब शुरू होगा। यही कारण है कि जन चेतना का रूपांतरण आज तक ठीक से नहीं हो पाया है। एक साम्राज्य टूटता है और दूसरा खड़ा हो जाता है, एक सत्ता उखड़ती है दूसरी जम जाती है। लेकिन दोनों के चरित्र में कोई फर्क नहीं दिखाई पड़ता है क्योंकि उनमें "मन" के स्तर पर कोई परिवर्तन नहीं होता है। मगर वह परिवर्तन हो जाए तो समता की परिभाषा नहीं गढ़नी होगी। हर आदमी और सत्ता का स्वभाव ही समतामय होगा। देश की आजादी के साथ अणुव्रत आन्दोलन ने जो आह्वान किया था वह इसी भावना पर आधारित था। वह यदि पूर्णत: सफल हो जाता तो वह सवाल कोई नहीं उठानेवाला होगा कि विकास की योजनाएं सफल नहीं हो रही है या शोषण की परंपरा जीवित है या हिंसा हो रही है। तब संपत्ति पर किसी का अधिकार नहीं रह जाएगा और अन्याय-शोषण का सवाल नहीं उठेगा। तब न जन-क्रांति की बात उठेगी और न रक्त क्रांति की। न अमीर और गरीब, न मालिक और न मजदूर का सवाल उठेगा। सिर्फ याद किया जाएगा मनस् क्रांति को जो सारे परिवर्तनों की बुनियाद है। इसके लिए धर्मगुरूओं को तैयार होना होगा जो मनस् क्रांति को मौन क्रांति से जोड़ सकते हैं।

संपर्क: अणुव्रत भवन, 210, दीन दयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-2

राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक संवाहिका

विचार दृष्टि

अब नये तेवर व कलेवर में

- विचारोत्तेजक एवं प्रभावोत्पादक आलेख जाने-माने लेखकों की कलम से
- शानदार कागज पर जानदार छपाई
- आकर्षक साज-सज्जा में बोलती तस्वीरें
- सामाजिक राजनीतिक यथार्थ की कहानियाँ व कविताएँ
- सम-सामयिक मुद्दों पर निष्पक्ष एवं निर्भिक विचार व दृष्टि
- शिक्षा, सेहत, महिलाओं पर विशेष सामग्री
- कला, संस्कृति एवं साहित्य पर गहरी पड़ताल
- दिखने में सुंदर और पढ़ने में बेहतर

सदस्यता ग्रहण कर आप अपनी प्रति सुरक्षित कराएँ और एक अच्छी मानसिक खुराक पायें।

प्रबंध संपादक, विचार दृष्टि

मे. माँ तारा स्वीट्स

आर. ब्लॉक चौराहा
वीरचन्द पटेल पथ
पटना-800001

मे. न्यू माँ तारा स्वीट्स

आई. ओ. सी. रोड
सिपारा, पटना-20

सभी तरह की स्वादिष्ट मिठाइयों एवं नमकीन का उत्तम प्रतिष्ठान

हैदराबाद की चिट्ठी

प्रस्तुतिः चंद्रमौलेश्वर प्रसाद

त्यौहारः- 'बोनालु'

भारत की स्वतंत्रता के पूर्व हैदराबाद रियासत की अपनी एक अलग संस्कृति थी जो आजभ ी यहाँ के कुछ तीज-त्यौहारों में झलकती है। बोनालु एक ऐसा ही त्यौहार है जो आषाढ़ के महीने में मनाया जाता है। पूरा माह चलनेवाले इस पर्व में दुर्गा के सभी मंदिरों में बारी-बारी से पूजा होती है और उत्सव मनाया जाता है।

हैदराबाद के कोने-कोने में मनाफ जानेवाले 'बोनालू' त्यौहार को व्यवस्थित ढंग से मनाने के लिए शहर को तीन क्षेत्रों में बाँटा गया है।

आषाढ़ के प्रथम रविवार को गोलकोण्डा किले के दुर्गा माता की पूजा से बोनालू की यात्रा शुरू होती है। दूसरे रविवार को सिकंद्राबाद की महांकाली माता के उज्जैनी मंदिर में मनाया जाता है। अंतिम रविवार को लाल दरवाजा के 'बोनालु' से इस उत्सव के इति होती है। काली को सश्री मंदिर इनमें से किसी एक मंदिर से जुड़ जाते हैं।

इस पर्व को समाज के सभी वर्ग मिलजूल कर मनाते हैं। इस अवसर पर झाँकियाँ (फलारम् बंड़ी) निकाली जाती हैं जिनके आगे पोतराजू (नर्तक) पैरों/घुंघरू बांधे,बदन पर हल्दी का लेप लगाए और सिर पर 'माता का झूला' लिए मंदिर तक नाचते,गाते,बजाते पहुँचते हैं। कलशों (मिट्टी के मटकों) को हल्दी,कुमकुम तथा नीम के पत्तों सजाकर,उसपर मिट्टी का जलाकर अहिलाएं अपने सिर पर लिए हुए मंदिर में माता को भेंट चढ़ाती हैं।

कुछ दशक पूर्व मंदिर के प्रांगण में बकरों की बलि दी जाती थी। इस पर प्रतिबंध लगने के बाद अब निंबू काटे जाते हैं। पूजा के बाद 'रंगम' (जिसपर 'माता' आती है) गीली साड़ी पहने मिट्टी के कच्चे घड़े पर खड़ी होकर आनेवाले वर्ष की भविष्यवाणी करती है।

विभिन्न मंदिरों की माता के घट को विशेष रूप से सजाकर बड़ी धूम-धाम से शोंभा यात्रा निकाली जाती है। इस शाभायात्रा के बाद इन घटों को अपने स्थानीय मंदिरों में स्थापित किया जाता हैं। महाकाली के सभी मंदिरों को फूलों और रौशनी से सजाया जाता है। सारा माहौल न केवल धार्मिक बल्कि एक सामाजिक उत्सव लगता है। इसमें समाज के वरिष्ठ नागरिकों से लेकर राजनीति के बड़े नेताओं तक सभी लोग भाग लेते है।

राज्य के मुख्यमंत्री नारा चंद्रबाबू नायुडू ने इस वर्ष 'बोनालु' उत्सव को पर्यटक त्यौहार (टूरिज्म फेस्टवल) घोषित किया है जिससे आनेवाले वर्षो में इस त्यौहार को और अधिक ख्याति मिलेगी और आशा की जा सकती है कि हैदराबाद के इस विशेष पर्व 'बोलालु' का महत्व और अधिक बढ़ जाएगा।

साहित्य

'आनंद ऋषि साहित्य पुरस्कार'

सुप्रसिद्ध जैन आर्चाय आंनद ऋषि जी की स्मृति में हैदराबाद की आचार्य आनंद ऋषि साहित्य निधि ने इस पूरस्कार की स्थापना सन् 1991ई॰ में की और अब तक दक्षिण भारत के 12 वरिष्ठ हिंदी सेवियों को 'आंनद ऋषि साहित्य पुरस्कार' प्रदान किया गया है।

इस वर्ष का पुरस्कार वरिष्ठ स्वतंत्रता-सेनानी और हिंदी सेवी डॉ॰ रुक्मॉजी राव 'अमर' को दिया गया है। डॉ॰ अमर मराठी,तेलुगु, कन्नड़, तमिल,अंग्रेजी और हिंदी के अच्छे जानकार हैं। एक अच्छे रचनाकार के साथ-साथ उन्होंने कुछ मासिक पत्रिकाओं का संपादन भी किया है।

77 वर्षीय कवि,नाटककार, अभिनेता, निर्देशक, समीक्षक,शिक्षक,हिंदी प्रचारक एवं पत्रकार डॉ॰ रुक्माजिराव 'अमर'को पुरस्कार स्वरूप 21 हजार रूपये, शॉल, प्रशस्ति-पत्र एवं आर्चायश्री के साहित्य का एक सेट भेंट किया गया।

कला

निशुम्बिता नाट्यालय ने धर्मवीर भारती प्रसिद्व नाटक 'अंधायुग' का मंचन किया। यद्यपि इस नाटक का मंचन एक कठिन प्रयोग माना जाता है, होलागुण्डा राममोहन के कुशल निर्देशन तथा शबाना अजीज़,देवराज सरकार,अंकित झुनझनवाला,नवाब खुर्रम अली खाँ प्रेरणेश कुमार आदि के अभिन्य को दर्शकों ने काफी सराहा।

भरत दायोलकर के विख्यात नाटक मंकीज़ विजनेस का मंचन पहली बार अंग्रेजी और मराठी में किया गया। इस हास्य नाटक में भरत दायोलकर के अलावा वीजू खोटे, किशोर प्रध ान,अतूल परचुरे, अनन्या दत्ता और विहग नायक ने विभिन्न भूमिकाएं निभाई जिनके चूटीले संवाद दर्शका को ढाई घंटे तक हँसाते रहे।

देश का सबसे बड़ा आईमेक्स थियेटर हैदराबाद में-

हैदराबाद और सिंकद्राबाद को जोड़नेवाले तालाब हुसैन सागर के तट पर देश का सब बड़ा आईमेक्स थियेटर का पर्दा 22 मीटर ऊँचा और 30 मीटर चौड़ा है अर्थात इस पर्दे पर प्रतिबिम्ब 70 एम एम पर्दे के मुकाबले तीन गुना बड़ा होता है।

2.35 लाख वर्ग मीटर फैले इस थियेटर कांप्लेक्स में शापिंग मॉल,पारिवारिक मनोरंजन केंद्र, वीडियो गेम्स तथा फूडकोर्ट भी हैं। हैदराबाद पर्यटकों के लिए एक और आकर्षण बना है यह आईमेक्स थियेटर।

संपर्क: 1-8-28, यशवंत भवन,आलवाल
सिकंदराबाद-500010 (आंध्र प्रदेश)

हठधर्मिता के कारण कानकुन बैठक विफल

विचार कार्यालय, नई दिल्ली

कैरेबियन सागर के तट पर बसे प्राकृतिक सौंदर्य से लबालब मैक्सिको के खूबसूरत शहर कानकुन में विश्व व्यापार संगठन(डब्ल्यूटीओ) की पाँच दिवसीय मत्रिस्तरीय बैठक दोहा को दोहराते हुए विफल हो गयी। इसका मुख्य कारण था विकसित देशों की हठधर्मिता यानी विकासशील देशों को कृषि के किसानों को दी जानी वाली रियायतों को समाप्त करना। दरअसल अमीर देशों के समूह-8 विकासशील देशों की कृषि एवं सिंगापुर मुद्दों की अनदेखी कर डब्ल्यूटीओ. एजेंडे में व्यापार और निवेश मुद्दे शामिल कराने का प्रयास कर रहे थे। यह तो कहिए कि भारत सहित 69 विकासशील देशों ने अपनी एकजुटता का परिचय देते हुए इसका जोरदार विरोध किया और इसके चलते विकासशील देशों तथा अमरीका-यूरोपीय संघ के बीच कृषि के मसले पर जमकर खींचतान हुई। परिणाम यह हुआ कि अमरीकी-यूरोपीय संघ एजेंडे में व्यापार व निवेश मुद्दे शामिल नहीं करा पाए। विश्लेषकों का मत है कि व्यापार उदारीकरण के लिए इससे बड़ी पराजय नहीं हो सकती।

यह बताते चलें कि कृषि के अतिरिक्त सिंगापुर मुद्दों में निवेश, प्रतिस्पर्धा नीति, सरकारी खरीद पारदर्शिता और व्यापार सुविधा जैसी बातें शामिल थीं। विकासशील देशों का कहना था कि अमीर देशों को अपने यहाँ किसानों को दी जा रही घरेलू सहायता और निर्यात पर दी जा रही भारी सब्सिडी समाप्त करनी चाहिए। दूसरी ओर अमरीका, जापान और यूरोपीय संघ के देश इस बात पर जोर दे रहे थे कि गरीब देश बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए मुक्त बाजार उपलब्ध कराएं, अपने यहाँ की कंपनियों की प्रतिस्पर्धा पर नियंत्रण रखे। सरकारी ठेकों में और अधिक पारदर्शिता तथा सीमा पर सामानों की आवाजाही की प्रक्रिया सरल बनाएं। यह तो कहिए कि अमीर देशों की मनमानी पर 69 विकासशील देशों ने अंकुश लगाया। इसमें चीन सहित ब्राजील और अफ्रीकी देश भी भारत के साथ हुए और धनी देशों की चुनौती का सामना किया गया। इसका परिणाम यह हुआ कि 146 सदस्यीय देशों के इस विश्व व्यापार संगठन की बैठक में यूरोपीय संघ और अमरीका के पक्ष में तैयार किया गया घोषणा पत्र का मसौदा पेश तो हुआ पर आम सहमति कायम नहीं हो सकी। इस बैठक के अध्यक्ष मैक्सिको के विदेश मंत्री लुइस अरनेस्टो डेरबेज ने बिना किसी घोषणा के ही सम्मेलन समाप्त कर दिया। यदि अमीर देश घोषणा पत्र के संशोधित प्रारूप को पारित कराने में सफल हो जाते, तो इसका लाभ उन देशों की बहुराष्ट्रीय कंपनियों को होता। इसलिए आज सवाल निवेश बढ़ाने का नहीं बल्कि बहुराष्ट्रीय कंपनियों की अवांछनीय गतिविधियों को नियंत्रित करने का है।

दरअसल विश्व के समृद्ध देश विकासशील एवं अर्द्धविकसित निर्धन देशों को कोई रियायत देने की जगह उन पर ऐसी शर्तें थोपना चाहते हैं कि उनके विकास के रास्ते ही बंद हो जाएं और ये राष्ट्र अमीर देशों के हिसाब से ही अपनी आयात-निर्यात नीतियाँ बनाएं तथा कृषि को संचालित करें। अमीर देशों की नीयत में खोट है। इसलिए विकासशील देशों को सदैव सचेत रहने की आवश्यकता है। कानकुन में इन देशों ने जैसी एकजुटता और दृढ़ता आगे भी कायम रखनी है, तभी विकसित देश अपने अड़ियल रवैए का परित्याग करने के लिए बाध्य होंगे और वे अन्य राष्ट्रों की विवशताओं का समझ सकेंगे।

आज वास्तविकता यह है कि विश्व व्यापार संगठन के बन जाने से दुनिया के धनी देशों को विकसित देशों के हित की चिंता के बजाए अपने हित की चिंता ज्यादा रहती है। वे अपने यहां के उत्पादों के साथ विकसित एवं अर्द्धविकसित देशों से कृषि एवं अन्य उत्पाद खरीद कर उसी के बाजार

में तैयार माल बेचते हैं और मुनाफा कमाते हैं। दूसरी ओर विकासशील देशों के उत्पाद विकसित देशो के बाजार में इसलिए नहीं बिक पाते हैं कि वे मंहगे और उसकी गुणवत्ता में कमी रहती है। विकसित देशों का हित इसलिए सध रहा है कि भारत जैसे विकसित देशों में दक्ष और सस्ते श्रम का अनुपम गठजोड़ है और इसका लाभ अमरीका और पश्चिम के अमीर देशों को बखूबी मिल रहा है। हमारे देश की उदारवादी नीतियाँ भी उन्हें फायदा पहुँचाने में मदद कर रही हैं। विश्व व्यापार संगठन की कानकुन बैठक में अन्य देशों के प्रतिनिधियों ने भारत के मंत्री अरुण जेटली के नेतृत्व में जैसी दृढ़ता दिखाई है उसे बरकरार रखने की आवश्यकता है अन्यथा अमरीकी एवं यूरोपीय संघ देशों के साम, दाम, दंड, भेद की नीति में फंसने की संभावना बनी रहेगी।

BMW Ventures Ltd.

Distributor

Tata Steel Jamshedpur

BMW Ventures Ltd.
112, Triveni Apartments
East Boring Canal Road, Patna

पंचायती राज को सराहा विश्व बैंक ने

विचार संवाददाता, दिल्ली कार्यालय

विश्व बैंक ने पंचायती राज संस्थाओं तथा पल्स पोलियो के कार्यक्रम की सफलता के लिए भारत की तारीफ करते हुए कहा है कि इन दोनों ने देश के ग्रामीण इलाकों के विकास में योगदान किया है। इस तंत्र से

काफी लंबे समय से जुड़े रहने के कारण विश्व बैंक के मुख्य अर्थशास्त्री निक स्टर्न ने विश्व विकास की रिपोर्ट जारी करते हुए पंचायती राज संस्थाओं के प्रभावशाली प्रदर्शन की चर्चा की, किंतु गरीब लोगों के लिए सेवाएँ प्रदान करने पर आधारित रिपोर्ट के निर्देशक एस० देवराजन ने कहा कि भारत सहित अधिकतर विकासशील देशों द्वारा खर्च किया जा रहा धन गरीबों तक नहीं पहुँच रहा है बल्कि उससे धनीलोगों को ही फायदा हो रहा है। उन्होंने कहा कि भारत में जन स्वास्थ्य प्रणाली और विकास कार्यक्रम तक 40 प्रतिशत पहुँच धनी लोगों की है। श्री देवराजन ने यह भी कहा कि भारत में कुछ ग्रामीण क्षेत्रों में लोग पीने का पानी प्राप्त करने के लिए पाँच गुना अधिक धन देते हैं क्योंकि उन तक मीटर लाइनवाला पानी नहीं पहुच पाता। उन्होंने इस समस्या की राजनीतिक वजहें बतायीं।

किसानों को ऋण मिलने में कई मुश्किलें

विचार कार्यालय, दिल्ली

भारत सरकार द्वारा किसानों के लिए कृषि ऋण की राशि अगले चार वर्षों में तिगुना करने के लक्ष्य और ब्याज दर में तीन से पाँच प्रतिशत की कमी करने के बावजूद देश भर में किसानों को ऋण हासिल करने में कई कठिनाईयें का सामना करना पड़ता है। सरकार ने कृषि ऋणों की सीमा अगले चार वर्षों में एक हजार चार सौ अरब रुपए करने का लक्ष्य रखा है और ब्याज दर में कभी कर नौ प्रतिशत किया गया है। विभिन्न राज्यों से प्राप्त रपट के अनुसार सहकारिता बैंकों की खस्ता वित्तीय हालत की वजह से संबद्व बैंको द्वारा किसानों को कर्ज देने से मुकरना तथा ब्याज दरों में कटौती होने के बावजूद यह दर ज्यादा होना भी वह कारण है जिसके चलते किसानों को ऋण हासिल करने में कठिनाई हो रही है।

कुछ राज्यों में किसानों को इस सुविधा की जानकारी ही नहीं है जब कि कुछ राज्य सरकार यह ऋण मुहैया करने में उदासीन रवैया अपना रही है। और वे इसके लिए कृषि एवं ग्रामीण विकास राष्ट्रीय बैंक को जिम्मेदार ठहराते हैं । उनका कहना है कि नाबाड उन्हें पर्याप्त कर्ज नहीं दे रहा है। विदित हो कि प्रधानमंत्री ने हाल ही में घोषणा की थी कि 50 हजार रुपए तक के कृषि ऋण पर मौजूदा 12 से 14 फीसदी ब्याज वसूला जाएगा। केरल में बैंकों का कहना है कि वे कृषि ऋण देने में इसलिए हिचकिचाते हैं क्योंकि इसमें प्रक्रिया लंबी व कठिन है।

दाद देनी होगी चेन्नै के ग्रामवासियों को

विचार कार्यालय, चेन्नै

जब मन में लगन और इच्छाशक्ति प्रबल हो तो कठिन से कठिन कार्य भी चुटकियों में आसान हो सकता है। चेन्नै राज्य के मदुरै जिलान्तर्गत एक छोटे से गाँव अथांगाराय पट्टी की एक दिलचस्प कहानी वहाँ के वासियों की लगन काबिले तारीफ है।

कहानी यूँ है कि अथांगाराय पट्टी गांव जहाँ के अधिकतर लोग गरीबी रेखा से नीचे गुजर बसर करते हैं। बारिश के पानी को एकत्र करने की प्रणाली यानी रेनवाटर हारवेस्टिंग (आर डब्ल्यू एच) का भरपूर लाभ उठाते हुए बारिश के पानी की एक बूंद भी बर्बाद नहीं होने देते हैं। उनकी यही खासियत उन्हें सबसे अलग करती है। इस गांव की एक और खास बात यह है कि इस गांव का प्रशासन एक दलित महिला पंचायत अध्यक्ष के. पम्पा संभालती है। यह महिला सूखे से प्रभावित अपने गांव के खुशहाल करने के लिए चौबीसो घंटे काम करती है और इसके प्रयास से बारिश के पानी की एक बूंद भी बेकार नहीं जाती।

386 घर के इस अंथागाराय पट्टी में कुल 410 आर डब्ल्यू एच संयंत्र लगे हुए हैं जिसे पंचायत अध्यक्ष के. पम्पा ने अपने कोष से लगवाया है। एक अभियान के तहत पम्पा ने एक घर की खाक छानी और बारिश के पानी की महत्ता बतायी। पम्पा ने इसके लिए पिछले अगस्त माह में चेन्नै के निकट मरायमलाए नगर में विशेष प्रशिक्षण भी हासिल किया था और उसी समय इस प्रणाली को अपने गांव में लागू करने का निर्णय लिया। उस गांव के एक निवासी गणेशन ने बताया कि पंचायत अध्यक्ष पम्पा बारिश के पानी को बचाने के इस अभियान के बाद प्रत्येक घर शौचालय की व्यवस्था करने में जुट जानेवाली है। उसका यह अभियान भी सफल होगा ऐसा लोगों का विश्वास है क्योंकि गांव के निवासियों का दिल उसने जीत लिया है अपनी कर्मठता और इच्छाशक्ति से। काश! देश के अन्य पंचायतों के अधिकारी और सदस्य भी पम्पा के इस लगन से सीख ले पाते!

समान नागरिक संहिता पर संगोष्ठी

विचार कार्यालय, पटना

विगत 24 अगस्त को राष्ट्रीय विचार मंच की बिहार इकाई द्वारा पटना के शेखपुरा स्थित ए. जी. कॉलोनी के कॉम्युनिटी हॉल में **'समान नागरिक संहिता की सार्थकता'** विषय पर एक विचार संगोष्ठी आयोजित की गयी जिसकी अध्यक्षता मंच की बिहार इकाई के अध्यक्ष जियालाल आर्य ने की। अपने अध्यक्षीय उद्गार में उच्चतम न्यायालय के फैसले का हवाला देते हुए श्री आर्य ने कहा कि सभी वर्गों की सामाजिक भावनाओं को ध्यान में रखकर ही समान नागरिक संहिता के लिए पहल की जानी चाहिए क्योंकि इस देश में कई धर्मों व परंपराओं के लोग रहते हैं।

संगोष्ठी के मुख्य अतिथि तथा पटना विश्वविद्यालय के पूर्व राजनीति विज्ञान विभागाध्यक्ष **प्रो. लाल नारायण शर्मा** तथा विशिष्ट अतिथि एवं पटना विश्वविद्यालय के उर्दू विभागाध्यक्ष **प्रो. असलम आजाद** एवं साहित्यकार ज्योतिशंकर चौवे के अतिरिक्त अन्य विद्वान वक्ताओं ने समान नागरिक संहिता बनाने के पूर्व निम्न बिन्दुओं पर सभी धर्मों एवं वर्गों की सहमति प्राप्त करने के प्रयास पर बल दिए जाने की आवश्यकता जताई-

1. भारत का प्रत्येक नागरिक एक समय में एक ही पत्ति-पत्नी (Spouse) रखेगा। 2. भारत का प्रत्येक नागरिक परिवार में शांति, सौहार्द, सद्भव (Harmony) सहयोग और पारस्परिक विकास, सम्मान एवं सुरक्षा की भावनाओं से जीएगा जिससे परिवार के भीतर नागरिकता के गुणों का विकास हो सके। यदि पिता-पुत्र, पति-पत्नी में शांति नहीं हो सकती तो नागरिकों को इसका प्रशिक्षण ही नहीं मिलेगा कि विभिन्न लोगों के साथ सहयोग के आधार पर सह-अस्तित्व कैसे संभव है? विवाह और तलाक के कानून सभी नागरिकों के लिए इस आवश्यकता को देखते हुए बनाए जाएंगे। 3. भारत के प्रत्येक 18 वर्ष के युवक और युवती को अपनी शादी अपनी इच्छा से करनी चाहिए और इसके लिए किसी दहेज के लेन-देन पर धारदार प्रतिबंध होगा। 4. भारत के प्रत्येक नागरिक की संपत्ति में पति-पत्नी की मृत्यु के बाद पुत्र और पुत्री को समान अधिकार होगा। 5. प्रत्येक परिवार अपनी क्षमता के अनुसार पुत्र और पुत्री को शिक्षा एवं रोजगार का समान अधिकार होगा। जो उच्च-मध्यमवर्ग और धनी वर्ग के हैं उनके लिए क्षमता के अनुसार अक्षम लोगों और परिवारों को शिक्षा एवं स्वास्थ्य की सुविधाएं प्रदान करने हेतु (Adopt) अंगीकार करना अनिवार्य होगा। संगोष्ठी में अपने विचार रखते हुए मंच के राष्ट्रीय उपाध्यक्ष **प्रो. साधुशरण** ने कहा कि अल्पसंख्यक वर्ग के पुरुषों की एक वैसी संख्या अब पुनः उच्चतम न्यायालय के निर्णय को भी इस्लामिक कानून के कुछ अंश का हवाला देते हुए अपनी धार्मिक स्वतंत्रता पर आघात बताते हैं। शाहबानों के समय में भी ऐसा हुआ था। इसे भी पंथ निरपेक्ष की भावना के विपरीत मानते हैं। मुस्लिम पर्सनल ला शरियाह लॉ का हिस्सा है, शरियाह लॉ इस्लाम का अटूट अंग है। इस्लामिक लॉ में तलाक की आसान पद्धति है और दूसरे बहुपत्नित्व की इजाजत है।

विवाद मूलत: विवाह एवं संपत्ति से जुड़े मुद्दे हैं। इस्लाम समर्थकों का कहना है कि संपर्ा संबंधी इस्लामिक प्रवधान महिलाओं के संबंध में बड़े ही प्रगतिशील है। ऐसा दीखता भी है। जहाँ तक तलाक की बात है तो यहाँ भी तीन उच्चारण का तलाक उनके धर्म-ग्रंथ कुरान का निर्देश नहीं है। पैगम्बर ने इसे अस्वीकृत किया है। कुरान के आयत 4:35 के अनुसार तलाक के लिए पंचायत की व्यवस्था है। इसके अलावा हैनवल, मालिकी, अहले-हदीठ और शिया मुस्लिम तीन-उच्चरण वाली तलाक को अस्वीकार करते हैं। वर्तमान समय में तीन-उच्चारण वाली तलाक का अनेक मुस्लिम देशों में प्रचलन नहीं है।

संगोष्ठी में अपने विचार व्यक्त करते हुए तिलका मांझी भागलपुर विश्वविद्यालय के पूर्व रजिष्ट्रार **राय प्रभाकर प्रसाद** ने इस पर जोर डाला कि सबसे पहले तथा सबसे ज्यादा इस बात की जरूरत है कि किन कानूनों के निर्माण तथा संशोधन समान नागरिक संहिता में अपेक्षित है, उसके संबंध में लोगों को शिक्षित किया जाए। चूंकि कानून के चार स्त्रोत-रीति रिवाज, धर्मग्रंथ, संसद/विधानमण्डल तथा उच्चत्तम न्यायालय / उच्च न्यायालय के निर्णय हैं और रीति-रिवाजों के रूप में इस विशाल देश के विभिन्न समुदायों, जातियों तथा जन-जातियों में अभी तक अनेक कानून विद्यमान हैं तथा अभी उनका संहिताकरण नहीं हो पाया है, इसलिए इस विषय में काफी अध्ययन की भी जरूरत है। सभी वर्गों को आत्ममंथन कर यह भी टटोलना होगा कि स्वयं उनके वर्ग के लिए निर्मित कानूनों में से किनमें संशोधन के लिए

शेष पृष्ठ 23 पर....

With best compliments from:

NEW PERFECT ENTERPRISES

Contact us for:

* STD/ISD/ Local /Fax
* Photo Stat, Stationery
* Mobile Connection, Smart Cards & Recharge Voucher

Bengali Road, Mithapur 'B' Area
PATNA- 800001
☎: 2229236(s), 2208175(s)
Fax: 0612-2212183, 99 Mobile: 9835088111

With best compliments from:

DREAMLAND
MEN'S WEAR

duke INDIA'S NO. 1 T-SHIRT

Monte Carlo COLLECTION

Contact us:

Shop Number 9,
Community Hall Market Complex
Kankarbagh, Patna- 800020

CHARAK PHARMA

Stockist in

- *Thumis Wander,*
- *Searle, Lupin,*
- *Caldern,*
- *SonaPharma Lab.,*
- *Elder,*
- *Gluconate,*
- *Amritanjan,*
- *Gujarat Lab.,*
- *Orbits,*
- *Stadermed etc.*

Govind Mitra Road
PATNA- 800004

सरदार पटेल अमेली की शुभकामनाओं के साथः

मे० नालन्दा मेडिकल्स

मखनियाँ कुआँ रोड, पटना - 800004

एवं

मे० न्यू नालन्दा मेडिकल्स

खजाँची रोड, पटना - 800004

हिंदु-मुस्लिम एकता के प्रतीक थे राजा साहब

विचार कार्यालय, पटना

पिछले 10 सितंबर को पटना में आयोजित शैली सम्राट राजा राधिकारमण प्र. सिंह के 114 वें जयंती कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. उदयराज सिंह ने राजा साहब को न केवल गंगा-जमुनी भाषा का प्रबल पक्षधर बताया बल्कि हिंदु-मुस्लिम एकता के प्रतीक की संज्ञा दी। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि डॉ. एन रामन्नायर ने राजा साहब की कविताओं पर निर्मित पोस्टर-प्रदर्शनी का अवलोकन करने के पश्चात अपने उद्गार में कहा कि उनके साहित्य में जनता का दु:ख-दर्द जीवंत रूप में दिखाई पड़ता है।

इस अवसर पर शांति निकेतन के पूर्व हिंदी विभागाध्यक्ष डॉ. सियाराम तिवारी ने 'हिंदी कथा साहित्य के राजा' विषय पर एक व्याख्यान दिया। कार्यक्रम में डॉ. सियाराम तिवारी तथा पत्रकार विकास कुमार झा को सम्मानित किया गया। प्रारंभ में डॉ. रामशोभित प्र. सिंह ने जहां अतिथियों का स्वागत किया वहीं कार्यक्रम की अध्यक्षता गोवर्द्धन प्रसाद 'सदय' तथा संचालन डॉ. शिवनारायण ने किया।

आलोक मेहता की पुस्तक का लोकार्पण

पिछले दिनों राष्ट्रीय राजधानी के इंडिया इंटर नेशनल सेंटर के सभागार में वरिष्ठ पत्रकार एवं 'आउट लूक' हिंदी पत्रिका के संपादक आलोक मेहता की पुस्तक **'पत्रकारिता की लक्ष्मण रेखा'** का लोकार्पण करते हुए केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री सुषमा स्वराज ने कहा कि इस पुस्तक में पत्रकारिता के अनेक रोगों और उनके उपचार पर गंभीर चर्चा है। ऐसी किताब लिखना इसलिए साहस का काम है कि अपनी ही बिरादरी में इससे अलोकप्रिय होने का खतरा बढ़ जाता है। इस अवसर पर टाइम्स ऑफ इंडिया के पूर्व संपादक इंदर मल्होत्रा ने प्रेस की निष्पक्षता पर जोर देते हुए उसके प्रहरी रूप को रेखांकित किया। कार्यक्रम का संचालन महेश दर्पण ने किया।

संघर्ष की चेतना जगाएं साहित्यकार

-सरदार गुरूदयाल सिंह

जलेस का छठा राष्ट्रीय सम्मेलन संपन्न

विचार कार्यालय, पटना

विगत 12 से 14 सितंबर तक पटना के भारतीय नृत्य कला मंदिर में आयोजित जनवादी लेखक संघ के छठे राष्ट्रीय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए ज्ञानपीठ पुरस्कृत साहित्यकार सरदार गुरूदयाल सिंह ने साहित्यकारों से साहित्य के जरिए संघर्ष की चेतना जगाने का आह्वान किया। उनका मानना है कि विचारोत्तेजक साहित्य से ही अशिक्षा, गरीबी, बेरोजगारी और सांप्रदायिकता के खिलाफ जन संघर्ष संभव है। बिना संघर्ष का रास्ता अपनाए कुछ भी बात नहीं बनेगी क्योंकि आज राजनीतिज्ञ द्वारा काम देने की नीति बनाने के बजाय केवल चुनाव जीतने की नीति बनायी जा रही है। इसलिए ऐसे समय में चुप रहने वाले लोग भी उतना ही जिम्मेवार हैं। जितना कि राजनीतिक लोग लापरवाह हैं।

प्रगतिशील लेखक संघ की ओर से आलोचक खगेन्द्र ठाकुर ने भूमण्डलीकरण, निजीकरण तथा रूढ़िवादी के नए संस्करण पर कड़ा प्रहार करते हुए भारत के कोने-कोने से सम्मेलन में पधारे लेखकों, आलोचकों एवं संस्कृतिकर्मियों को ज्यादा-से-ज्यादा प्रगतिशील साहित्य को जनता के बीच ले जाने की सलाह दी। उन्होंने आज के समय को पहचानने और हस्तक्षेप करने की आवश्यकता पर बल दिया। प्रारंभ में सुप्रसिद्ध इतिहासकार एवं सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष प्रो. रामशरण शर्मा ने देश में खासकर मध्यम वर्ग के फिरका-परस्ती के पक्ष में बढ़ते कदम पर चिंता जाहिर करते हुए इसे खतरनाक संकेत करार दिया। उन्होंने बेरोजगारी को ही सारी समस्याओं के पनपने की जड़ बताया। इसके पूर्व जनवादी सांस्कृतिक मंच की पटना ईसाई 'प्रेरणा' के सदस्यों द्वारा कबीर के दो गीत प्रस्तुत किए जिसके बोल थे-'जरा धीरे गाड़ी हाँको, मोरे राम गाड़ीवाले'। सम्मेलन के मुख्य अतिथि तथा प्रख्यात रंगकर्मी हबीब तनवीर ने सांप्रदायिकता और फासीवाद पर जमकर हमला किया। जलेस के महासचिव डॉ. शिवकुमार मिश्र ने अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के पक्ष में खड़े तथा अमन चाहने वालों को गोलबंद होने का आह्वान किया।

सम्मेलन के दूसरे दिन के सत्र में 'सांस्कृतिक परिवेश और सांप्रदायिक फासीवाद की चुनौती' विषय पर वक्ताओं के विचारों में विभिन्नता देखने को मिली। उर्दू साहित्यकार सफीकुर रहमान किदवई ने हुकुमत पर मुजरिमों का कब्जा बताते हुए फिरकापरस्ती और नस्लपरस्ती को एक ही सिक्के के दो पहलू कहा। कवि मदन कश्यप द्वारा संचालित कवि सम्मेलन में गीतकार नचिकेता ने जब गुजरात दंगे को लक्ष्य कर अपनी रचना-**आप चाहेंगे तो मौसम बदलेगा, ना चाहेंगे तो मौसम ना बदलेगा**..........'सुनाई तो कुछ देर के लिए एकबारगी श्रोताओं की संवेदनाओं को झकझोर कर रख दिया। फिर राजस्थानी कवि हंसराय चौधरी ने वहाँ की लोकशैली में-**'उठ रे सूरज, खोल पपड़िया**..............।' अपनी कविता का सस्वर पाठ किया तो श्रोता झूम उठे। काव्य-गोष्ठी में कविवर अरुण कमल, आलोक धन्वा, असद जैदी, आफाक अहमद, राजेश जोशी, कुंवरपाल सिंह तथा अब्दुरस्साद सहित अन्य कई युवा रचनाकारों ने अपने काव्य-पाठ से लोगों को सराबोर किया।

सम्मेलन के अंतिम दिन हुए संगठन के चुनाव में जलेस के राष्ट्रीय अध्यक्ष के पद पर डॉ. शिवकुमार मिश्र चुने गए तथा मुरली मनोहर प्र. सिंह व चंचल चौहान को संघ का राष्ट्रीय महासचिव चुना गया। डॉ. जवरीमल्ल पारख को कोषाध्यक्ष सहित 151 सदस्यसीय केंद्रीय परिषद और 55 सदस्यीय राष्ट्रीय कार्यकारिणी का गठन भी किया गया।

अहिंसा से ही विश्व में शांति, प्रेम व भाईचारा

आचार्य महाप्रज्ञ एवं मुनिश्री 'लोकेश' के ग्रंथों का लोकार्पण

पिछले दिनों नई दिल्ली के फिक्की सभागार में आयोजित आचार्य श्री भिक्षु द्विशताब्दी समारोह के उद्घाटन के अवसर पर केंद्रीय वित्त मंत्री यशवंत सिंह ने कहा कि अहिंसा सिद्धांत को आत्मसात करने से ही विश्व में शांति, प्रेम व भाईचारे की स्थापना हो सकती है। उन्होंने आचार्य श्री भिक्षु को महान क्रांतिकारी संत बताते हुए कहा कि उनके हृदय परिवर्तन, विषमता उन्मूलन व आत्मानुशासन के सिद्धांत पर चलने से ही समग्र मानव जाति का कल्याण संभव है।

इस अवसर पर वित्त मंत्री श्री सिंह ने आचार्य श्री महाप्रज्ञ की **"अहिंसा यात्रा इक्कीसवीं सदी का कालजयी आलेख"** एवं मुनिश्री लोकप्रकाश 'लोकेश' के ग्रंथ **'मूल्य जीवन का'** का लोकार्पण करते हुए कहा कि एक राजनीतिज्ञ के रूप में अहिंसा का पूरी तरह पालन करना कठिन है। अहिंसा यात्रा के प्रवक्ता मुनिश्री 'लोकेश' ने आचार्य

श्री भिक्षु को धर्म क्रांति के सूत्रधार की संज्ञा देते हुए कहा कि उनके अहिंसा, समता एवं समानता के सिद्धांत को अपनाकर ही हिंसा एवं आतंकवाद को समाप्त किया जा सकता है। दिल्ली की मुख्यमंत्री शीला दीक्षित ने कहा कि जनजीवन में मुस्कान लाने के लिए अहिंसा को अपनाना होगा।

ईश्वरीय और शैतानी प्रवृतियों के अंतर्द्वंद्व को रेखांकित करती वी.पी. सिंह की कविताएं

–एपीजे. अब्दुल कलाम

पिछले दिनों भारत के चार पूर्व प्रधानमंत्रियों द्वारा नई दिल्ली में आयोजित पूर्व प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह के काव्य-पाठ के मौके पर राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम ने कहा कि श्री सिंह की कविताओं में मौजूद ईश्वरीय और शैतानी प्रवृतियों के अंतर्द्वंद्व को रेखांकित करती हैं। सुप्रसिद्ध आलोचक नामवर सिंह ने श्री सिंह की कविताओं को उनकी आत्मकथा का टुकड़ा बताया। रंगों और रेखाओं से छबियाँ बुननेवाला व्यक्ति बाद में शब्दों से खेलने लगा। कार्यक्रम की अध्यक्षता पूर्व प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर ने की।

हिंदी सत्ता कायम रखनेवाली भाषा

'वैश्वीकरण और हिंदी' पर संगोष्ठी

विचार संवाददाता, दिल्ली

केंद्रीय हिंदी निदेशालय और केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद् की ओर से नई दिल्ली में 'वैश्वीकरण और हिंदी' पर आयोजित संगोष्ठी की अध्यक्षता करते हुए सांसद एवं साहित्यकार बाल कवि वैरागी ने अपने उद्गार में विदेशों में रहनेवाले हिंदी प्रेमियों द्वारा हिंदी को कभी न खत्म होनेवाली और सत्ता कायम रखनेवाली भाषा बताया। केंद्रीय लघु उद्योग मंत्री डॉ. सी.पी. ठाकुर ने कहा कि विश्व के 132 देशों में हिंदी बोलनेवाले भारतीय मूल के लोग हैं और 40 करोड़ से अधिक लोगों की मातृभाषा हिंदी है। इतनी ज्यादा आबादी को बोलनेवाली भाषा को अधिक समृद्ध बनाने की जरूरत है। वैसे भी हिंदी किसी भी विदेशी भाषा से ज्यादा समृद्ध है।

इस अवसर पर डॉ. वेदप्रताप वैदिक ने हिंदी को विश्व की प्रथम भाषा सिद्ध करने का प्रयास किया। लघु उद्योग मंत्रालय के सचिव सुरेंद्र कुमार टटेजा ने वैश्वीकरण के इस दौर में हिंदी के पिछड़ने की बात को खारिज करते हुए कहा कि आज अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियां अपने व्यापार का प्रचार-प्रसार हिंदी माध्यम से कर रही हैं। तर्कुमानिस्तान में भारत के राजदूत डॉ. वीरेन्द्र शर्मा ने कहा कि भूमंडलीकरण हिंदी की शक्ति घटानेवाला नहीं है।

चेन्नै में विज्ञापनों पर आधारित हिंदी प्रतियोगिता

प्रस्तुतिः ईश्वरचन्द्र झा, चेन्नै

विगत 7 जुलाई को चेन्नै नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सौजन्य से दि न्यू इंडिया एश्योरेंस कं. लि. द्वारा चेन्नै के हिंदी विज्ञापनों के आधार पर एक हिंदी प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें 12 केंद्रीय कार्यालयों के कामिकों ने भाग लिया। विशेष रूप से हिंदीत्तर भाषा कार्मिकों के लिए आयोजित इस प्रतियोगिता में एस. लक्ष्मी को प्रथम, एस. रविंद्रन के द्वितीय तथा एस. शिवकुमार को तृतीय पुरस्कार से नवाजा गया। कार्यक्रम के अध्यक्ष तथा दि न्यू इंडिया एश्योरेंस के सह. महाप्रबंधक एम.ए. राममूर्ति ने अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि हिंदी का ज्ञान प्राप्त करने से हम किसी भी राज्य में जाकर काम कर सकते हैं। व्यवसाय के क्षेत्र में ग्राहकों के साथ बात करने से विजिनेस पा सकते हैं। इसलिए हिंदी का ज्ञान प्राप्त करना जरूरी है। इस अवसर पर उपस्थित उपमुख्य राजभाषा अधिकारी के. विट्ठल राव ने कहा कि हिंदी सीखना आसान है।

हिंदी अधिकारी ईश्वरचन्द्र झा ने कार्यक्रम का सफल संचालन किया तथा प्रारंभ ने श्रीमती राधा विजय राघवन ने मान्य अतिथियों एवं सुधीजनों का स्वागत किया।

सरकारी कर्मचारियों के हड़ताल पर रोक कार्य संस्कृति विकसित करने का एक प्रयास

विचार कार्यालय, दिल्ली

विगत 6 अगस्त को उच्चतम न्यायालय ने अपने एक ऐतिहासिक फैसले के जरिए एक लंबे अरसे से सरकारी कर्मचारियों के हड़ताल करने के अधिकार को समाप्त कर दिया है। न्यायाधीश एम.बी.शाह और न्यायाधीश ए. आर. लक्ष्मणन की एक खंडपीठ ने अपने निर्णय में कहा कि सरकारी कर्मचारियों को किसी भी परिस्थिति में हड़ताल पर जाने का मौलिक, कानूनी या नैतिक अधिकार नहीं है। अदालत का मानना है कि उनके हड़ताल करने से न केवल सरकारी तंत्र पंगु हो जाता है बल्कि आम नागरिकों को भी उसका खामियाजा भुगतना पड़ता है। उनकी हड़ताल से अव्यवस्था फैलती है। फैसले में यह भी कहा गया है कि कोई भी राजनीतिक पार्टी अथवा संगठन किसी राज्य अथवा राष्ट्र की आर्थिक और औद्योगिक गतिविधियों को ठप करने और नागरिकों के लिए परेशानी पैदा करने के अधिकार का दावा नहीं कर सकता। हड़ताल के अलावा माँगे मनवाने के और भी कई तरीके हैं। पीठ ने यह भी कहा है कि देश में बेरोजगारी की स्थिति भयावह है और यहाँ नौकरी चाहने वाले योग्य लोगों की एक लंबी कतार है। खंडपीठ ने यह भी स्पष्ट किया है कि सामूहिक माँग रखने का अधिकार प्राप्त श्रमिक संगठनों को भी हड़ताल पर जाने का अधिकार नहीं है।

उच्चतम न्यायालय के इस अभूतपूर्व फैसले से न केवल एक ही झटके में सरकारी कर्मचारियों के हड़ताल पर जाने का अधिकार छीन गया है बल्कि यह राजनीतिक दलों पर भी अवांछित आक्रमण करता है क्योंकि इस फैसले से राजनीतिक दलों के लोकतांत्रिक विरोध करने के अधिकार पर भी रोक लग जाएगी। यही कारण है कि ट्रेड यूनियन के नेताओं ने इस फैसले पर हैरतअंगेज जताते हुए इस फैसले को प्रतिगामी बताया है और इस लोकतंत्र के मूलभूत सिद्धांतों पर हमला कहा है। सेंटर फौर इंडियन ट्रेड यूनियन के नेता ने तो इस वैश्वीकरण, निजीकरण तथा उदारीकरण की प्रक्रिया के बढ़ते प्रभाव का कारण बताया। मजदूर संगठनों द्वारा इस फैसले का विरोध करना स्वाभाविक है क्योंकि उनका अस्तित्व ही हड़ताल को मौलिक लोकतांत्रिक अधिकार मानने में है और वे इसको हथियार के रूप में इस्तेमाल करते आए हैं। यही कारण है कि एटक और सीटू ने इस फैसले के खिलाफ राष्ट्रव्यापी आंदोलन करने का फैसला किया है। निश्चित रूप से इस फैसले के दूरगामी प्रभाव होंगे।

यह सच है कि मजदूरों की वर्तमान बेहतर स्थिति की वजह उनके द्वारा की गयी सफल हड़तालें ही हैं किंतु यह भी उतना ही सच है कि इन हड़तालों से न केवल आम जनता को समय-समय पर कठिनाईयों का सामना करना पड़ा है और औद्योगिक प्रतिष्ठानों के ठप्प पड़ने से उत्पादन पर भी गहरा असर पड़ा है अपितु लोकतंत्र के नाम पर हड़ताल करने के इस अधिकार का आए दिन दुरूपयोग हुआ है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जिस जनता के कर से सरकारी कर्मचारी को उनकी सेवा के लिए वेतन-भत्ते मिलते हैं वही उसी जनता को परेशानी में डालते हैं। यही कारण है कि सरकारी कर्मचारियों की हड़तालों को आमजन का समर्थन बिल्कुल नहीं मिलता है। आज जब आप कर्मचारियों एवं आमजन के बीच के रिश्तों पर एक नजर डालें तो आप को एक बहुत बड़ी खाई नजर आएगी। दोनों एक दूसरे के विरोधी नजर आएंगे जिसे कर्मचारी-अधिकारी अपने-अपने गांव जाने पर अवश्य महसूस करते होंगे। आखिर इस बात पर भी सर्वोच्च न्यायालय के फैसले के परिप्रेक्ष्य में गौर किया जाना चाहिए कि आम जनता से सरकारी कर्मचारियों की दूरी बढ़ती जा रही है जिसका खामियाजा आए दिन आज कर्मचारियों-अधिकारियों को भुगतना पड़ रहा है।

क्या यह सही नहीं कि पाँचवें वेतन आयोग की सिफारिशें लागू होने के पश्चात केंद्र एवं राज्य सरकार के कर्मचारियों/अधिकारियों के वेतन-भत्ते में अच्छी खासी वृद्धि हुई है और समय-समय पर साल में दो बार मंहगाई भत्ते की वृद्धि किए जाने से बढ़ती मंहगाई का कर्मचारियों पर बढ़ता भार बहुत कुछ कम होता है। अब तो सरकार की ओर से भी बार-बार यह कहा जाता है कि बजट राशि का अधिकतर भाग कर्मचारियों-अधिकारियों के वेतन-भत्ते में चले जाते हैं और बहुत कम राशि देश व राज्य के विकास के लिए बच पाती है। और दूसरी ओर कल की तुलना में आज यदि कार्य-संस्कृति पर एक नजर डालें तो आपको बहुत निराशा होगी। उच्चतम न्यायालय की भी चिंता यही है कि कार्य संस्कृति को विकृत करनेवाले कदमों पर रोक लगे। आज हर कोई के मुँह से यह सुनने को मिलेगा कि सरकारी कर्मचारी अपने काम में कोताही बरतते हैं, समय से अपने काम पर नहीं आते हैं तथा अनुशासन भंग करना तो उनके आम लक्षण बन गए हैं। उनकी चिंता तो बस यही रहती है कि कैसे उन्हें अधिक-से-अधिक सुरक्षा और सुविधाएँ हासिल होती रहें।

देश आज जिस दौर से गुजर रहा है, लाखों-करोड़ों प्रतिभावान, कुशल-अकुशल नौजवान देश की गलियों में बेरोजगार खाक छान रहे हैं और जिसकी वजह से आत्महत्या, लूट-डकैती, अपहरण एवं रंगदारी की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं उसके परिप्रेक्ष्य में जिन्हें नौकरी प्राप्त है उन्हें अपना कार्य ईमानदारी से करना समय का तकाजा है। पर बात ठीक उल्टी हो रही है। कार्यालयों में भ्रष्टाचार इस कदर फैल गया है कि बिना हाथ गरम किए आज किसी सरकारी कार्यालय में संचिकाएं सरकती नहीं और उस पर भी तौबा यह कि आए दिन हड़ताल या हड़ताल की धमकी। इस दृष्टि से यदि गौर किया जाए तो उच्चत्तम न्यायालय का यह फैसला अनुचित नहीं प्रतीत होता। सच कहा जाए तो सरकारी कर्मचारियों को जो सुरक्षा और सुविधाएं आज प्राप्त हैं,

उसने उन्हें काफी निश्चिंत बना दिया है किंतु देश की करोड़ों जनता आज दो रोटी के लिए मुंहताज है। उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, सिर ढँकने के लिए एक अदद झोपड़ी जैसी बुनियादी सुविधाएं भी आजादी के 56 वर्षों बाद नहीं मिल पा रही हैं। आज के बदलते परिवेश में कर्मचारियों को भी इस बात की ओर ध्यान देना होगा और अपनी कार्य-संस्कृति में बदलाव लाना होगा। क्या वे यह नहीं सोच सकते कि उनके ही पढ़े-लिखे बच्चे सड़क पर रोजगार की तलाश में भटक रहे हैं? अतएव उनकी कार्य-संस्कृति में बदलाव से ही देश में प्रगति होगी और रोजगार के अवसर का सृजन हो सकेगा। इन बिन्दुओं पर यदि ठीक से गौर किया जाए तो उच्चतम न्यायालय का यह फैसला निश्चित रूप से सरकारी कार्यालयों/क्षेत्रों में कार्य-संस्कृति विकसित करने में एक सकारात्मक भूमिका अदा कर सकेगा।

आखिर इस लोकतंत्र का क्या मतलब जब इस लोकतंत्र में लोक यानी जनता ही उपेक्षित हो जाए और तंत्र यानी सरकारी कर्मचारी उस पर हावी हो जाए। क्या यह सही नहीं कि पिछले 56 वर्षों में भारतीय समाज के प्रत्येक वर्ग ने केवल अपने अधिकारों की बात की है और अपने कर्तव्यों की कोई परवाह नहीं करता। पर क्या किसी ने यह कभी सोचा है कि कोई लोकतंत्र कर्तव्यों के प्रति उदासीन होकर नहीं चल सकता। यह बात ठीक है कि हड़ताल लोकतंत्र में अपनी बातें मनवाने या विरोध प्रदर्शन करने का एक सशक्त माध्यम है, परंतु जब पूरा सरकारी तंत्र जायज-नजायज माँगों की पूर्ति के लिए हड़ताल का सहारा लेता हो तो उच्चतम न्यायालय के पास आम जनता की समस्याओं के हल के लिए इस प्रकार के निर्णय के अलावा और कोई विकल्प नहीं बचता। दूसरी बात ध्यान देने की यह है कि जब सरकार ही संवेदनहीन हो जाए तो क्या धरना और क्या हड़ताल! समाज व राष्ट्र के प्रति प्रतिबद्धता ही खत्म हो जाए तो फिर सारा खेल खत्म होता दिख रहा है।

जर्मनी के एक सुप्रसिद्ध दार्शनिक हीगल ने कहा था-"सरकारी कर्मचारी एवं अधिकारी मध्यवर्ग का प्रमुख हिस्सा होते हैं, परंतु ये लोग अपनी बस ताकत का उपयोग अपने स्वार्थों को सिद्ध करने के लिए करते हैं और समाज को आतंकित करते हैं। इन पर नियंत्रण तभी संभव है जब ऊपर से सरकार और नीचे से जनता इन्हें अपनी बुद्धि का दुरूपयोग करने से रोके।" हीगल के अनुसार सरकारी कर्मचारी अपनी ताकत का उपयोग जनहित में नहीं, बल्कि जनता के शोषण एवं उत्पीड़न में अधिक करते हैं और उनकी सहज भूमिका जनविरोधी होती है।

हाल ही में तमिलनाडु के कर्मचारी जब हड़ताल पर गए तो जयललिता ने हड़ताल को तोड़ा। जयललिता द्वारा हड़ताल को तोड़े जाने से जनता प्रसन्न दिखाई पड़ी।

सरकारी कर्मचारी का पहला दायित्व है कि वह जनता की रक्षा करे। यदि वे अपनी रक्षा करने में लग गए तो जनता की रक्षा नहीं कर सकते। यदि सेना का सिपाही ही अपनी जान बचाने में लग गया तो देश की जान नहीं बचा सकता।

केंद्रीय कर्मचारियों के लिए नयी पेंशन योजना

विचार कार्यालय, दिल्ली

केंद्र सरकार द्वारा 2 अक्टूबर 2002 के बाद सरकारी सेवा में आनेवाले कर्मचारियों के लिए एक नयी पेंशन योजना अनिवार्य रूप से लागू की जा रही है। यह योजना फिलहाल सशस्त्र सेनाओं के कर्मियों पर लागू नहीं होंगी। इस नयी योजना के तहत केंद्रीय कर्मचारियों के मासिक वेतन में से उनके मूल वेतन और महंगाई भत्ते की दस प्रतिशत राशि काटी जाएगी और इतनी ही राशि सरकार अपनी ओर से जमा करेगी। पेंशन कोष में जमा की जानेवाली राशि का संचालन एक पाँच सदस्यीय आंतरिक पेंशन कोष नियामक एवं विकास प्रधिकरण करेगा जिसके अध्यक्ष होंगे भारत सरकार के सचिव स्तर के एक अधिकारी और वित्त मंत्रालय के अधीन काम करनेवाले इस प्राधिकरण में दो पूर्णकालिक सदस्य के अलावा दो अन्य आर्थिक वित्तीय एवं कानूनी मामलों के विशेषज्ञ होंगे।

कहा गया है कि इस पेंशन योजना के तहत सेवानिवृत होनेवाले ग्रुप 'ए' कर्मचारियों को अपने अंतिम मूल वेतन और मंहगाई भत्ते का 56 प्रतिशत और ग्रुप 'बी' को 58 प्रतिशत, ग्रुप 'सी' को 59 प्रतिशत और ग्रुप 'डी' को लगभग 68 प्रतिशत तक पेंशन के रूप में राशि मिल सकेगी, किंतु उपलब्ध तीन विकल्पों में कर्मचारियों को पहले विकल्प में अपने अंशदान का 30 प्रतिशत, दूसरे में 40 प्रतिशत तथा तीसरे में 25 प्रतिशत हिस्सा निगमित बांडों में निवेश करना होगा।

इस नयी पेंशन योजना के लागू होने के साथ वर्तमान भविष्य निधि योजना (जीपीएफ) का प्रावधान समाप्त हो जाएगा। नयी पेंशन योजना के तहत कर्मचारी को सेवानिवृत होने पर मिलने वाले पेंशन लाभ का 40 प्रतिशत हिस्सा जीवन बीमा में लगाना होगा। केंद्रीय मंत्रिमंडल के फैसले में कहा गया है कि इस पेंशन योजना में राज्य सरकारों के कर्मचारी भी शामिल हो सकते हैं।

केंद्र सरकार द्वारा लागू इस नयी पेंशन योजना से सरकारी कर्मचारी को कितना लाभ होगा या नहीं इसका विश्लेषण तो किया जा रहा है किंतु इतना अवश्य है कि केंद्र सरकार वर्तमान पेंशन प्रणाली से एक लंबे अरसे से निजात पाना इसलिए चाह रही थी क्योंकि भारत में मात्र 11 प्रतिशत कामकाजी लोगों को सेवा निवृति पर मिलनेवाले लाभ के बावजूद केंद्र सरकार पर पेंशन अदायगी की मद में आनेवाला बोझ लगातार बढ़ता जा रहा है। पिछली शताब्दी के अंतिम दशक में पेंशन पर आनेवाला खर्च 21 प्रतिशत बढ़ गया। 1998-99 यह खर्च जहाँ 15346 करोड़ रुपए था, 2002-03 में यह बढ़कर 21172 करोड़ रुपए हो गया। इसमें दूरसंचार क्षेत्र के कर्मचारी शामिल नहीं हैं। चालू वित्त वर्ष में सरकार पेंशन के रूप में कुल 23158 करोड़ रुपए खर्च करेगी जो सरल घरेलू उत्पाद का 1.66 प्रतिशत है। इस प्रकार देखा जाए तो नयी पेंशन योजना सरकार के बढ़ते वित्तीय बोझ को हल्का करने की एक कवायद है किंतु विभिन्न श्रमिक संगठनों और राजनीतिक दलों ने इस नयी योजना को सामाजिक सुरक्षा पर कड़ा प्रहार करार दिया है।

बबुआ का दहेज

✍ डॉ. रमाशंकर श्रीवास्तव

रेल-यात्राओं में हिंदुस्तान चलता है। मैं बिहार से आनेवाली आजकल की प्रसिद्ध ट्रेन वैशाली एक्सप्रेस से दिल्ली आ रहा था। सामने की बर्थ पर एक नवविवाहित जोड़ा बैठा था। युवक के हाथ में सोने की अंगूठी चमक रही थी और दुल्हन ने भी अभी सारे गहने नहीं उतारे थे। सीवान और गोरखपुर में जब भीड़ का रेला चढ़ा था तो वह युवक बार-बार चिल्ला पड़ा था- ऐ साहब, मेरे सामान पर पैर मत रखिए। टूटने वाला सामान है। थोड़ी देर में उस युवक से मेरा परिचय हो गया तो पता चला कि वह नई-नई शादी करके दिल्ली आपनी नौकरी पर लौट रहा है। साथ में दहेज में मिला कुछ सामान है। सामान तो बहुत मिला, मगर इतनी दूर ढोकर कौन लाए। बर्थ के नीचे पलंग सेट के टुकड़े तार से बांध कर रखे हैं। तीन बड़े डिब्बों में पंखा, डिनर सेट और कुछ फैंसी उपहार हैं।

मेरा खयाल है कि दिल्ली में नौकरी करनेवाले लड़कों को अपने प्रदेश में दहेज अच्छा मिलता है। दिल्ली महानगर में पढ़ाई, नौकरी, व्यापार या चिकित्सा के लिए ही लोग नहीं आते, अब यहां तरह-तरह के अपराध भी आयातित होने लगे हैं। इसमें बिहार, उत्तर प्रदेश और दूसरे राज्य भी शामिल हैं। आज से बीस-पच्चीस साल पहले दिल्ली में न इतनी नौकरियां थीं, न अपराध थे और न इतने नेता थे। जेबकटी, बलात्कार, धोखा, अपहरण आदि दिल्ली के जनजीवन में आ पैठे हैं।

दिल्ली के जीवन पर पूर्वांचल संस्कृति का प्रभाव भी स्पष्ट दिखाई पड़ता है। जो भी यहां आता है अपना कोई न कोई जुगाड़ बैठा ही लेता है। उसकी चालढाल, भाषा, पहनावा बदलते देर नहीं लगती। पूरब से जुबान पर आई ठीकठाक हिंदी यहां इस कदर बदलती है कि विस्मय और विषाद दोनों होता है। मेरे को, तेरे को, मैंने नहीं जाना, हाय अंकल, कभी घर आओ न, भ्राजी तुसी अपनी गल करो- आदि वाक्यांश सुनाई पड़ना आम बात है।

इसी क्रम में मुझे एक सज्जन से एक रोचक प्रसंग सुनने को मिला। उर्वर बुद्धि वालों के लिए दिल्ली संकटमोचन का काम करती है। कुछ लोगों की धुर्त चाल के सामने ब्रह्मा भी अपने को मंदबुद्धि समझने लगते हैं। बहुत दिनों से एक एम-ए पास लड़का दिल्ली में लोक सेवा आयोग की परीक्षाओं की तैयारी में बैठा था। परीक्षाएं देता था और असफल हो जाता था। सुंदर सपने टूटने लगे थे और उम्र बढ़ने लगी थी। गांव में खबर थी कि लड़का दिल्ली में परीक्षा में बैठा है। वह बड़ा अफसर बननेवाला है। गांव में बैठे पिता चतुर होकर भी चिंतित थे। बेटे की शादी के लिए अनेक बरतुहार आ रहे थे, पर वे हामी नहीं भरते थे। मन ही मन ज्यादा तिलक-दहेज की ताक में थे।

इसी बीच लड़का बड़े ठाठ-बाट में दिल्ली से गांव आया और बात फैल गई कि उसका चुनाव एक बड़ी नौकरी के लिए हो गया है। बाप-बेटे में गुपचुप पूआ पका। बेटे ने दिल्ली लौटकर आठ हजार रुपए का मनिऑर्डर भेजा और चिट्ठी में निर्देश दिया कि नौकरी की पहली तनख्वाह से वह यह राशि घर में सत्यनारायण भगवान की कथा के निमित्त भेज रहा है। पिता कथा कहलवा कर प्रसाद पूरे गांव में वितरित कर दें। थोड़े-थोड़े दिनों पर तीन-चार मनिऑर्डर और आ गए।

बाहर से आए मनिऑर्डर ने शादी का रेट बढ़ा दिया। पिता ने लगभग चार लाख रुपए की राशि पर शादी तय कर दी। अफसर दामाद पाने की उमंग में बेटी वाले ने धूमधाम से शादी कर दी। शादी बाद जब कन्या अपने पति के साथ दिल्ली पहुंची तो एक छोटे-से मुहल्ले की साधारण कोठरी में प्रवेश कर उसका दिल बैठ गया। वह गांव से दिल्ली एक अफसर की पत्नी बनने का सपना लेकर आई थी। पति ने उसके विस्मय का समाधान यह समझा कर दिया कि सरकारी फ्लैट में रंगारोगन हो रहा है। काम पूरा होते ही हम उसमें रहने लगेंगे। समय के साथ छल की कमर टूट गई और लड़कीवाले की सच्चाई समझ में आ गई कि उनके साथ भारी धोखा हुआ है। मगर शादी के बाद अब पति बदलना असंभव था। दिल्ली से मनिऑर्डर द्वारा कई बार भेजे गए रुपए लड़के के पिता ने ही दिए थे। बीस-तीस हजार देकर चार लाख बटोर लिए थे।

ऐसी धोखाधड़ी में कोर्ट केस भी हो रहे हैं, पर भारतीय मानसिकता में अभी इतना साहस और निष्ठुरता नहीं पैठ पाई है। लड़की अपनी किस्मत की दुहाई देकर पूरे जीवन कष्ट झेलने को तैयार हो जाती है।

संपर्क: आर-7, वाणी विहार,
उत्तमनगर, नई दिल्ली

नेत्र दान – महादान
खुद दान करें और दूसरों को अपने नेत्रदान करने को प्रेरित करें।
राष्ट्रहित में जारी

लिंगदोह को मैग्सेसे पुरस्कार

मुख्य चुनाव आयुक्त **जेम्स माइकल** लिंगदोह सहित सात व्यक्तियों को वर्ष 2003 का प्रतिष्ठित रमन मैग्सेसे पुरस्कार के लिए सम्मानित किया गया। एशिया में नोबल पुरस्कार के बराबर माना जानेवाला यह पुरस्कार गुजरात तथा जम्मू-कश्मीर में पिछले साल स्वतंत्र और निश्पक्ष चुनाव कराने के लिए श्री लिंगदोह को दिया गया। फ्रेंच और जर्मनी भाषाओं में समान अधिकार प्राप्त श्री लिंगदोह ने कहा कि आयोग ने दिखा दिया है कि वर्तमान नौकरशाही से भी ईमानदारी व सक्षमतापूर्वक काम लिया जा सकता है बशर्ते कि उन्हें सही नेतृत्व मिले। वही नौकरशाही जो राजनीतिकों के अधीन इतनी ज्यादा भ्रष्ट हो जाती है चुनाव आयोग

में बहुत ही ईमानदारीपूर्वक काम करती है नौकरशाह राजनीतिकों के जितना अधिक संपर्क में आते हैं उतना ही ज्यादा भ्रष्ट वे बन जाते हैं।

64 वर्षीय लिंगदोह को यह सम्मान भारत में धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र की सर्वोत्कृष्ट आशा और आधारशिला की चुनाव प्रक्रिया को मुक्त और निष्पक्ष ढंग से आयोजित करने के लिए दिया गया है।

अभी तक जिन भारतीयों को मैग्सेसे पुरस्कार से सम्मानित किया गया है वे हैं-अरुण शौरी, किरण बेदी, जयप्रकाश नारायण, मदर टेरेसा। यह पुरस्कार फिलीपीन के दिवंगत राष्ट्रपति रेमन मैग्सेसे की याद में दिए जाते हैं।

आडवाणी बचे पर जोशी फँसे

उठा तूफान अदालती फैसले से

अयोध्या के बाबरी मस्जिद ढहाए जाने के मुकदमे में रायवरली की विशेष अदालत ने जहाँ उप प्रधान मंत्री लाल कृष्ण आडवाणी को बरीकर दिया नहीं मुरली मनोहर जोशी, विनय कटियार, उमा भारती, अशोक सिंघ ल, विष्णुहरि मिला गिरिराज किशोर तथा साहवी क्षातंभरा पर

आरेप लग गए। विहित हो कि अदालत ने जोशी के अतिरिक्त अन्य छह पर आऐय यह तय किया कि उनके द्वारा 6 दिसंवर 1992 को अयोध्या में भीड़ को उकसाने के लिए भड़काऊ भाषण दिए गयें।

मुरली मनोहर जोशी ने केंद्रय मानव संसाधान विकास मंत्री के पद से त्याग पत्र दे दिया एक जो जॉहा भाजपा आने वाले चुनावों में इस मुद्दे को जनता के बीच उछालकर उसका राजनीतिक लाभ लेना चाहती है वहीं उससी ओर विपअी आडवाणी को बरी किए जोन को लेकर हैरान है। आदालत के इस फैसले से देश की राजनीति बहुत बदलेगी इसकी कोई संभावना नहीं, हाँ, विधानस सभा चुनावों में यह भी एक बड़ा मुद्दो बने सकता है।

कृष्णानंद का अमृताभिनंदन

वरिष्ठ पत्रकार एवं उपन्यासकार कृष्णानंद के पचहत्तर वर्ष पूरे होने पर विगत 3 सितंबर को पटना में उन्हें सम्मानित किया गया और इस अवसर पर प्रकाशित अमृताभिनंदन ग्रंथ का लोकार्पण एवं समर्पण जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल ले.जे. एस. के. सिन्हा द्वारा संपन्न हुआ। कृष्णानंद के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर महामहिम ले. जे. सिन्हा के अतिरिक्त पद्मश्री डॉ. शैलेन्द्रनाथ श्रीवास्तव, डॉ. जितेन्द्र सहाय तथा 'विदेह' ने अपने उद्‌गार व्यक्त किये। प्रारंभ में नृपेन्द्रनाथ गुप्त ने अतिथियों का स्वागत किया तथा कमला प्रसाद ने उनके प्रति आभार व्यक्त किया। डॉ. शाहिद जमील ने कार्यक्रम का संचालन किया।

डॉ. शाहिद जमील, पटना से

साहित्य की दुनिया में अँधेरा

अजातशत्रु भीष्म साहनी:जिसने मानवीय संवेदनाओं को मर्म के साथ उकेरा

'तमस' और 'अमृतसर आ गया है' जैसी कालजयी रचनाओं के लिए चर्चित कथा लेखक भीष्म साहनी पक्षाघात की चपेट में आने से पिछले 11 जुलाई को देहावसान हो गया। फिल्म अभिनेता स्व. बलराज साहनी के छोटे भाई भीष्म को बचपन से ही राजनीति में दिलचस्पी थी। यही कारण था कि गुलामी के दिनों में जिस समय देश का बच्चा-बच्चा आजादी के लिए छटपटा रहा था भीष्म भी स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े और उसमें सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण उन्हें जेल की सजा भी भुगतनी पड़ी। जेल में उनकी विचारधारा में परिवर्तन हुआ और वे वामपंथी आंदोलन से जुड़ गए। वे सभी किस्म की लड़ाईयों में शामिल होते थे लेकिन उनकी मुद्रासत की सी थी।

8 अगस्त, 1915 को रावलपिंडी में जन्में साहनी ने मानवीय संवेदनाओं और संबंधों को पूरी गहराई और मर्म के साथ कागज पर उकेरा। उन्हें अभिनय, राजनीति, संपादन और अध्यापन में महारत हासिल थी। अपने बड़े भाई बलराज साहनी से विरासत में पाई संवेदनाओं के चलते भीष्म ने 'बलराज भाई ब्रदर' अंग्रेजी में उनकी एक जीवनी लिखी। इसके अतिरिक्त उन्होंने मैयादास की माड़ी, बसंती और नीलू नीलिमा नीलोफर जैसे सात उपन्यास तथा बांगचू, भाग्यरेखा और पटरियाँ जैसे कहानी संग्रह और छह नाटक में हानुश, माधवी, आलमगीर और कबीरा खड़ा बाजार में की रचना की।

बेहद आत्म अनुशासनप्रिय तथा साहित्य जगत में सदैव अपने शर्तों पर टिके रहनेवाले भीष्म साहनी को हार्दिक श्रद्धांजलि।

'तमस' से लेकर उनकी अंतिम आत्मकथा 'आज के अतीत' में भीष्म ने अपने अनुभवों से जो धर्मनिरपेक्ष चेतना विकसित की वह उनकी चेतनाओं का आधार था। उनके निधन से हमारे हिंदी साहित्य में प्रेमचंद और रेणु की परंपरा का एक बड़ा स्तंभ उखड़ गया। हिंदी साहित्य में जिस यथार्थवादी साहित्य की शुरूआत प्रेमचंद और रेणु ने की थी उसे भीष्म साहनी ने आगे बढ़ाया। उन्होंने लाहौर के पंजाब विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. किया और वहाँ व्याख्याता भी बने लेकिन आजादी के बाद भारत आ गए तथा अंतिम समय तक साहित्य की सेवा करते रहे। भारत पाक विभाजन पर 'तमस' जैसी कालजयी कृति लिखनेवाले भीष्म हिंदी के उन चंद लेखकों में से थे जिन्होंने विभाजन की त्रासदी खुद झेली थी और जिसने विभाजन के दर्द को अपनी महत्वपूर्ण कृति 'तमस' में तल्खी से दर्ज किया। सात उपन्यास और एक सौ से अधिक कहानियाँ लिखनेवाले साहनी हिंदी के महत्वपूर्ण नाटककार भी थे। उस दौरान उन्होंने टाल्सटाय एवं अन्य सभी लेखकों की कृतियों के अनुवाद भी किए। उन्होंने अपनी कृतियों के जरिए जटिल सामाजिक मुद्दों को उठाया और उन्हें विचारोत्तेजक रूप से प्रस्तुत किया। उनका रचना संसार बहुत बड़ा और व्यापक था।

सहज और सादगी पसंद इंसान भीष्म साहनी का 'तमस' उपन्यास सांप्रदायिक विचारों और शक्तियों के अमानवीय और क्रूर पहलू को खोलकर हमें वह दिशा देता है जहाँ से हिंदू और मुसलमान अपनी साझी विरासत, साझी जीवन शैली अपना सकें, जो 800 वर्षों से चली आ रही है। उनकी रचनाओं की गहराई में उनकी आस्थाएं, मूल्य और सरोकार प्रतिबिंबित होते हैं। उन्होंने एक लंबी यात्रा में विविध विधाओं में एक बड़ा रचना संसार सृजित किया। उनके निधन से हिंदी साहित्य का एक 'भीष्म' नहीं रहा। वे इस अर्थ में अजातशत्रु थे कि विशिष्ट विचारधारा के साथ जुड़े होने के बावजूद सौजन्यता व मानवीय मूल्य को कभी आँखों से ओझल नहीं होने दिया, सांप्रदायिक पंक्तियां के विरूद्ध सतत संघर्ष करनेवाले साहित्यकार भीष्म साहनी के निधन से प्रेमचंद की परंपरा के सबसे बड़े कथा युग का अंत हो गया है।

अब नहीं रहा पर्दे से हम सबको हँसानेवाला

विचार कार्यालय, मुंबई

पर्दे से तीन दशकों तक हम सबको हँसानेवाले मशहूर हास्य अभिनेता बदरूद्दीन जमालुद्दीन काजी उर्फ जॉनी वॉकर पिछले 29 जुलाई को अपने चाहनेवालों को रुलाकर चले गए। गुरुदत्त की यादगार फिल्म 'प्यासा' में मालिश, तेल मालिश चम्पी गाते हुए कामयाबी के शिखर छूने वाले सपाट चेहरे के बावजूद जॉनी ने

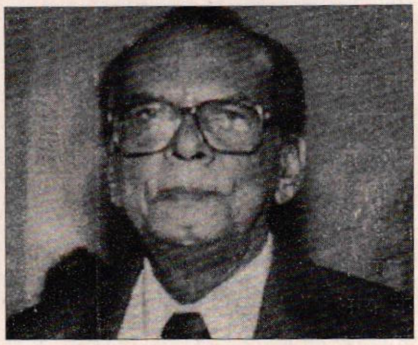

अपनी भाव भंगिमाओं के जरिए कामेडी के नए मापदंड स्थापित किए और तीन सौ से अधिक फिल्मों में काम किए। उनकी कामेडी की यादगार फिल्मों में मेरे महबूब, प्यासा, हलचल, सीआईडी, चौदहवीं का चाँद, चाची 420 और आनन्द शामिल हैं। गरीब जान के हमकों न तुम भुला देना............ए दिल है मुश्किल जीना यहाँ..........आदि कई गाने ऐसे हैं जो आज भी लोकप्रिय हैं। 5 मई 1923 को कश्मीर में इंदौर में एक दूधवाले के घर जन्में और इंदौर तथा हैदराबाद में बचपन बिताए जॉनी वाकर ने नासिक में कभी कुल्फी की रेहड़ी लगाई, मुंबई में सब्जी बेची और बेस्ट की बसों में कंडक्टरी भी की। पर्दे पर लोगों को अपनी हँसी से लोटपोट करनेवाले जॉनी वॉकर निजी जिंदगी में उतने ही संजीदा और अंतर्मुखी किस्म के इंसान थे। अदाकारी को इबादत माननेवाले जॉनी वॉकर भले ही आज हमारे बीच नहीं रहे किंतु उनकी दर्शकों को हँसाने की अदा भारतीय सिनेप्रेमी कभी भुला नहीं पाएंगे।

साभार-स्वीकार

पुस्तकें :

1. अक्षर अक्षर गूँज - निबंध संग्रह
लेखक:कमला प्रसाद, प्रकाशक: समीक्षा प्रकाशन, दि॰

2. चउकठ- भोजपुरी काव्य संग्रह, कवि: जनार्दन
प्रकाशक: विश्‍व भोज॰ सम्मे॰, पटना-1

3. राष्ट्र गौरव गोस्वामी तुलसीदास- कहानी
कथाकार: डॉ. नगेन्द्रनाथ पाण्डेय
प्रकाशक: नईघारा मार्ग, शेषपुरा, पटना-14

4. (क) तीन तेरह लोग (ख)उत्तर दा अक्ष-
लेखक: परेश सिंहा, प्रकाशक: समय प्रकाशन, पटना 4

6. संस्कृति संसद,राष्ट्रीयता, लेखक: प्रो॰ साधुशरण
प्रकाशक: मारूति प्रकाशन 2/15 आदित्य नगर, पटना

7. कु. क्ष॰ जाति का संक्षिप्त परिचय

8. बाबू गुप्त नाथ सिंह स्मृतिग्रंथ -
लेखक: बाबू गुप्तनाथ सिंह,प्रका॰:स्मृति ग्रंथ समिति

9. वीरचंद पटेल स्मृतिग्रंथ -
प्र॰ संपादक: प्रो॰ श्यामनंदन शास्त्री
प्रकाशक: वीरचंद पटेल समाज सेवा संस्थान, पटना-10

9. ताज और रोटी - काव्य संग्रह
कवि: डॉ॰ सहदेव सिंह 'पाचर', संपा:डॉ॰गनौरी महतो
प्रकाशक: भभूआ, कैमूर

10. शिलान्यास
लेखिका: प्रतिभा राय, संपा॰:सत्यनारायण मिश्र
प्रकाशक: जीवन प्रभात प्रकाशन,मुबई -56

12. कृष्णानंद अमृताभिनंदन
प्रकाशक: प्रतिभा प्रकाशन पटना-1

13. वज्रसूची उपनिषद्
लेखक: आचार्यअश्‍वधोष, प्रका॰: बुद्व विहार, लखनऊ

14. सच्ची रामायण
लेखक: रामास्वामी नायकर प्रका॰:बुद्व प्रका॰ पटना-1

15. सुखलऽ बड़ुआ-अगिंका कहानी संग्रह
कथाकार: राजीव परिमलेंदु, प्रका॰:शेखर प्रका॰, पटना-1

16. भक्ति पुष्पांजलि-अंगिका भजन संग्रह
कवि: डॉ नरेश पांडेय चकोर,प्रका॰शेखर प्रका॰ पटना-1

17. रंग मैले नहीं होंगे-जनगीत संग्रह
कवि: नचिकेता, अभिधा प्रकाशन, दिल्ली

18. सोये पलाश दहकेंगे-गीत संग्रह
रचनाकार: नचिकेता, आर्यभाषा संस्थान, वाराणसी

19. भीतर-भीतर आग-गीत संग्रह
कवयित्री: डॉ॰ शांति सुमन,समीक्षा प्रकाशन, दिल्ली

20. मूल्य जीवन का-गीत संग्रह
लेखक: मुनि लोकप्रकाश 'लोकेश'
प्रकाशक :आदर्श साहित्य संघ, नई दिल्ली-2

पत्रिकाएँ

1. हम सब साथ साथ - जुलाई, 2003
संपादक: श्रीमती शशि श्रीवास्तव,
प्रकाशन: कराला, दिल्ली-110081

2. अणुव्रत - 16-30 सितंबर, 2003
संपादक : डॉ॰ महेन्द्र कर्णावट,
प्रकाशक : अणुव्रत महासमिति, दिल्ली-2

3. प्रारम्भ शैक्षिक संवाद
संपादक: कमलेशचन्द्र जोशी
प्रकाशक: चाँदगंज गार्डन, लखनऊ

4. **राष्ट्रभाषा**- अगस्त, 2003
संपादक: प्रा॰ अनंतराम त्रिपाठी
प्रकाशक: राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा-442003

5. शब्द - अगस्त 2003
संपादक: आरसी यादव, प्रकाशक: शब्दपीठ, लखनऊ

6. सभ्यता संस्कृति - अगस्त,सितंबर 2003
संपादक : श्रीमती ऋचा सिंह
प्रकाशक : श्रीमती ऋचा सिंह, नई दिल्ली-29

7. सदीनामा -1-30 जून, 2003
संपादक : जितेन्द्र जितांशु, प्रकाशन : बजबज,24 पर॰

8. भारतीय रेल - जून, जूलाई 2003
संपादक : प्रमोद कुमार यादव
प्रकाशन: रेल भवन, रायसीना रोड, नई दिल्ली-1

9. लोक शिक्षक - जून, जूलाई, 2003
संपादक: डॉ॰ सत्येन्द्र चतुर्वेदी
प्रकाशक: के-14,अशोक मार्ग, सी-स्कीम, जयपुर-1

10. शोषित मुक्ति - जूलाई, अगस्म 2003
संपादक : श्री उन्तीसवाँ व्यास
प्रकाशक: कुर्मी विकास परिषद, पटना-20

11. अम्बेडकर मिशन पत्रिका-जुलाई,अगस्त 03
संपादक: बुद्धशरण हंस, अनीशाबाद, पटना-2

12. जन संसार अंक-6, 2003
संपादक: गीतेश शर्मा
प्रकाशक: फोरम फोर नेशन एफेयर्स,
19-बी, चौरंगी रोड, कोलकाता-87

13. अलका मागधी - अप्रैल, मई, 2003
संपादक : अभिमन्यु प्र॰ मौर्य
प्रकाशक : नंदा आर्य, रामलखन महतो रोड, पुराना जक्कनपुर, पटना-1

14. कालान्तर - जुन, 2003
संपादक: डॉ॰ पुष्पेश पंत
प्रकाशक: बंगाली मार्केट, दिल्ली

15. संकल्प रथ - अगस्त, सितंबर-अक्टूबर 2003
संपादक : राम अधीर
प्रकाशन : 108/1, शिवाजी नगर, भोपाल-16

16 रैन बसेरा - जून 2003
प्रधान संपादक : डॉ. जय सिंह 'व्यथित'
प्रकाशक : गुजरात हिंदी विद्यापीठ, अहमदाबाद-382415

17. मित्र संगम पत्रिका - जूलाई, 2003
संपादक : प्रेम वोहरा, मित्र संगम संस्था, दिल्ली-9

18. शक्तिरूपा - मासिक(प्रवेशांक), 2003
संपादक : संगीता रमण
प्रकाशक : मंगल भवन, चित्रगुप्त मार्ग, पटना-1

19. झिलमिल जुगनू - मार्च, अप्रैल, 2003
संपादक : सुमन्त
प्रकाशक : ईस्ट एण्ड वेस्ट एजुकेशनल सोसाइटी, आरोग्य मंदिर परिसर, आर.के. एवेन्यू, पटना-4

20. भाषा-भारती संवाद अंक-2
संपादक: नृपेन्द्रनाथ गुप्त
प्रकाशक: अ॰भा॰भा॰साहित्य सम्मेलन,बिहार, पटना

21. जागो बहन जूलाई- 2003
प्र॰संपादक: डॉ. शांति ओझा, श्री कृष्णपुरी पटना-1
प्रकाशक: तामिलनाडु बहुभाषी लेखिका संघ, पांचाली अम्मन, ओविल स्ट्रीट, असम्बाक्कम, चेन्नई-600106

22. कूर्मि क्षत्रिय जागरण - मार्च, अप्रैल,03
संपादक: पटेल जे. पी. कनौजिया
प्रकाशक : अ॰भा॰कू॰क्ष॰ महासभा, पटेल धर्मशाला, 2014, विराट नगर, यशोदानगर, वाईपास चौराहा, किदवईनगर, कानपुर, 208011

23. साहित्य सेतु सागर-अक्टू.02, अप्रैल 03
संपादक: प्रभाकर शेजवाडकर
प्रकाशक: कला वैभव, एम-116, 20वी. लेन, हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, आल्येबेतीन, परवरी, गोवा

24. तैलिक बन्धु-जून, जूलाई 03
संपादक: श्री कृष्ण शाह, साहु समारज भवन पटना 4
प्रकाशक: कला वैभव, एम-116, 20वी. लेन, हाउसिंग बोर्ड कॉलोनी, आल्येबेतीन, परवरी, गोवा

25. तैलिक बन्धु-जून, जूलाई 03
संपादक: श्री कृष्ण शाह, साहु समाज भवन, पटना 4

26. साहित्य परिक्रमा-जूलाई-सितमबर 03

27. नई धारा-जून जुलाई 03
संपादक: उदय राज सिंह, प्रकाशन: शेखपुरा, पटना -14

28. बाल साहित्य समीक्षा-सितम्बर 03
संपादक: डॉ॰ राष्ट्र बंधु, राम कृष्णनगर, कानपुर

29. दूसरा मत-अगस्त, सितम्बर 03
संपादक: ए॰ आर॰ आजाद, सदर बाजार, दिल्ली-6

30. साहित्य-सितम्बर 03
संपादक: डॉ॰ सतीश राज पुष्करणा, प्रो॰ कैलाश स्वच्छंद
प्रकाशक: बिहार हिन्दी साहित्य सम्मेलन, पटना-3

31. प्रगतिशील आकल्प-सितम्बर, अक्टूबर 03
संपादक: डॉ॰ शोभ नाथ यादव, मुंबई

सरदार पटेल की 128वीं जयंती पर हमारी शुभकामनाओं के साथः-

मंजिल फैशन हाउस

फैन्सी सलवार सूट, मैक्सी, फ्रॉक्स

एवं आधूनिक डिजायन के सूट्स

और बने-बनाए वस्त्र उपलब्ध

ए-192, पिपुल्स कोओपरेटीव कॉलोनी, (कॉम्यूनिटी हॉल के उत्तर)
कंकड़बाग, पटना-800020
दूरभाषः 0312-2367647 (नि.)

सरदार पटेल जयंती की शुभकामनाओं के साथः-

बाबू गुप्तनाथ सिंह स्मारिका समिति

भभुआ-कैमूर, बिहार

इस समिति द्वारा निम्न पुस्तकों का प्रकाशन किया गया हैः-

1. बाबु गुप्तनाथ सिंह - स्मृति ग्रंथ - संपादक - डॉ. गनौरी महतो : 125/-
2. छत्रपति शिवाजी - लेखक - गुप्तनाथ सिंह : 125/-
3. कुर्मी जाति का संक्षिप्त परिचय - लेखक - गुप्तनाथ सिंह : 125/-

पुस्तक प्राप्ति का स्थान -
द्वारा - गाँधी कुष्ठ निवारण प्रतिष्ठान
गाँधी ग्राम, भभुआ, कैमूर
बिहार - 821101

इसके अलावे वीरचंद पटेल स्मृति ग्रंथ
के संपादक प्रोफ़ श्यामनंदन शास्त्री को 125 रु.
भुगतान कर उपर्युक्त पुस्तकें प्राप्त की जा सकती हैं ।
सभी पुस्तक 250 से 300 पृष्ठों की है।

निवेदक
समिति के सदस्य

सरदार पटेल जयंती की शुभकामनाओं के साथः-

मे. सूपर सिमेंट ट्रेडिंग

भवन निर्माण सामग्री के विक्रेता

के.सी., ए.सी.सी, लफार्ज

मीठापुर, खगौल रोड.
पटना - 800001

With best compliments from:

Puja Food Products Ltd.

Manufacturer
&
Distributor

Maida, Atta,
Suji & Bran

Digha Ghat, Patna - 800 011

(: (Mill) 2263290, 2263200, 2260350, 2268757

Fax: 0612-2260350

Residence: 2262783, 2260925, 2262930, 2268079

People's Co-Operative House Construction Society Ltd.

Kankar Bagh, Patna-800020

समिति में निम्न आय वर्ग के कुल 1730 सदस्य हैं जिनमें 1600 सदस्यों को लोहियानगर, कंकड़बाग में स्थित विभिन्न सेक्टरों में भूखंड आवंटित हैं तथा शेष को जगनपुरा में भूखंड आवंटित हैं।

समिति के द्वारा प्रत्येक सदस्य से अभियान चलाकर नौमिनी फार्म भरवाया जा रहा था, परन्तु बहुत से सदस्यों के द्वारा अभी भी नौमिनी फार्म नहीं भरा जा सका है। अतः वैसे सदस्यों से अनुरोध है कि अपना नौमिनी फार्म समिति कार्यालय से प्राप्त कर शीघ्र भरकर जमा कर दें।

समिति अपने सदस्यों के पुत्र-पुत्री, पौत्र-पौत्री, भाई-बहन एवं स्वयं के विवाहोत्सव तथा संबंधित प्रयोजनों के लिये आधे दर पर सामुदायिक भवन प्राथमिकता के आधार पर उपलब्ध करती है।

समिति के सदस्यों की सुविधा के लिये स्ट्रीट लाइट, सड़क मरम्मत, मैनहोल सफाई, पार्क निर्माण एवं अन्य विकास कार्यों को भी निर्धारित नियमानुसार सम्पन्न किया जाता है।

एल.पी.के. राजगृहार	मिथिला शरण सिन्हा	प्रो. एम.पी. सिन्हा
अध्यक्ष	उपाध्यक्ष	सचिव

विचार दृष्टि

राष्ट्रीय चेतना की वैचारिक त्रैमासिकी

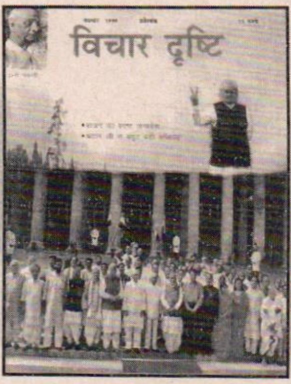

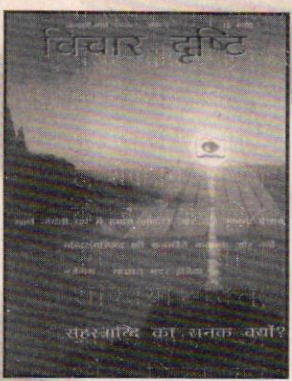

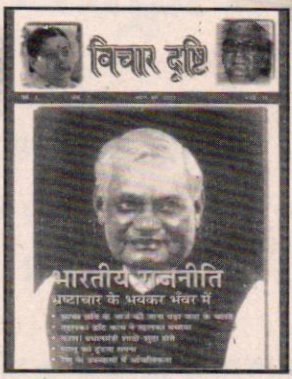

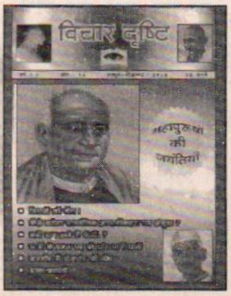

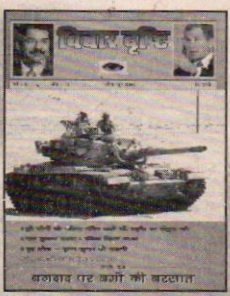

त्रिमूर्ति ज्वैलर्स

बाईपास रोड़, चास (बोकारो)

दूरभाष : 65765, फैक्स : 65123

त्रिमूर्ति अलंकार

त्रिमूर्ति पैलेस (रूपक सिनेमा के पूरब)

बाकरगंज, पटना-800004

दूरभाष : 2662837

आधुनिक आभूषणों के निर्माता, नए डिजाइन, शुद्ध सोने-चांदी के तथा हीरे के गहनों का प्रमुख प्रतिष्ठान

परीक्षा प्रार्थनीय

सुरेश एवं राजीव

Solutions Point

for

SOLUTION IN :

- Hardware
- Software
- Networking Support
- Graphic Designer
- Web Designing
- Composing
- Scanning
- Art Work

SOLUTIONS POINT
Making IT easy

AMC, Maintenance of IBM, COMPAQ, H.P., Zenith and can be had assembled Pc's

Contact :

Head Office : U-207, Shakarpur, Vikas Marg, Delhi-92
Ph. : 011-22530652
Mobile : 9811281443, 9811279351, 9868073101
Branch Office : 102, Sec. 1, Vaishali, Ghaziabad, U.P.
E-mail : Solutionspoint@hotmail.com

HURRY UP

New Books New Syllabus
Then Why Struck to old

JOIN STUDY POINT

Contact For Tuition

Up to 7th Class-All Subjects
8th to 10th Class-Science Subjects
Phone : 011-22530653
Mobile : 9811281443

वर्ष : 5 अंक : 17 अक्टूबर–दिसंबर 2003 RNI REG. NO. : DEL HIN/1999/791

पटना हड्डी एवं रीढ़ रोग अस्पताल प्रा.लि.
Patna Bone & Spine Hospital Pvt. Ltd.

A Centre Dedicated to Advanced Care of Bone & Spine Surgery Only

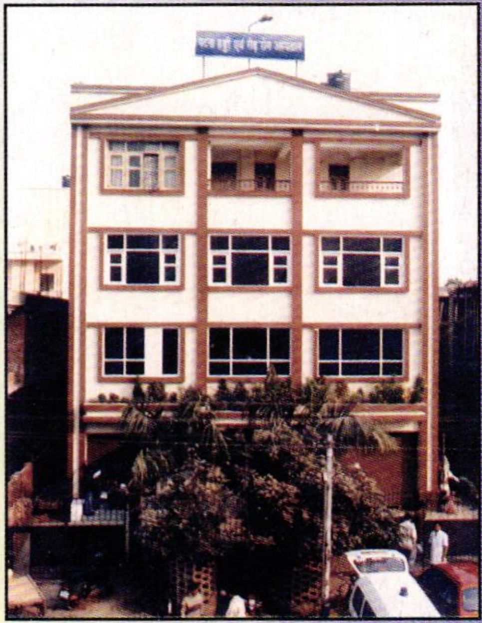

1. टूटी हड्डियों को कम्प्यूट्रीकृत एक्सरे (IIT) के द्वारा बैठाने की सुविधा।
2. हाथ/पाँव की सभी हड्डियों के टूट बिना प्लास्टर, बिना ज्यादा चीर-फाड़ के क्लोज्ड इन्टर लौकिंग नेल (Close Interlocking Nail) द्वारा इलाज, ताकि मरीज तुरन्त चल सके।
3. छोटे छिद्र द्वारा (Arthroscopic) घुटने के अन्दर की खराबियों का इलाज।
4. जन्मजात, पोलियो, चोट के बाद टेढ़ी-मेढ़ी हड्डियों का इलिजारोब (Ilizarov) तकनीक द्वारा इलाज।
5. रीढ़ (गर्दन समेत) की हड्डियों एवं नस का ऑपरेशन, छोटे छिद्र (Microdiscectomy) द्वारा डिस्क प्रोलैप्स का ऑपरेशन।
6. रीढ़ की चोट की सम्पूर्ण एवं विशिष्ट चिकित्सा।
7. पूर्ण जोड़ प्रत्यावर्तन (Total Joint Replacement)।
8. वास्कुलर, न्यूरो, प्लास्टिक, फेसियोमैक्जिलरी, माइक्रो सर्जरी के विशेषज्ञों द्वारा एक दल के रूप में बहुअंगीय (Polytrauma) कठिन चोटों का इलाज।
9. हृदय, न्यूरो, छाती के औषधि विशेषज्ञों की देख-रेख।

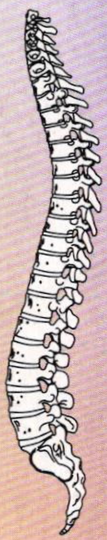

Dr. Vishvendra Kumar Sinha
M.B.B.S. (Pat.), D. orth. (Pat.) M.S. (orth.), FICS (USA) Ph.D. (orth.)

H-3, Doctors Colony, Kankarbagh, PATNA-800 020 Ph. : 2361180
एच.-3, डॉक्टर्स कॉलोनी, कंकड़बाग, पटना-800 020. फोन : 2361180

प्रकाशक, मुद्रक व स्वामी सिद्धेश्वर द्वारा 'दृष्टि', यू-207, विकास मार्ग, शकरपुर, दिल्ली-92 से प्रकाशित एवं प्रोलिफिक इनकारपोरेटिड, एक्स-47, ओखला फेस-2, नई दिल्ली-110020 से मुद्रित। संपादक-सिद्धेश्वर